उपभोक्ता शिक्षा मोनोग्राफ सीरीज–1

चिकित्सा लापरवाही
पर
निर्णय–विधि

राकेश गुप्ता और वन्दना सिंह

भारतीय लोक प्रशासन संस्थान, नई दिल्ली
के सहयोग से
उपभोक्ता मामले विभाग, भारत सरकार

चिकित्सा लापरवाही

पर

निर्णय–विधि

राकेश गुप्ता

एसोसिएट प्रोफेसर

भारतीय लोक प्रशासन संस्थान

नई दिल्ली

वन्दना सिंह

अनुसंधान अधिकारी

उपभोक्ता संरक्षण और कल्याण पर परामर्शी परियोजना

भारतीय लोक प्रशासन संस्थान, नई दिल्ली

भारतीय लोक प्रशासन संस्थान

नई दिल्ली

उपभोक्ता शिक्षा निर्णय–विधि

संपादक
एस.एस. सिंह
राकेश गुप्ता
सपना चड्ढ़ा
© भारतीय लोक प्रशासन संस्थान, नई दिल्ली 2005

मूल्य 55/– रुपये

उपभोक्ता संरक्षण और उपभोक्ता कल्याण में अनुसंधान संस्थानों/विश्वविद्यालयों/कॉलेजों आदि के शामिल करने को बाढ़ावा देने वाले परामर्शी कार्य के तत्वावधान में प्रकाशित।

प्रायोजक : उपभोक्ता मामले विभाग, उपभोक्ता मामले, खाद्य एवं सार्वजनिक वितरण मंत्रालय, भारत सरकार।

भारतीय लोक प्रशासन संस्थान, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित और न्यू यूनाइटेड प्रोसैस, ए–26, नारायणा औद्योगिक क्षेत्र, फेज–II, नई दिल्ली, फोन : 25709125 में मुद्रित।

प्रस्तावना

यह कहावत सर्वमान्य है कि 'उपभोक्ता राजा होता है'। परन्तु आधुनिक प्रौद्योगिकी, उन उपभोक्ता सामान और सेवाओं के घातीय प्रचुरोद्भव के युग में प्रवेश कर चुकी है जिनका विपणन, अति विशाल प्रचार अभियानों द्वारा किया जाता है। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि उपभोक्ता अब पीछे आ गया है। निस्संदेह इस बात की आवश्यकता है कि उसे उसी स्थान पर लाया जाए जहां वह पहले था। आपके हाथों में यह निर्णय–विधि सीरिज, इस दिशा में एक प्रयास है।

जिस काम को आरम्भ करने का हमें सौभाग्य मिला है, वह उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के अंतर्गत डाक्टरी लापरवाही पर उच्चतम न्यायालयों और राष्ट्रीय आयोग द्वारा निर्णीत निदर्शक वादों के सारांश को संकलित करना है। समय की कमी के कारण पहला संस्करण 2000–2005 की अवधि तक ही सीमित रखा गया है।

हम आशा करते हैं कि यह पुस्तक इस दिशा में आवश्यक संवेदनशीलता सृजित करेगी और साथ ही साथ उपभोक्ताओं को उनके अधिकार जानने में भी मदद करेगी। यह भी आशा की जाती है कि यह निर्णय–विधि सीरीज, बैंच, बार, उपभोक्ता से संबंधित संगठनों, अनुसंधानकर्ताओं, छात्रों और आम जनता के लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

हम वास्तव में, उपभोक्ता मामले विभाग के, विशेष रूप से संस्थान में उनके द्वारा दर्शाए गए विश्वास के लिए श्री एल. मान सिंह, सचिव के और उनके द्वारा प्रदान किए गए मार्गदर्शन एवं प्रोत्साहन के लिए श्रीमती अलका सिरोही, अपर सचिव के आभारी हैं। हम, उनके सक्रिय समर्थन, सहायता और सलाह के लिए डॉ. (श्रीमती़ जयश्री गुप्ता, संयुक्त सचिव का भी धन्यवाद करते हैं। हम विभाग के अन्य पदाधिकारियों, विशेष रूप से श्री जी.एन. श्री कुमारन, उप सचिव (सी.डब्ल्यू. एफ.) और श्री के.वी.एस. भीमाराव, उप सचिव (वित्त) तथा मूल्यांकन समिति एवं मानीटरिंग समिति के अन्य सदस्यों का भी धन्यवाद करते हैं।

हम, गहन रुचि, प्रोत्साहन और सृजनात्मक सुझावों के लिए आई.आई.पी.ए. के प्रबंधन, विशेष रूप से महामहिम श्री टी.एन. चतुर्वेदी, कर्नाटक के राज्यपाल और अध्यक्ष, कार्यकारी परिषद, श्री के. मालास्वामी, संसद सदस्य और अध्यक्ष, स्थायी समिति तथा श्री बी.सी. माथुर, अवैतनिक

कोषाध्यक्ष, आई.आई.पी.ए. का हार्दिक धन्यवाद करते हैं। डॉ. पी.एल. संजीव रेड्डी, निदेशक, आई. आई.पी.ए. का हमेशा समर्थन और सहायता प्राप्त होता रहा है। हम वास्तव में उनका धन्यवाद करते हैं। हम श्री सुनील दत्त, प्रकाशन अधिकारी का भी धन्यवाद करते हैं, जिन्होंने सीरीज के प्रकाशन में गहरी रुचि ली।

समाप्त करने से पहले, हम प्रो. डॉ.एस.एस. सिंह का आभार व्यक्त करना चाहते हैं जिनकी रुचि और निरंतर समर्थन के बिना यह संस्करण इस रूप में नहीं लाया जा सकता था। हम, उनके द्वारा किए गए महान प्रयास के लिए आई.आई.पी.ए. की सहायक प्रोफेसर सुश्री सपना चढ्डा, आई. आई.पी.ए. के, पुस्काल्यध्यक्ष श्री अभिनव वालिया के और अन्य सचिवालयी स्टाफ के प्रति भी आभार व्यक्त करते हैं।

राकेश गुप्ता

वन्दना सिंह

विषय–वस्तु

पृष्ठ संख्या

प्रस्तावना

न्यायिक निर्णयः विविध कृत्य जिन्हें लापरवाही माना जाता है

1 – दुर्घटना

(क) प्रवत कुमार मुखर्जी बनाम रूबी जनरल अस्पताल और अन्य,
III (2005) सी.पी.जे. 36 (राष्ट्रीय आयोग)

2 – स्त्री रोग विशेषज्ञ और प्रसूति विशेषज्ञ

(क) वर्धा एस. नायर बनाम डॉ. रेमानी एन. रंजन और अन्य,
III (2005) सी.पी.जे. 36 (राष्ट्रीय आयोग)

(ख) मोहनन बनाम प्रभा जी. नायर और अन्य,
I (2004) सी.पी.जे. 21 (उच्चतम न्यायालय)

(ग) डॉ. कालीगौडेन बनाम एन. थांगामुथु,
III (2004) सी.पी.जे. 29 (राष्ट्रीय आयोग)

(घ) माइनर इबे बनाम जी.ई.एम. अस्पताल और अन्य,
III (2004) सी.पी.जे. 37 (राष्ट्रीय आयोग)

(ड.) विजय. एच. मंकर बनाम डॉ. (श्रीमती) मंगला बंसोड और अन्य,
I (2000) सी.पी.जे. 37 (राष्ट्रीय आयोग)

(च) डॉ. श्रीमती टी. वाणी देवी और अन्य बनाम टुगुटला लक्ष्मी नारासेआह नारासा रेड्डी,
I (2000) सी.पी.जे. 180 (राष्ट्रीय आयोग)

3. अस्पताल और अन्य

(क) मीनाक्षी मिशन अस्पताल एवं अनुसंधान केन्द्र और अन्य बनाम समुराज और अन्य,
I (2005) सी.पी.जे. 33 (राष्ट्रीय आयोग)

(ख) मौ. सुलेमान अंसारी (डी.एम.एस.) बनाम शंकर भंडारी,
III (2005) सी.पी.जे. I (उच्चतम न्यायालय)

(ग) हेमिना हितेश कोटक बनाम डॉ. अशोक नाथवानी,
II (2004) सी.पी.जे. II (उच्चतम न्यायालय)

(घ) शैलेश मुंजाल बनाम अ.भा.आ.संस्थान,
III (2004) सी.पी.जे. 93 (उच्चतम न्यायालय)

(ड.) श्रीमती सविता गर्ग बनाम निदेशक, राष्ट्रीय हृदय संस्थान,
IV (2004) सी.पी.जे. 21 (उच्चतम न्यायालय)

(च) डॉ. सी.सी. चौबाल बनाम पंकज श्रीवास्तव,
IV (2004) सी.पी.जे III (राष्ट्रीय आयोग)

(छ) सुश्रुशा सिटीजन सहकारी अस्पताल और अन्य बनाम मुरलीधर एकनाथ, मेसोर,
II (2003) सी.पी.जे. 127 (राष्ट्रीय आयोग)

(ज) बाम्बे अस्पताल एवं मेडिकल अनुसंधान केन्द्र बनाम कृष्णा बिहारी एम. अग्रवाल,
IV (2003) सी.पी.जे. 61 (उच्चतम न्यायालय)

(झ) डॉ. जे.जे. मरचैंट और अन्य बनाम श्रीनाथ चतुर्वेदी,
III (2002) सी.पी.जे. 8 (उच्चतम न्यायालय)

(ञ) भजन लाल गुप्ता और अन्य बनाम मूलचंद खैराती राम अस्पताल और अन्य,
I (2001) सी.पी.जे. 31 (राष्ट्रीय आयोग)

(ट) हरियाणा राज्य सरकार और अन्य बनाम श्रीमती संतरा,
I (2000) सी.पी.जे. 53 (उच्चतम न्यायालय)

3 – नर्स

(क) सी.डी.आर. अस्पताल और अन्य बनाम श्रीमती निर्मला मन्सेह और अन्य,
I (2004) सी.पी.जे. 70 (उच्चतम न्यायालय)

4 – नेत्र रोग विशेषज्ञ

(क) इन्द्रजीत सिंह बनाम डॉ. जगदीप सिंह,

III (2004) सी.पी.जे. 20 (राष्ट्रीय आयोग)

(ख) डॉ. वी. पाहवा बनाम सुरिन्द्र मोहन घोष,

IV (2004) सी.पी.जे. 1 (राष्ट्रीय आयोग)

5 – चिकित्सक

(क) डॉ. काम इन्दर नाथ शर्मा और अन्य बनाम सतीश कुमार और अन्य,

II (2005) सी.पी.जे. 75 (राष्ट्रीय आयोग)

(ख) डॉ. राम धुनी साहु बनाम दुलारी बाई,

III (2005) सी.पी.जे. 35 (राष्ट्रीय आयोग)

(ग) शाम लाल और अन्य बनाम श्रीमती सरोज रानी और अन्य,

I (2003) सी.पी.जे. 47 (राष्ट्रीय आयोग)

(घ) सुश्री शेफाली भार्गव बनाम इन्द्रप्रस्थ अपोलो अस्पताल और अन्य,

I (2003) सी.पी.जे. 216 (राष्ट्रीय आयोग)

(ड.) डॉ. के.जी. कृष्णन बनाम प्रवीण कुमार (अवयस्क),

II (2003) सी.पी.जे. 125 (राष्ट्रीय आयोग)

(च) सिद्धार्थ बाटा बनाम डॉ. मेजर जनरल एम.एल. मागोत्रा,

IV (2003) 182 (खंड पीठ)

(छ) पी.जी.आई. चंडीगढ़ बनाम जसपाल सिंह और अन्य,

III (2000) सी.पी.जे. 32 (राष्ट्रीय आयोग)

6 – शल्य चिकित्सक

(क) डॉ. रबि नारायण साहु बनाम डॉ. बी. जयराम पात्रा और अन्य,

I (2004) सी.पी.जे. 2 (राष्ट्रीय आयोग)

(ख) सुयश अस्पताल प्राइवेट लिमिटेड और अन्य बनाम प्रसन्ना कुमार ओझा,
II (2003) सी.पी.जे. 150 (राष्ट्रीय आयोग)

(ग) श्रीमती शान्ता मोहन लक्ष्मी बनाम डॉ. सी.वी. नत्नम और अन्य,
IV (2003) सी.पी.जे. 12 (राष्ट्रीय आयोग)

(घ) शैलेश शाह बनाम अफरैम जयानन्द राठौड,
(2003) 5 सी.एल.डी. 440 (एन.सी.डी.आर.सी.)

(ड.) डी.डी. तिरखा बनाम डॉ. देवेन्दर महन्त और अन्य,
II (2002) सी.पी.जे. 116 (राष्ट्रीय आयोग)

न्यायिक निर्णयः विविध कृत्य जिन्हें लापरवाही नहीं माना जाता है

1 – निश्चेतक

(क) चरण सिंह बनाम हीलिंग टच अस्पताल और अन्य,
III (2003) सी.पी.जे. 62 (राष्ट्रीय आयोग)

2 – हृदयरोग विशेषज्ञ

(क) श्रीमती शान्ताबेन मुल्जीभाई पटेल और अन्य बनाम बीच कैन्डी अस्पताल एवं अनुसंधान केन्द्र और अन्य,
I (2005) सी.पी.जे. 10 (राष्ट्रीय आयोग)

3 – एलोपैथिक डाक्टरों के अलावा अन्य डाक्टर

(क) के. महाबाला भट्ट और अन्य बनाम के. कृष्णा,
II (2002) सी.पी.जे. 127 (राष्ट्रीय आयोग)

4 – स्त्री रोग विशेषज्ञ और प्रसूति विशेषज्ञ

(क) बाला साहेब गंगा राम गोवडे बनाम रविन्द्र कुलकर्णी,
I (2005) सी.पी.जे. (राष्ट्रीय आयोग)

(ख) एम. श्रीनिवास बनाम श्रीमती (डॉ.) रमा तुलसी और अन्य,

I (2005) सी.पी.जे. 64 (राष्ट्रीय आयोग)

(ग) पी. वेंकटा लक्ष्मी बनाम डॉ. वाई. शान्ता देवी,

II (2004) सी.पी.जे. 14 (राष्ट्रीय आयोग)

(घ) श्रीमती शिखा बनाम डॉ. अशोक जिन्दल,

I (2003) सी.पी.जे. 239 (राष्ट्रीय आयोग)

(ड.) विनीता अशोक बनाम लक्ष्मी अस्पताल और अन्य,

I (2002) सी.पी.जे. 4 (उच्चतम न्यायालय)

(च) श्रीमती अरूण त्रिखा बनाम सेहरा मेडिकल सेन्टर,

I (2002) सी.पी.जे. 75 (राष्ट्रीय आयोग)

(छ) राजीन्द्र सिंह नन्दाल बनाम अनमोल अस्पताल और अन्य,

III (2002) सी.पी.जे. 324 (राष्ट्रीय आयोग)

(ज) श्रीमती पूनम मंगला बनाम प्रेम नाथ अस्पताल,

III (2002) सी.पी.जे. 353 (राष्ट्रीय आयोग)

5 – अस्पताल और अन्य

(क) जगदीश्वर सिंह बनाम जसलोक अस्पताल एवं अनुसंधान केन्द्र और अन्य,

I (2005) सी.पी.जे. 60 (राष्ट्रीय आयोग)

(ख) पाशु मूर्ति नारायण और अन्य बनाम अपोलो अस्पताल इंटरप्राइजेज लिमिटेड और अन्य,

IV (2004) सी.पी.जे. 19 (राष्ट्रीय आयोग)

(ग) श्री एक्स बनाम अस्पताल जैड,

I (2003) सी.पी.जे. 14 (उच्चतम न्यायालय)

(घ) डॉ. देवेन्द्र मदान और अन्य बनाम शकुन्तला देवी,

I (2003) सी.पी.जे. 57 (राष्ट्रीय आयोग)

(ड.) जनक कुमारी बनाम डॉ. बलविन्दर कौर नागपाल और अन्य,
II (2003) सी.पी.जे. 22 (राष्ट्रीय आयोग)

(च) सुधीन्द्र मेडिकल मिशन अस्पताल और अन्य बनाम केन्नन वी.आर.,
II (2003) सी.पी.जे. 146 (राष्ट्रीय आयोग)

6 – नेत्ररोग विशेषज्ञ

(क) के.एस. भाटिया बनाम जीवन अस्पताल और अन्य,
IV (2003) सी.पी.जे. 9 (राष्ट्रीय आयोग)

7 – चिकित्सक

(क) एल. सुनील रेड्डी और अन्य बनाम रोहिणी अस्पताल और अन्य,
II (2005) सी.पी.जे. 58 (राष्ट्रीय आयोग)

(ख) भारत पैथोलॉजी लेबोरेटरी बनाम मांगी लाल व्यास,
III (2003) सी.पी.जे. 94 (राष्ट्रीय आयोग)

(ग) श्रीमती ओ. आएशा बी. और अन्य बनाम प्रो. जे.आर. डेनियल,
III (2003) सी.पी.जे. 178 (राष्ट्रीय आयोग)

(घ) दिनेश कौशल और अन्य बनाम डॉ. के.के. खुरांड,
III (2002) सी.पी.जे. 297 (राष्ट्रीय आयोग)

8 – शल्य चिकित्सक

(क) लक्ष्मणन बनाम आर. श्रीकान्तन एम.एस. और अन्य,
I (2004) सी.पी.जे. 26 (राष्ट्रीय आयोग)

(ख) माम चन्द बनाम मंगत अस्पताल का डॉ. जी.एस. मंगत
I (2004) सी.पी.जे. 79 (राष्ट्रीय आयोग)

(ग) हरकंवलजीत सिंह सैनी बनाम गुरबक्श सिंह और अन्य,
I (2003) सी.पी.जे. 153 (राष्ट्रीय आयोग)

(घ) आर.सी. शर्मा बनाम जागे राम,

I (2003) सी.पी.जे. 248 (राष्ट्रीय आयोग)

(ड.) एस.के. शर्मा बनाम डॉ. प्रफुल्ल बी. देसाई,

II (2003) सी.पी.जे. 96 (राष्ट्रीय आयोग)

(च) श्रीमती रेखा गुप्ता बनाम बम्बई अस्पताल ट्रस्ट और अन्य,

II (2003) सी.पी.जे. 160 (राष्ट्रीय आयोग)

(छ) सुश्री नेहा कुमारी और अन्य बनाम अपोला अस्पताल और अन्य,

III (2003) सी.पी.जे. 145 (राष्ट्रीय आयोग)

(ज) प्रफुल्ल कुमार दास बनाम अपोलो अस्पताल और अन्य,

II (2002) सी.पी.जे. 106 (राष्ट्रीय आयोग)

(झ) एस.के. अय्यंगर बनाम बम्बई अस्पताल एवं चिकित्सा अनुसंधान केन्द्र और अन्य,

I (2001) सी.पी.जे. 23 (राष्ट्रीय आयोग)

(ञ) श्रीमती कुसुम शर्मा और अन्य बनाम बत्रा असपताल एवं चिकित्सा अनुसंधान केन्द्र,

III (2000) सी.पी.जे. 18 (राष्ट्रीय आयोग)

फौजदारी कानून के अंतर्गत डाक्टरी लापरवाही

(क) जेकब मैथ्यू बनाम पंजाब राज्य सरकार और अन्य

(2005) 6 एस.सी.सी.1

इस्तेमाल किए गए संकेताक्षरों की सूची

ए आई आई एम एस	अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान
सी पी जे	उपभोक्ता संरक्षण निर्णय
ई सी जी	इलेक्ट्रो कार्डियो ग्राफ
एच सी	उच्च न्यायालय
आई सी यू	इंटांसिव केयर यूनिट
आई सी सी यू	इंटांसिव कार्डियक केयर यूनिट
एस सी	उच्चतम न्यायालय
एस सी सी	उच्चतम न्यायालय के मामले

डाक्टरी लापरवाही की संकल्पना

लापरवाही की कोई दूसरी संक्षिप्त परिभाषा किए जाने की गुंजाइश नहीं है। लापरवाही के अनेक अर्थ दिए जा सकते हैं। पहली बात यह है कि लापरवाही, दिमाग की असावधानी की दशा का संकेत करती है जिसके परिणामस्वरूप अविचारीपन हो सकता है। किसी डाक्टर द्वारा मरीज को दवाइयों के साइड इफैक्ट के खतरे बताए बिना और सिफारिश किए गए टैस्ट किए बिना, खतरनाक साइड इफैक्ट वाली दवाइयां लिखने से और मरीज को उन साइड इफैक्ट के खतरे में डालने से वह डाक्टर लापरवाही का दोषी होता है, चाहे वह साइड इफैक्ट हो रहे हों या नहीं। लापरवाही का यह अर्थ आपराधिक जिम्मेदारी का आधार है। दूसरी बात यह है कि लापरवाही, सावधानी बरतने की किसी ड्यूटी के संदर्भ के बिना, अर्थात लापरवाही से उसे जोड़े बिना असावधानीपूर्वक किया गया आचरण होता है। इस प्रकार के असावधानीपूर्ण आचरण का सर्वोत्तम उदाहरण सामूहिक लापरवाही के मामलों में पाया जाता है। किसी नीम–हकीम की देखरेख में इलाज करा रहे मरीज से इस प्रकार का असावधानीपूर्ण आचरण प्रदर्शित होता है। अंतिम बात यह है कि सावधानी बरतने के कानूनी कर्त्तव्य का उल्लंघन करना, लापरवाही मानी जाती है। *लोचगेली लुइस और कोयला कम्पनी बनाम मूल्लन* के मामले में लार्ड राइट ने कहा कि "लापरवाही का अर्थ लापरवाही वाला या असावधानीपूर्ण आचरण से कुछ अधिक होता है, चाहे वह किसी काम के करने में हो या चूक करने में। यह तुरन्त ऐसी ड्यूटी, उल्लंघन और क्षति का संकेत करती है जिससे किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा नुकसान उठाया गया हो जिसके प्रति सावधानी बरतने वाले व्यक्ति की ड्यूटी हो। लापरवाही के आधुनिक टोर्ट के अनिवार्य संघटक निम्नलिखित हैं:

1. शिकायतकर्ता के प्रति प्रतिवादी की सावधानी बरतने की ड्यूटी की मौजूदगी,
2. कानून द्वारा विनिर्धारित किया गया सावधानी का स्तर प्राप्त करने में विफलता और उससे ड्यूटी का उल्लंघन करना; और
3. शिकायतकर्ता द्वारा उठाया गया वह नुकसान जो ड्यूटी के उल्लंघन के साथ आकस्मिक रूप से जुड़ा हो और कानून द्वारा जिसे मान्यता दी गई हो।

लापरवाही को परिभाषित करने के बाद अब सवाल यह उठता है कि व्यावसायिक लापरवाही क्या है? संक्षेप में, यह व्यवसायविद् की ड्यूटी और उचित देखभाल की कमी के कारण उसके द्वारा की गई देखभाल या प्रदान की गई सेवा के दौरान हुई कानूनी क्षति के बारे में जानकारी है। इस स्थिति, कि प्रतिवादी, संबंधित परिस्थितियों में उचित ढंग से व्यवहार करने में विफल रहना चाहिए, का अर्थ है कि किसी दुर्घटना के बाद आपातकालीन प्राथमिक चिकित्सा प्रदान करने वाले राहगीर के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह एक योग्यताप्राप्त सर्जन की दक्षता दिखाए और उससे यह अपेक्षा नहीं की जा सकती कि वह पारिश्रमिक के लिए काम करने वाले किसी व्यवसायविद् की दक्षता दिखाए। तथापि, जहां कोई व्यवसायविद् काम करता है या किसी ऐसे लेनदेन के काम में लगा हुआ है जिसमें वह अपने आपको व्यवसायिक दक्षता वाला मानता है तो कानून की उससे यह अपेक्षा होती है कि वह उस व्यवसाय या व्यापार के कर्त्तव्यों के उचित निर्वहन के साथ जुड़ी सक्षमता की मात्रा दिखाए और यदि उसमें उस क्षमता की कमी है और इसके परिणामस्वरूप वह किसी को क्षति पहुंचाता है तो वह उचित ढंग से व्यवहार नहीं कर रहा है। इस प्रकार, ड्यूटी शब्द आमतौर पर उस स्तर या आम सिद्धान्त से संबंधित होता है जिससे, विशेष परिस्थितियों में, वादी के प्रति प्रतिवादी के दायित्व को नापा जाता है।

चिकित्सा संबंधी लापरवाही, चिकित्सा व्यवसाय से जुड़ी होती है और व्यवसाय या व्यावसायिक कर्त्तव्यों के निर्वहन में संबंधित सेवा के किसी सदस्य की तरफ से किए जाने वाले किसी अनियमित आचरण का परिणाम होती है। चिकित्सा संबंधी लापरवाही को "डाक्टर या सर्जन की तरफ से की जाने वाली खराब या अदक्षतापूर्ण प्रैक्टिस जिसके परिणामस्वरूप मरीज को क्षति हो या सावधानी, दक्षता और अध्यवसाय की अपेक्षित मात्रा का इस्तेमाल करने में डाक्टर की विफलता" के रूप में परिभाषित किया गया है।

सभी चिकित्सा व्यवसायियों से यह अपेक्षा करना अवास्तविक होगा कि वे, अपने व्यवसाय में सर्वाधिक दक्षताप्राप्त और काबिल डाक्टरों के पास उपलब्ध सतर्कता के बराबर स्तर उपलब्ध कराएं। लापरवाही की कानूनी परिभाषा वह स्तर निर्धारित करने की इजाजत देती है जो उचित दक्षता वाले किसी समझदार व्यक्ति के पास मौजूदा परिस्थितियों में उपयुक्त हों। ये स्तर, दवाई में होने वाले परिवर्तनों के साथ, बदल सकते हैं। परन्तु कानूनी परिभाषा एक टिके रहने वाले कार्यचालन सिद्धान्त के रूप में कायम रहती है। ऐसी स्थिति अंशतः इसलिए है क्योंकि व्यावसायिक

लापरवाही किसी विशेष प्रकार के आचरण से संबंधित नहीं होती जिसकी अपेक्षा किसी व्यावसायिक व्यक्ति से की जाती है बल्कि इसकी जड़ समाज के सभी सदस्यों के एक–दूसरे के प्रति कानूनी दायित्व में होती है।

जब कोई मरीज इलाज के लिए किसी डाक्टर के पास आता है और डाक्टर उसे स्वीकार कर लेता है तो एक अन्तर्निहित संविदा लागू हो जाता है और देखभाल की ड्यूटी उत्पन्न हो जाती है। चिकित्सा संबंधी लापरवाही, किसी डाक्टर द्वारा अपने मरीज के प्रति ऐसी उचित सावधानी और दक्षता बरतने की ड्यूटी का उल्लंघन है जिसके परिणामस्वरूप मरीज को कोई शारीरिक या मानसिक क्षति हो और इसके बदले वित्तीय हानि हो। इस प्रकार, यह कहा जा सकता है कि चिकित्सा संबंधी लापरवाही का अर्थ है – डाक्टर द्वारा उसी प्रकार का काम करने वाले किसी सामान्य और उचित ढंग से सक्षम व्यक्ति द्वारा अपनाए जा रहे प्रचलित चिकित्सा मानकों के अनुसार काम करने में विफल रहना।

जब कोई मरीज किसी डाक्टर से परामर्श लेता है तो डाक्टर के मरीज के प्रति कुछ कर्त्तव्य हो जाते हैं, जैसे इस बात पर निर्णय लेने में सतर्कता बरतने की ड्यूटी कि क्या यह केस लिया जाए या नहीं, यह निर्णय लेने में सतर्कता बरतने की ड्यूटी कि क्या उपचार दिया जाए और वह उपचार देने में सतर्कता बरतने की ड्यूटी। इन कर्त्तव्यों में से किसी कर्त्तव्य का उल्लंघन होने से मरीज को यह अधिकार प्राप्त हो जाता है कि वह लापरवाही के लिए कार्रवाई कर सके। दूसरे शब्दों में, हम यह कह सकते हैं कि व्यथित व्यक्ति को न्यायालय की संतुष्टि पर यह सिद्ध करने की स्थिति में होना चाहिए किः

1. उसके प्रति डाक्टर की यह ड्यूटी थी कि वह व्यावसायिक आचरण के एक विशेष स्तर की सावधानी बरते;
2. डाक्टर ने उस ड्यूटी का उल्लंघन किया;
3. मरीज को वास्तविक क्षति पहुंची; और
4. डाक्टर का आचरण, क्षति का प्रत्यक्ष और निकटस्थ कारण था।

चिकित्सा सेवाओं में उपभोक्ता संरक्षण

हाल के कुछ समय तक, डाक्टरी लापरवाही से व्यथित मरीजों के पास अपनी शिकायतों का निवारण कराने के लिए कोई प्रभावी न्यायनिर्णयन निकाय नहीं था। सन् 1964 में यथा संशोधित भारतीय आयुर्विज्ञान परिषद् अधनियिम, 1956 में यह व्यवस्था की गई है कि परिषद् द्वारा बनाए गए विनियमों में ऐसे आचरणों का उल्लेख किया जाए जिनका उल्लंघन कदाचार होगा। इस प्रकार उल्लिखित व्यावसायिक कदाचार से, गलती करने वाले डाक्टर को निलंबन या कारावास की सज़ा भी हो सकती है।

इस व्यवस्था का अपेक्षित निरोधक प्रभाव नहीं होता, क्योंकि परिषद् के सदस्य मरीजों की तुलना में अपने सहयोगियों के प्रति नरम रुख अपनाने के आदी हैं। दूसरी बात यह है कि परिषद् केवल राज्यों के मुख्यालयों में ही उपलब्ध है। इस प्रकार, अधिकांश पार्टियां मुश्किल से ही पहुंच पाती हैं। इसके अलावा, परिषद् को यह शक्ति प्राप्त नहीं है कि वह मरीजों को पहुंची क्षति के लिए मरीजों को मुआवजा देने का निर्णय दे सके।

सिविल और फौजदारी कानून में, निश्चित रूप से, व्यथित मरीजों के लिए उपायों के उपबंध हैं। परन्तु फौजदारी कानून का इस्तेमाल अधिकतर मृत्यु के मामले में ही किया जाता है क्योंकि यदि लापरवाही के परिणामस्वरूप मृत्यु के अलावा शारीरिक चोट लगती है तो आरोप या तो सामान्य चोट का होगा या गंभीर चोट का। जिसे कानून में आपराधिक लापरवाही कहा जाता है, वह अधिकांशतः डिग्री का मामला होता है। इसकी कोई संक्षिप्त परिभाषा नहीं दी जा सकती। यह साबित करना कि आपराधिक लापरवाही मौजूद है या नहीं, किसी मरीचिका का पीछा करने के समान है। इसके अलावा, भारतीय न्यायालय, उपचारों के चयन और अनुप्रयोग में निर्णय लेने में गलती मात्र के परिणामस्वरूप हुई मरीज की मृत्यु के लिए तथा जन निर्णय लेने में हुई गलती के परिणामस्वरूप मृत्यु हुई हो या अनजाने में मृत्यु हुई हो, अर्हताप्राप्त चिकित्सकों को आपराधिक रूप से जिम्मेदार न ठहराने में बहुत सावधान रहे हैं।

डाक्टरी लापरवाही और व्यथित व्यक्ति को स्थायी हर्जाना देने से संबंधित मामलों पर निर्णय देने के लिए सिविल न्यायालयों के क्षेत्राधिकार के संबंध में कोई विवाद नहीं रहा है। ऐसे बहुत से उदाहरण हैं जब किसी सिविल न्यायालय ने, साबित हुई डाक्टरी लापरवाही के मामलों में हर्जाना प्रदान किया है।

कानूनी स्थिति यह है कि हर प्रकार की डाक्टरी लापरवाही द्वारा व्यथित कोई व्यक्ति एक नियमित सिविल मुकदमा दायर करके सिविल न्यायालय में जा सकता है और आवश्यक राहत का दावा कर सकता है। तथापि, सिविल कानून के अंतर्गत उपलब्ध इस उपाय के बावजूद, डाक्टरी लापरवाही के शिकार बहुत कम लोग मुआवजे या अन्य उपचारों का दावा करने के लिए सिविल न्यायालयों में जाते हैं। डाक्टरी लापरवाही के शिकार लोगों को सिविल न्यायालयों में जाने से अनेक कारक हतोत्साहित करते हैं। दावा की गई मुआवजे की पूरी धनराशि पर कोर्ट फीस का भुगतान करने की आवश्यकता मुख्य बाधा है। इस कारण, गरीब, गरीबी के मारे और अशिक्षित पीड़ित व्यक्ति, सिविल न्यायालय में नहीं जा सकते। गरीबों के मुकदमें दायर करने के लिए सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 33 के अंतर्गत उपबंधों का मौजूद होना भी, उनमें अनेक तकनीकी बातें होने के कारण, कुछ अधिक सहायक नहीं है। किसी मामले को तय करने के लिए कोई निश्चित समय–सीमा न होना, लापरवाही साबित करने की कठोर प्रक्रिया, जिसमें साक्ष्य पेश करना आदि शामिल है, इस सिविल उपचार का लाभ उठाने में बाधा बनते हैं। इसके परिणामस्वरूप स्थिति यह है कि डाक्टर कदाचार के मामले में व्यावहारिक रूप से अपराधमुक्त होने के लिए आश्वस्त हैं।

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 के अंतर्गत डाक्टरी लापरवाही और मरीजों के अधिकारों का प्रवर्तन

जिन कारकों की ऊपर चर्चा की गई है, उनका उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 में ध्यान रखा गया है, जिसका उद्देश्य अन्य बातों के साथ–साथ, उपभोक्ता विवादों का शीघ्र और सरल निवारण है। तेज प्रक्रिया, कोर्ट फीस के न होने या नाममात्र का होने और पर्याप्त मुआवजे के जरिए, न्याय प्रणाली तक एक विस्तृत पहुंच उपलब्ध करा कर इस अधिनियम ने न्याय प्रणाली में क्रान्ति ला दी है और इसे पीड़ितों के अनुकूल बना दिया है। अपने अधिकारों के बारे में जन

जागरूकता बढ़ाने के साथ, उपभोक्ताओं के रूप में मरीज अब गुणवत्ता वाली स्वास्थ्य सेवा के हिसाब से अपने धन का मूल्य प्राप्त करने पर जोर देते हैं।

यहां इस बात का उल्लेख करना उपयुक्त होगा कि जबकि उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम सभी सामानों और सेवाओं पर लागू कर दिया गया है, दो प्रकार की सेवाएं विशेष रूप से इसके दायरे से बाहर रखी गई हैं। ये हैं – निःशुल्क प्रदान की गई सेवाएं और व्यक्तिगत सेवा के संविदा के अंतर्गत प्रदान की गई सेवाएं। पहली शर्त के बारे में कोई विवाद नहीं रहा है, परन्तु व्यक्तिगत सेवा के संविदा वाली दूसरी शर्त पर, अनेक मामलों में उपभोक्ता फोरमों के समक्ष तीव्र वाद–विवाद हुआ है।

राष्ट्रीय उपभोक्ता विवाद निवारण आयोग के अध्यक्ष न्यायमूर्ति वी. बालाकृष्णा ने 21 अप्रैल 1992 को *कोस्मोपोलिटन अस्पताल और अन्य बनाम वसन्ता पी. नायर (1992) सी.पी.जे. 302 एन. सी.* के मामले में एक ऐतिहासिक निर्णय दिया, जिसमें यह व्यवस्था दी गई कि अस्पताल और चिकित्सा व्यवसाय के सदस्यों द्वारा भुगतान पर उपलब्ध कराई गई चिकित्सा सहायता का कार्यकलाप, उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम की धारा 2(1)(ण) में दी गई परिभाषा के अनुसार सेवा शब्द के दायरे में आता है और ऐसी सेवा का निष्पादन करने में कोई कमी होने की स्थिति में, व्यथित पार्टी उपचार प्राप्त कर सकती है, बशर्ते कि अधिनियम के अंतर्गत क्षेत्राधिकार रखने वाले उपभोक्ता फोरम के समक्ष शिकायत दाखिल करके उपचार प्राप्त किया जाए। यह भी व्यवस्था दी गई कि मृतक मरीजों, जो अस्पताल में इलाज करा रहे थे, के कानूनी प्रतिनिधि भी अधिनियम के अंतर्गत उपभोक्ता हैं और इसलिए शिकायत दर्ज कराने के लिए सक्षम हैं।

राष्ट्रीय आयोग का यह निर्णय देशव्यापी विवाद का कारण बना जबकि कुछ लोग इस निर्णय के पक्ष में थे और उन्होंने सरकारी अस्पतालों द्वारा उपलब्ध कराई जाने वाली निःशुल्क चिकित्सा सेवाओं को भी उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के दायरे में शामिल करने की मांग की, परंतु कुछ अन्य लोगों ने इसकी आलोचना की। इस मुद्दे पर मीडिया में, तकनीकी वैज्ञानिक जर्नलों (मेडिकल और गैर–मेडिकल) में और संगोष्ठियों तथा सम्मेलनों में बहस हुई। चिकित्सा सेवाओं पर उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम लागू करने से मरीज–डाक्टर संबंधों पर पड़ने वाले असर पर भी काफी वाद–विवाद हुआ। राष्ट्रीय आयोग के इस निर्णय से पूरा चिकित्सा व्यवसाय व्याकुल हो

उठा। इंडियन मेडिकल एसोसिएशन (आई एम ए) ने जोरशोर से इसका विरोध किया। आई एम ए के सदस्यों का विचार था कि यदि चिकित्सा सेवाएं, उपभोक्ता संरक्षण अधिनियिम के अंतर्गत आ जाती हैं तो इससे मरीज–डाक्टर संबंधों पर प्रभाव पड़ेगा और डाक्टर हमेशा मानसिक रूप से डरे रहने की स्थिति में रहेंगे। फिर वे मरीजों से कहेंगे कि वे सभी प्रकार की जांच कराएं और सलाह लें तथा डाक्टर चिकित्सा प्रतिपूर्ति बीमा कराएंगे, जिसका अर्थ होगा इलाज की लागत में काफी बढ़ोतरी और इसका भार अनिवार्य रूप से मरीज पर ही आएगा। चूंकि इस अधिनियम के अंतर्गत मरीजों द्वारा न्यायालय में डाक्टरों के खिलाफ मुकदमा चलाने की संभावना है, इसलिए डाक्टर इलाज के लिए उच्च खतरे वाले मरीजों को लेने से मना कर देंगे। इस प्रकार वास्तव में जरूरतमंद मरीजों को चिकित्सा लाभों से मना कर दिया जाएगा।

इसके पक्ष में दी गई दलील यह थी कि इस फोरम में ही पीड़ित व्यक्ति मुआवजा प्राप्त कर सकते हैं और कि चिकित्सा व्यवसाय पूरी तरह वाणिज्यिक हो गया है और अब यह कोई महान नहीं रह गया है तथा चिकित्सा व्यवसायी, लापरवाही और अनाचार के खिलाफ अपनी जिम्मेदारी के डर की किसी भावना के बिना व्यवहार कर रहे हैं।

यहां तक कि विभिन्न उच्च न्यायालयों और राज्य आयोगों के भी इस पहलू पर भिन्न–भिन्न मत थे। जैसा कि उपरोक्त मामले में यह व्यवस्था दी गई थी कि चिकित्सा सेवाएं अधिनियम के अंतर्गत कवर होती हैं, दूसरी तरफ *सी.एस. सुब्रामणियन बनाम कुमारस्वामी* (1994) 2 सी.पी.जे. 294 के मामले में यह विपरीत मत दिया गया था कि ये सेवाएं अधिनियम के अंतर्गत कवर नहीं होतीं। मद्रास उच्च न्यायालय की खंड पीठ ने यह व्यवस्था दी थी कि रोग निदान और इलाज के जरिए किसी चिकित्सा व्यवसायी या किसी अस्पताल द्वारा मरीज को प्रदान की गई मेडिकल या सर्जिकल सेवाएं, उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम की धारा 2(1)(ण) के अंतर्गत 'सेवा' की परिभाषा के अंदर नहीं आएंगी और जिस मरीज ने रोगनिदान तथा इलाज के जरिए किसी अस्पताल में चिकित्सा व्यवसायी की देखरेख में मेडिकल तथा सर्जिकल, दोनों प्रकार का इलाज करवाया है, उसे अधिनियम की धारा 2(1)(ण) के अर्थ में उपभोक्ता नहीं माना जा सकता।

अंततः मामला उच्च न्यायालय में गया और नवम्बर, 1995 में *इंडियन मेडिकल एसोसिएशन बनाम वी.पी. शान्ता* (ए.आई.आर. 1996 एस.सी. 550) के अपने ऐतिहासिक निर्णय में पूरे विवाद पर

विराम लगा दिया। उसने पुष्टि की कि मरीज को प्रदान की जाने वाली मेडिकल और सर्जिकल, दोनों प्रकार की सेवाएं उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 के अंतर्गत कवर होती हैं। यह बात सच है कि पूरा चिकित्सा व्यवसाय उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के दायरे में आ गया है। उच्चतम न्यायालय ने इस मामले में दो तथाकथित विवादित शब्दों, अर्थात "सेवाओं के लिए संविदा" और "सेवाओं का संविदा" की परिभाषा दी, अलग–अलग माना और उन पर विस्तार से चर्चा की तथा अवलोकन किया किः

"सेवा के लिए संविदा" से तात्पर्य है – ऐसा संविदा जिसके द्वारा एक पार्टी किसी व्यक्ति को या अन्य व्यक्ति के लिए व्यावसायिक या तकनीकी सेवाएं प्रदान करने का वायदा करती है जिसके निष्पादन में उसे विस्तृत निर्देश दिए जाने और उस पर नियंत्रण रखे जाने की आवश्यकता नहीं है, परंतु चिकित्सा व्यवसायी अपनी व्यावसायिक या तकनीकी दक्षता का इस्तेमाल करता है और अपने ज्ञान तथा विवेक का इस्तेमाल करता है। सेवा के संविदा में मालिक और नौकर का रिश्ता निहित होता है तथा किए जाने वाले काम में और काम के किए जाने के तरीके में आदेश का पालन करने की जिम्मेदारी होती है। तदनुसार उच्चतम न्यायालय ने निष्कर्ष दिया था कि यह बात निस्संदेह सत्य है कि चिकित्सा व्यवसायी और मरीज के बीच के संबंध में परस्पर विश्वास की कुछ मात्रा होती है, इसलिए चिकित्सा व्यवसायी द्वारा प्रदान की गई सेवाओं को व्यक्तिगत स्वरूप की सेवाएं नहीं कहा जा सकता, परंतु चूंकि डाक्टर और मरीज के बीच मालिक और नौकर का संबंध नहीं होता, इसलिए डाक्टर और मरीज के बीच के संबंध को व्यक्तिगत सेवा का संबंध नहीं माना जा सकता, परंतु यह सेवाओं का संविदा होता है और इस संविदा के अंतर्गत अपने मरीज को चिकित्सा व्यवसायी द्वारा प्रदान की गई सेवा, अधिनियम की धारा 2(1)(ण) में दी गई सेवा की परिभाषा के अपवर्जनात्मक भाग द्वारा कवर नहीं होती। उच्चतम न्यायालय के उक्त निर्णय से भारत मे ंचिकित्सा व्यवसाय पर कम से कम उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम की अनुप्रयोज्यता से संबंधित विवाद अंतिम रूप से तय कर दिया लगता है। फैसले के पक्ष और विपक्ष में व्यक्त किए गए मतों के बावजूद उच्चतम न्यायालय ने उक्त ऐतिहासिक निर्णय में यह निश्चित करने के लिए स्पष्ट रूप से कुछ दिशानिर्देश दिए हैं कि कौन सी सेवाएं कवर होती हैं और कौन सी सेवाएं अपवर्जित हैं। तथापि, मोटे तौर पर बात करते हुए, चिकित्सा सेवाएं, अधिनियम के उपबंधों के अंतर्गत कवर होती हैं, यदि वे निःशुल्क प्रदान नहीं की गई हैं।

उच्चतम न्यायालय के निर्णय का मिला–जुला असर हुआ। इसकी सराहना भी हुई और आलोचना भी। जबकि उपभोक्ताओं और उपभोक्ता समर्थकों द्वारा इसकी बहुत सराहना की गई, क्योंकि इससे शीघ्र निर्णय होने, न्याय सस्ता होने, प्रक्रिया सरल होने, मुआवजे के रूप में पीड़ित व्यक्ति को राहत मिलने, मरीज की उन्नत स्तर की देखभाल होने और डाक्टरों द्वारा अधिक सतर्क रहने के रूप में लाभ पहुंचने की संभावना है। दूसरी तरफ, पूरे चिकित्सा व्यवसाय द्वारा जोरशोर से विरोध किया गया है।

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के दायरे से अपवर्जित चिकित्सा सेवाएं निम्नलिखित हैं:

1. व्यक्तिगत सेवा के संविदा के अंतर्गत प्रदान की गई सेवा, अर्थात जहां एक कर्मचारी की हैसियत से कोई चिकित्सा व्यवसायी अपने नियोक्ता को कोई व्यावसायिक सेवा प्रदान करता है। दूसरे शब्दों में, जहां इलाज प्राप्त करने वाले व्यक्ति और डाक्टर के बीच मालिक और नौकर का संबंध होता है तो यह अधिनियम के अंतर्गत सेवा की परिभाषा के दायरे के बाहर होगा।

2. किसी ऐसे सरकारी या गैर–सरकारी अस्पताल/ स्वास्थ्य केन्द्र/ डिस्पेंसरी में प्रदान की गई सेवा, जहां किसी भी मरीज से किसी भी प्रकार का प्रभार वसूल नहीं किया जाता, चाहे वह मरीज अमीर हो या गरीब, अधिनियम के अंतर्गत सेवा के दायरे से बाहर होगी।

पिछले कुछ वर्षों में डाक्टर–मरीज के संबंध की पुरातन धारणा में बहुत अधिक परिवर्तन हो गया है। पिछले समय में संबंध विश्वास और भरोसे पर आधारित होता था। किसी डाक्टर पर आरोप लगाना या किसी लापरवाही के लिए किसी डाक्टर के खिलाफ कानूनी मुकदमे का सहारा लेना एक अनसुनी बात थी। तथापि, समय के साथ–साथ डाक्टरों की तरफ से चिकित्सा संबंधी लापरवाही, जिसके परिणामस्वरूप मरीज की मृत्यु हुई हो या क्षति पहुंची हो, के मामलों में केवल वृद्धि ही नहीं हुई है बल्कि डाक्टरों के खिलाफ कानूनी कार्रवाई में बहुत अधिक वृद्धि भी हो गई है।

जैसाकि हम जानते हैं कि मानव शरीर की बनावट जटिल होती है और इसे चलाने के लिए असंख्य प्रणालियां काम करती हैं, इसलिए प्रत्येक में विशेषज्ञता वाले तत्त्व होते हैं। इसके परिणामस्वरूप डाक्टरों ने भी रोगनिदान और इलाज के विशेषज्ञता वाले तंत्रों का सहारा लिया है। ऐसा करने में मरीज को क्षति पहुंच सकती है या उसकी मृत्यु हो सकती है। अब सवाल यह होगा कि क्या ऐसे सभी मामलों में डाक्टर और अस्पताल जिम्मेदार हैं? ऐसे मामलों में न्यायिक प्रतिक्रिया क्या रही है? डाक्टरी लापरवाही के विभिन्न क्षेत्रों पर अद्यतन न्यायिक निर्णय क्या है? सुविधा के लिए सभी मामलों को निम्नलिखित शीर्षकों के अंतर्गत कवर किया गया है:

(क) जब चिकित्सा सेवा उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 के अंतर्गत आती है; और

(ख) जब चिकित्सा सेवा उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 के अंतर्गत नहीं आती है।

प्रवत कुमार मुखर्जी बनाम रूबी जनरल अस्पताल और अन्य

II (2005) सी.पी.जे. 35 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

इस मामले में एक युवा लड़के की दुर्भाग्यपूर्ण मृत्यु हो गई। श्री सुमन्ता मुखर्जी, नेताजी सुभाष चन्द्र बोस इंजीनियरिंग कॉलेज में बी. टैक. इलैक्ट्रिकल इंजीनियरिंग का छात्र था। दिनांक 14.1.2001 को लगभग प्रातः 8.00 बजे एक दुर्घटना में उसे चोट लगी। इस दुर्घटना में कलकत्ता ट्रामवे कारपोरेशन की एक बस, मृतक द्वारा चलाई जा रही मोटर साईकिल से टकरा गई। मृतक को रूबी जनरल अस्पताल, कोलकाता में लाया गया। यह अस्पताल दुर्घटना स्थल के निकट था। मृतक का न्यू इंडिया एशोरेंस पालिसी के अंतर्गत 65,000/– रुपए की रकम का बीमा किया हुआ था। अस्पताल पहुंचने के समय मृतक होश में था और उसने अपना मेडिक्लेम प्रमाणपत्र, जो उसके बटुए में था, प्रतिवादी संख्या 3 से 5 को दिखाया। उसने उनसे वायदा किया कि इलाज के प्रभारों का भुगतान किया जाएगा और उन्हें इलाज शुरू कर देना चाहिए। वायदे पर काम करते हुए प्रतिवादी अस्पताल ने आपातकालीन कमरे में इलाज शुरू किया। तथापि, प्रतिवादी संख्या 3 से 5 ने इलाज शुरू करने के बाद 15,000/– रुपए का तुरंत भुगतान करने पर जोर देना शुरू कर दिया और धमकी दी कि यदि उक्त धनराशि तुरंत जमा नहीं की जाती है तो वे इलाज करना बंद कर देंगे। अभियोजन पक्ष के गवाह संख्या 3,4 तथा भीड़ में उपस्थित अनेक व्यक्तियों ने प्रतिवादी संख्या 3 से 5 से अनुरोध किया कि वे सुमन्ता का इलाज करना जारी रखें और उन्हें आश्वासन दिया कि जैसे ही उनका सम्पर्क सुमन्ता के माता–पिता से होता है, भुगतान तुरंत कर दिया जाएगा। तथापि, प्रतिवादी, 15,000/– रुपए का तुरंत भुगतान करने पर अड़े रहे और चिकित्सा संबंधी नैतिकता का घोर उल्लंघन करते हुए सेवा में अत्यधिक कमी करना शुरू कर दिया। 45 मिनट तक इलाज जारी रखने के बाद उन्होंने इलाज करना बंद कर दिया। फिर भीड़ को बाध्य होना पड़ा कि वह सामन्ता को नेशनल कलकत्ता मेडिकल कॉलेज और अस्पताल में ले जाए। यह अस्पताल, रूबी अस्पताल से लगभग सात–आठ किलोमीटर था। तथापि, सामन्ता की रास्ते में ही मृत्यु हो गई और प्रातः 9.10 बजे उक्त अस्पताल में उसे मृत अवस्था में लाया गया घोषित कर

दिया गया। इसलिए प्रतिवादी के खिलाफ शिकायत दायर की गई, जिसमें प्रतिवादी संख्या 1 से 5 की ओर से सेवा में कमी के कारण शिकायतकर्ताओं को हुई क्षति के लिए 1,34,60,000/– रुपए के मुआवजे का दावा किया गया।

मुद्दे

क्या मृतक के पिता या मृतक को उपभोक्ता माना जा सकता है? दूसरा कि क्या एम.ए.सी. टी. मामला, उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के अंतर्गत शिकायत पर रोक लगाएगा? क्या इलाज बीच में छोड़ देना सेवा में कमी माना जाएगा? और चौथा कि उपयुक्त मुआवजा क्या होगा?

निर्णय

विपक्षी पार्टी द्वारा यह दलील दी गई कि उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 के अंतर्गत किसी सेवा प्रदायक पर किसी उपभोक्ता को थोपने की कोई संकल्पना नहीं है। कोई ऐसा कूानन नहीं है जो उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 के अर्थ में किसी चोटग्रस्त व्यक्ति को अस्पताल का उपभोक्ता बनाता हो। कोई व्यक्ति, केवल प्रतिफल पर सेवाएं किराए पर लेने या उनका लाभ उठाने पर ही उपभोक्ता हो सकता है, जैसा कि अधिनियम की धारा 2(1)(घ)(ii) में दिया गया है। मौजूदा मामले में कोई प्रतिफल निश्चित नहीं किया गया था और शिकायतकर्ता से कोई धनराशि प्राप्त नहीं की गई थी और इसलिए मृतक और/ या शिकायतकर्ता का अस्पताल या डाक्टरों के साथ कोई संबंध नहीं है और इसलिए मृतक या उसका पिता उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 के अंतर्गत कवर होने वाला उपभोक्ता नहीं है। इस प्रकार, यह शिकायत धार्य नहीं है।

राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि आरंभतः दलील काफी आकर्षक है जिसमें दम है, परन्तु कानून और डाक्टरों की ड्यूटियों के संदर्भ में इसमें कोई सार नहीं है। इस बात में कोई संदेह नहीं है कि किसी समाज में, जहां जीवन के प्रत्येक क्षेत्र का शत–प्रतिशत वाणिज्यिकीकरण है, यह अनुरोध शत–प्रतिशत वैध है। परन्तु सौभाग्य से हम 100 प्रतिशत वाणिज्यिकीकरण के चरण में नहीं पहुंचे हैं। हम अभी भी महान व्यवसाय की नैतिकता में जीवित जानवरों और समाज के प्रति ड्यूटियों में विश्वास करते हैं (भारत के संविधान का अनुच्छेद 51–क)। आई.एम.ए. बनाम वी.पी. शान्ता और अन्य (1995) 6 एस.सी.सी. 651 के मामले में यह व्यवस्था दी गई कि जो व्यक्ति, श्रेणी (iii) में डाक्टरों और अस्पतालों द्वारा सेवाओं का लाभ उठाते हैं, उनका इलाज समान रूप से किया

जाना चाहिए, इस तथ्य के बावजूद कि उनमें से कुछ, सेवा के लिए भुगतान करते हैं और अन्य निःशुल्क सेवा का लाभ उठाते हैं। अधिकांश डाक्टर और अस्पताल, वाणिज्यिक पद्धतियों पर काम करते हैं और उन मरीजों, जो प्रभार वाहन करने की स्थिति में नहीं हैं, को निःशुल्क सेवा उपलब्ध कराने के लिए किया गया खर्च, भुगतान करने वाले मरीजों को प्रदान की गई सेवाओं से डाक्टरों तथा अस्पतालों द्वारा अर्जित आय से पूरा किया जाता है। सरकारी अस्पताल, उस हिसाब से संभवतः वाणिज्यिक नहीं हैं, परन्तु अधिनियम की योजना और उद्देश्यों पर समग्र रूप से विचार करते हुए सरकारी अस्पताल को अलग तरह का मानना संभव नहीं होगा। हमारी राय है कि ऐसी स्थिति में निर्धन वर्ग से संबंधित व्यक्ति, जिन्हें निःशुल्क सेवा प्रदान की जाती है, उस सेवा के लाभग्राही हैं जो भुगतान करने वाले वर्ग द्वारा किराए पर ली जाती हैं या जिनका लाभ उठाया जाता है। इसलिए हमारी राय है कि श्रेणी (iii) के अंतर्गत आने वाले डाक्टरों और अस्पतालों द्वारा प्रदान की गई सेवा, अधिनियम की धारा 2 (1)(ण) में यथापरिभाषित "सेवा" शब्द के दायरे में आएगी इस तथ्य के बावजूद कि सेवा का एक भाग निःशुल्क प्रदान किया गया है। आगे हमारा विचार है कि जिन व्यक्तियों को निःशुल्क सेवा प्रदान की जाती है, वे लाभग्राही हैं और इसलिए अधिनियम की धारा 2(1)(घ) के अंतर्गत उपभोक्ता की परिभाषा में आते हैं।" संबंधित निष्कर्ष (पैरा 55) निम्नलिखित हैंः

> "किसी सरकारी अस्पताल/ स्वास्थ्य केन्द्र/ डिस्पेंसरी में प्रदान की गई सेवा, जहां सेवाएं प्रभारों के भुगतान पर प्रदान की जाती हैं और सेवाओं का लाभ उठाने वाले अन्य व्यक्तियों को सेवाएं निःशुल्क भी प्रदान की जाती हैं, ऐसी सेवाएं, अधिनियम की धारा 2(1)(ण) में परिभाषित "सेवा" शब्द के दायरे में आएंगी, इस तथ्य के बावजूद कि सेवाएं ऐसे व्यक्तियों को प्रदान की जाती हैं जो सेवाओं के लिए भुगतान नहीं करते। अधिनियम के अंतर्गत निःशुल्क सेवा को भी सेवा और सेवा प्राप्त करने वाले व्यक्ति को उपभोक्ता माना जाएगा।"

हमारे विचार में गम्भीर रूप से बीमार मरीज की आपातकाल स्थिति वही होगी जो गरीब वर्ग से संबंधित व्यक्तियों की होती है। दोनों ही भुगतान करने की स्थिति में नहीं होते। संभवतः इसके कारण अलग–अलग होते हैं।

मौजूदा मामले के उपरोक्त सिद्धान्तों और तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, निस्संदेह, पंजीकरण शुल्क के अलावा प्रतिवादी संस्थान कुछ मरीजों से विभिन्न धनराशियां, जैसे अस्पताल प्रभार, नैदानिक प्रभार आदि लेते हैं और कुछ मरीजों का निःशुल्क इलाज किया जाता है। इसलिए, ऐसे मामले में, जहां मरीजों को निःशुल्क सेवा प्रदान की जाती है, यह सेवा, अधिनियम की धारा 2(1)(ण) में परिभाषित 'सेवा' शब्द के दायरे में आएगी। यह स्थिति इस तथ्य के बावजूद होगी कि सेवा उन व्यक्तियों को निःशुल्क प्रदान की जाती है जो उस सेवा के लिए भुगतान नहीं करता। अधिनियम के अंतर्गत ऐसी सेवाओं को 'सेवाएं' और सेवा प्राप्त करने वाले व्यक्ति को उपभोक्ता माना जाएगा। गंभीर रूप से बीमार आपातकाल स्थिति वाले व्यक्ति उस सेवा के लाभग्राही होते हैं जो भुगतान करने वाले वर्ग द्वारा किराए पर ली गई हैं या उनका लाभ उठाया गया है।

मौजूदा मामले में, निस्संदेह मृतक ने अस्पताल और डाक्टरों की सेवाएं ली। डाक्टरों ने मृतक का इलाज करना इसलिए आरंभ किया क्योंकि वह आपातकाल वाली स्थिति में था। यह अपने आप में सेवाएं लेना है, चाहे वह निःशुल्क हो या वायदा किए गए स्थगित भुगतान पर ली गई सेवाएं हों।

इस महा व्यवसाय की ड्यूटी, विभिन्न निर्णयों में पूरी तरह स्पष्ट की गई है। पंडित परमानंद कटारा बनाम भारत की संघ सरकार और अन्य, ए.आई.आर. 1989 एस.सी. 2039 के मामले में उच्चतम न्यायालय ने व्यवस्था दी कि "यह नहीं भूलना चाहिए कि किसी चोटग्रस्त व्यक्ति को दयनीय स्थिति में देखकर प्रत्येक नागरिक की मानवीय प्रवृत्ति उसे इस बात के लिए प्रेरित करती है कि वह चोटग्रस्त व्यक्ति की सहायता के लिए दौड़ पड़े और वह सब कुछ करे जो उसका जीवन बचाने के लिए किया जा सकता है। इस बात पर कोई विवाद नहीं किया जा सकता कि आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक प्रगति के बावजूद अभी भी नागरिकों में मानवता है और सबसे बड़ी बात यह है कि जब दयनीय स्थिति में जीवन और मृत्यु के बीच संघर्ष कर रहा कोई व्यक्ति चिकित्सा व्यवसायी के पास पहुंचता है, चाहे वह सार्वजनिक प्राधिकरण वाले अस्पताल (सरकार द्वारा चलाया जाने वाला या नियंत्रित) में हो या कोई प्राइवेट व्यक्ति हो या प्राइवेट प्रैक्टिस करने वाला कोई चिकित्सा व्यवसायी हो, उसे हमेशा चोटग्रस्त व्यक्ति की सहायता करने और उसके जीवन की रक्षा करने के लिए उसकी क्षमता के अनुसार सब कुछ करने के लिए कहा जाता है। जहां तक किसी चिकित्सा व्यवसायी की इस ड्यूटी का संबंध है, यह मानवीय प्रवृत्ति से जुड़ी हुई

है और इसके लिए न तो किसी निर्णय या नीति संहिता की आवश्यकता है और न ही किसी नियम या कानून की।"

उपरोक्त कानून पर विचार करते हुए यह बात स्पष्ट है कि:

उस मृतक को आपातकाल उपचार दिए जाने की आवश्यकता थी जिसे चोटग्रस्त गंभीर हालत में लाया गया था;

मरीज की या मरीज को अस्पताल में ले जाने वाले राहगीर की सहमति का इंतजार करने का कोई सवाल ही नहीं था और इलाज के लिए सहमति का इंतजार करना आवश्यक नहीं था।

इसलिए, प्रतिवादियों की तरफ से सेवा में कमी स्पष्ट है। प्रतिवादियों ने यह स्वीकार कर लिया है कि अस्पताल के मदर टेरेसा चेरिटेबल वार्ड में चेरिटेबल बिस्तर हैं और कि अस्पताल पूरे समाज के लिए हितकारी कार्यकलाप करता है या निःशुल्क चिकित्सा शिविर चलाता है। अन्य चेरिटेबल कार्यकलापों का उल्लेख अनुरोधपत्रों में किया गया है और इस उद्देश्य के लिए दस्तावेजी साक्ष्य रिकार्ड पर प्रस्तुत किए गए हैं। यदि इस प्रकार की स्थिति है तो उस डाक्टरी इलाज को बंद करने की कोई आवश्यकता नहीं थी जो डाक्टरों द्वारा पहले ही शुरू कर दिया गया था। इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि यह आपातकाल की स्थिति थी। एक युवा लड़के के जीवन की रक्षा करने की कोशिश करना डाक्टरों की जिम्मेदारी थी। तुरन्त दी जाने वाली चिकित्सा सहायता से उसका जीवन बच सकता था। संभवतः आमतौर पर चिकित्सक या सर्जन, उसकी सेवा की आवश्यकता वाले प्रत्येक मरीज का इलाज करने के लिए बाध्य नहीं है। परन्तु किसी संवेदनशील मामले में, जहां मरीज के निकट रिश्तेदार उपलब्ध नहीं हैं तो चिकित्सक या सर्जन की यह ड्यूटी है कि अपनी ड्यूटियों के निवर्हन में वह अपने मिशन और जिम्मेदारी के ऊंचे चरित्र को ध्यान में रखे। जैसेकि ऊपर व्यवस्था दी गई है, जहां तक चिकित्सा व्यवसाय की इस ड्यूटी का संबंध है, इसके साथ मानवीय प्रवृत्ति जुड़ी होती है और इसके लिए न तो किसी निर्णय या नीति संहिता की आवश्यकता है और न ही किसी नियम अथवा कानून की। ऐसे मामलों में जीवन, डाक्टरों के हाथों में होता है। मरीज या अस्पताल में मरीज को लाने वाले राहगीर की सहमति का इंतजार करना बिल्कुल निरर्थक है, परन्तु उन डाक्टरों की तरफ से ड्यूटी की स्पष्ट रूप से विफलता है जो उस समय अपनी ड्यूटी का निर्वहन कर रहे थे। ऐसे मामलों में सहमति अनिवार्य नहीं है।

इसके अलावा, समाज के प्रति यह दायित्व और ड्यूटी, विपक्षी पार्टी द्वारा स्वीकार की गई है जो रूबी जनरल अस्पताल के प्रबंध निदेशक द्वारा अस्पताल चलाने के लिए लाइसेंस के नवीकरण के लिए प्रमुख सचिव, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण विभाग को लिखे दिनांक 4.6.2002 के पत्र से स्पष्ट होगा।

लिखित बयान से इस बात की स्वीकारोक्ति का पता चलता है कि जब मृतक को अस्पताल में लाया गया, वह अर्ध–चेतन अवस्था में था, उसे गाढ़े की सहायता मशीन आद्र आक्सीजन फुलाव द्वारा डाक्टरी इलाज दिया गया, इंजेक्शन लगाए गए और इसके बाद यह सलाह दी गई कि मरीज को तुरंत गहन थेरेपी यूनिट में भर्ती किया जाए। बंगाली राहगीर, जो मृतक को अस्पताल में लाए थे, दाखिल करने की प्रक्रिया पूरी करने के लिए स्वागत/फ्रन्ट कार्यालय में गए। इस बात में कोई संदेह नहीं है कि अस्पताल और डाक्टरों ने अपनी ड्यूटी का निर्वहन करते हुए आपातकालीन इलाज शुरू कर दिया था।

उपरोक्त परिस्थितियों से यह माना जा सकता है कि ड्यूटी डाक्टर वह करने में विफल रहा जिसकी अपेक्षा एक समझदार और विवेकपूर्ण डाक्टर से की जाती है। इसलिए यह एक ड्यूटी थी और इसके उल्लंघन द्वारा सेवा में कमी है।

क्या एम.ए.सी.टी. मामला, उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के अंतर्गत शिकायत पर रोक लगाएगा?

उठाई गई अन्य आपत्ति, इस आधार पर शिकायत की धार्यता के संबंध में है कि शिकायतकर्ता मोटर वाहन अधिनियम, 1988 के अंतर्गत पहले ही न्यायाधिकरण में चला गया था। इस बात का भी उल्लेख किया जाता है कि एम.ए.सी.टी. में शिकायतकर्ता ने मुआवजे की राशि प्राप्त कर ली है और उक्त तथ्य को प्रकट किए बिना वह उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 के अंतर्गत इस आयोग में आया। इसलिए, शिकायत विचार किए जाने योग्य नहीं है।

हमारे विचार से यह अनुरोध भी नामंजूर कर दिया जाना चाहिए, क्योंकि दोनों वाद भिन्न–भिन्न हैं और इन्हें सीमित क्षेत्राधिकार वाले अलग–अलग न्यायधिकरणों/फोरमों द्वारा तय किया जाना चाहिए। एम.ए.सी.टी. के समक्ष वाद कारण, उस वाहन, जिससे दुर्घटना हुई, के ड्राइवर

द्वारा तेज और लापरवाही से गाड़ी चलाने के संबंध में था और डाक्टरों या अस्पताल के खिलाफ वाद कारण, अस्पताल या डाक्टरों द्वारा सेवा प्रदान करने – आपातकाल उपचार करने में कमी के लिए था। दोनों ही मामले अलग–अलग और भिन्न हैं।

इसके अलावा, शिकायतकर्ता के लिए यह संभव नहीं था कि वह मोटर दुर्घटना दावों के न्यायधिकरण के समक्ष, डाक्टरों के द्वारा सेवा में कमी के लिए शिकायत दायर करता। इसी प्रकार उपभोक्ता फोरम के समक्ष, दुर्घटना और ड्राइवर की जिम्मेदारी या वाहन मालिक की जिम्मेदारी के संबंध में शिकायत पर विचार नहीं किया जा सकता या उस पर निर्णय नहीं लिया जा सकता।

मृत्यु का कारण

अगली दलील यह थी कि यह भी सिद्ध नहीं हुआ कि सामन्ता की मृत्यु का कारण अस्पताल द्वारा किया गया इलाज या इलाज बंद कर देना था। इसलिए शिकायतकर्ता, सामन्ता की मृत्यु के लिए प्रतिवादियों से मुआवजे का दावा करने का हकदार नहीं है।

यह दलील दी गई कि शव–परीक्षा रिपोर्ट और एम.ए.सी.टी. के समक्ष रिकार्ड पर लाए गए साक्ष्य के अनुसार, शव–परीक्षा करने वाले डाक्टर ने कहा कि दुर्घटना घातक थी और दुर्घटना ही मृत्यु का कारण थी। इसलिए यह दलील दी जाती है कि शिकायतकर्ता यह साबित करने में विफल रहा कि प्रतिवादियों द्वारा इलाज न करने के परिणामस्वरूप मृत्यु हुई। यह भी दलील दी गई कि ऐसी गंभीर दुर्घटना में मृत्यु अपरिहार्य थी।

राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि हमारी राय में यह दलील चिकित्सा के न्यायशास्त्र के सुस्थापित सिद्धान्तों के विपरीत है। क्योंकि यह ज्ञात तथ्य है कि आज का चिकित्सा विज्ञान आखिरी सांस तक और इसके बाद कुछ समय तक पुनर्जीवित करने के लिए इलाज करने में विश्वास रखती है। इलाज, केवल उन्हीं मामलों में ही मरीजों को नहीं दिया जाता, जहां मरीज के जीवित बचने की संभावना हो बल्कि सभी मामलों में दिया जाता है। सीमान्त मामलों में भी जीवन बचाने का प्रयास किया जाता है। डाक्टर हमेशा मरीज के बच जाने के लिए आशान्वित रहते हैं और वे यह कभी नहीं कहते कि मृत्यु अपरिहार्य है और वे इलाज बंद नहीं कर देते। इसलिए, एम. ए.सी.टी. के समक्ष डाक्टर की गवाही को विद्वान वकील श्री हकसर द्वारा आधार बनाना बेकार है।

इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि मौजूदा मामले में इलाज शुरू किया गया और बीच में ही बंद कर दिया गया। इलाज बंद करने को किसी भी आधार पर न्यायोचित नहीं ठहराया जा सकता। मरीज को आपातकाल कक्ष में उपचार दिया गया और इलाज बंद कर देने का कोई न्यायोचित आधार नहीं था।

अस्पताल और डाक्टरों के विद्वान वकील द्वारा दी गई यह दलील बिल्कुल भी स्वीकार्य नहीं है कि क्योंकि मरीज को अस्पताल में लाने वाले राहगीर उसे सरकारी अस्पताल में ले जाना चाहते थे और इसलिए इलाज बंद कर दिया। पहली बात यह है कि यदि मृतक को सरकारी अस्पताल में ले जाना था तो आरंभिक चरण में उसे रूबी अस्पताल में लाने का कोई सवाल ही नहीं था। रिकार्ड के अनुसार, अन्य साइकिल सवार, जो गरीब तबके का था, को सरकारी अस्पताल में ले जाया गया और मृतक को रूबी अस्पताल में लाया गया। दूसरी बात यह है कि फ्रंट कार्यालय के सहायक की स्वीकारोक्ति और ऊपर उल्लिखित विभागीय जांच से रिकार्ड पर यह साबित होता है कि आरंभिक भर्ती के प्रभारों की मांग की गई थी और कि मरीज के साथ जाने वाले व्यक्तियों को रूबी अस्पताल में जाने से रोका गया। अस्पताल की यह प्रक्रिया है कि धनराशि प्राप्त करने के बाद ही मरीज को भर्ती किया जाए। मुख्य प्रबंधक के बयान के अनुसार अस्पताल, वाणिज्यिक स्वास्थ्य संगठन से संबंधित है और मानदंडों के अनुसार मरीज को भर्ती की व्यवस्था करने के काम में लगे स्टाफ ने, पेशगी धनराशि जमा करने के मानदंड मरीज पर लागू किए। इसलिए, हमारे विचार में अस्पताल की यह दलील आधारहीन है कि मरीज को अस्प्ताल में लाने वाले राहगीर उसे सरकारी अस्पताल में ले जाना चाहते थे। किसी भी मामले में मरीज को एक अस्पताल से दूसरे अस्पताल में अंतरण एक निर्धारित फार्म पर और लिखित वचनपत्र लेने के बाद ही किया जाना चाहिए। ऐसा कुछ भी नहीं किया गया। इससे यह बात निस्संदेह साबित होती है कि मृतक सामन्ता को भर्ती करने से केवल इस आधार पर इंकार किया गया कि जो व्यक्ति उसे असपताल में लाए थे, वे 15000/– रुपए की धनराशि जमा करने की स्थिति में नहीं थे।

मुआवजा

इस सवाल पर विपक्षी पार्टियों के विद्वान वकील द्वारा अनेक दलीलें दी गईं। मुख्य दलील यह थी कि एम.ए.सी.टी. के समक्ष, दावा 1,77,3000/– रुपए की राशि का था जिसमें मृतक की

आय, आश्रितता का तत्त्व और मृतक के माता–पिता द्वारा किए गए दावे की राशि शामिल थी, परन्तु न्यायधिकरण द्वारा केवल 3,78,500/– रुपए का अवार्ड दिया गया। इसलिए, इस आयोग के समक्ष 2.20 करोड़ रुपए का दावा अत्यधिक और आधारहीन है। संशोधित शिकायत में मुआवजे की राशि घटाकर 1.33 करोड़ रुपए कर दी गई।

मौजूदा मामले में, तथ्यों और सेवा में कमी तथा मोटर वाहन दुर्घटना में बुरी तरह चोटग्रस्त हुए युवा लड़के का इलाज बंद कर देने पर विचार करते हुए, मुआवजा केवल टोर्ट में लागू होने वाले सिद्धांतों के आधार पर ही नहीं दिया जाना चाहिए बल्कि अधिनियम की धारा 14 और उसकी व्याख्या के आधार पर दिया जाना चाहिए। अधिनियम की धारा 14, पहुंची चोट या हुई क्षति के लिए अवार्ड देने का क्षेत्राधिकार आयोग को प्रदान करती है। क्षति में मानसिक पीड़ा या उत्पीड़न शामिल होगा। लखनऊ विकास प्राधिकरण के मामले में न्यायालय ने अवलोकन किया कि धारा 14 में इस्तेमाल किए गए 'मुआवजा' शब्द का बहुत विस्तृत अर्थ है और अधिनियम के अंतर्गत इसकी परिभाषा नहीं दी गई है और व्यवस्था दी गई है (पैरा 14) कि कानूनी अर्थ में इसमें वास्तविक हानि या संभावित हानि हो सकती है और इसका विस्तार शारीरिक, मानसिक या भावात्मक पीड़ा, अपमान या चोट या क्षति तक हो सकता है।

यह भी एक सुस्थापित कानून है कि अधिनियम के अंतर्गत राष्ट्रीय आयोग को यह क्षेत्राधिकार प्राप्त है कि वह मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करते हुए मुआवजे का अवार्ड दे। चरण सिंह बनाम हीलिंग टच अस्पताल और अन्य (2000) 7 एस.सी.सी. 668 के मामले में इस दलील पर विचार करते हुए न्यायालय ने अवलोकन किया कि उपभोक्ता फोरमों को न्याय की आवश्यकता पूरी करने का प्रयास करना चाहिए ताकि एक सिद्ध हुए मामले में मुआवजा दिया जा सके। इससे केवल व्यक्ति की क्षतिपूर्ति करने का उद्देश्य ही पूरा नहीं होगा बल्कि साथ ही साथ सेवा प्रदायकों के दृष्टिकोण में गुणात्मक परिवर्तन लाने का उद्देश्य भी पूरा होगा।

उपरोक्त सिद्धान्त को ध्यान में रखते हुए, मानसिक कष्ट और पीड़ा के लिए 10 लाख रुपए के मुआवजे का अवार्ड देना उचित और न्यायसंगत होगा।

परिणामतः शिकायत मंजूर कर ली गई। प्रतिवादियों को निर्देश दिया जाता है कि वे शिकायतकर्ता को कुल मिलाकर 10 लाख रुपए का भुगतान करें। हर्जे–खर्चे के बारे में कोई आदेश नहीं होगा।

शिकायत मंजूर की गई।

वर्धा एस. नायर बनाम डॉ. रेमानी एन. राजन और अन्य

III (2005) सी.पी.जे. 36 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

विभिन्न सामाजिक और सांस्कृतिक कार्यकलापों में भाग लेने वाली एक स्वस्थ और सक्रिय महिला शिकायतकर्ता, जिसे पूरी तरह अपंग और अशक्त बना दिया गया था, ने अपनी शिकायत के निवारण के लिए उपभोक्ता फोरम में, डाक्टरों द्वारा ड्यूटियों के निर्वहन में तथाकथित गंभीर लापरवाही के कारण शिकायत की। शिकायतकर्ता एक नियमित जांच के लिए, विजय अस्पताल (प्रतिवादी संख्या 3) में प्रतिवादी संख्या 1 के पास गई। प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा लिखे गए प्रेसक्रिप्शन के अनुसार उसका स्वास्थ्य सामान्य था। तथापि, उसे हिस्टेरेकटोमी की सलाह दी गई। इसके बाद 15.7.1991 को चिकित्सक द्वारा संज्ञाहरण पूर्व जांच की जानी थी। दुर्भाग्यवश, 19.7. 1991 को शिकायतकर्ता ने हिस्टेरेकटोमी करवाई जिससे प्रतिवादी संख्या 1 और प्रतिवादी संख्या 2 को उसके जीवन से खिलवाड़ करने का अवसर मिल गया। यह दलील दी गई कि हिस्टेरिकटोमी करते समय, प्रतिवादी संख्या 1 ने संयोगवश उसकी छोटी आंत काट दी। स्वर्गीय डॉ. राजन ने गर्भाशय और एक डिम्बग्रन्थि निकाल दी और आंत को क्षति पहुंचा दी। इसके बाद प्रतिवादी संख्या 2 सर्जन ने संयोगवश मलाशय को काट दिया और इसके बाद वृहदान्त्र को स्टेप्ल करने के लिए स्टेप्लर गन का इस्तेमाल किया, हालांकि ऐसा करने की जरूरत नहीं थी। सर्जन ने सहमति लिए बिना अपेन्डिक्स को निकालने के लिए आपरेशन भी किया। आपरेशन के कारण शिकायतकर्ता को हुई क्षति को दूसरे अस्पताल में ठीक किए जाने की आवश्यकता पड़ी, जहां मरीज की कई सुधारात्मक सर्जरी की गईं। आज तक शिकायतकर्ता निष्क्रिय अवस्था में है।

मुद्दे

पहला मुद्दा यह था कि क्या डाक्टर/सर्जन, अनावश्यक बड़ी सर्जरी कराने के लिए किसी मरीज को फुसला सकता है, डरा सकता है और बाध्य कर सकता है? दूसरा यह कि क्या ऐसी पेचीदगी की स्थिति में अपेन्डिसाइटिस का आपेरशन करना आवश्यक था? तीसरा यह कि प्रतिवादी

संख्या 1 (अब मृतक) की तरफ से किस हद तक लापरवाही की गई और इससे विपक्षी पार्टी संख्या 3 (अस्पताल) किस हद तक जिम्मेदार होगा।

निर्णय

शिकायतकर्ता की मुख्य दलील यह है कि गर्भाशय को निकालने (हिस्टेरेकटोमी) की आवश्यकता नहीं थी, जब मरीज को सिस्टिक डिम्बग्रन्थि वाली डायग्नोज किया गया। इस संबंध में प्रतिवादी संख्या 1 की यह दलील थी कि सिस्ट कैंसरयुक्त हो सकता था, क्योंकि पहले शिकायतकर्ता का आपरेशन, कर्कट–रोग के लिए किया गया था और इसलिए हिस्टेरेकटोमी की आवश्यकता थी। राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि यह दलील सारहीन और आधारहीन है। केवल इसलिए क्योंकि शिकायतकर्ता का मलाशय के कर्कट रोग के लिए आपरेशन हुआ था, यह आवश्यक नहीं है कि सिस्ट का कैंसर वाला प्रभाव ही हो। डॉ. के. विनयचन्द्रन, जिसने पेट और श्रोणि भाग के अल्ट्रासांड का अध्ययन किया, के पत्र में उल्लेख किया गया है कि जांच के परिणाम से पता चला कि सब कुछ सामान्य है और आगे किसी परीक्षण की आवश्यकता नहीं है। जिस बात की आवश्यकता थी, वह थी साल में एक बार कोलोनोस्कोपी का अनुवर्तन। दिनांक 16.2.1990 की अल्ट्रासाउंड रिपोर्ट से केवल इतना पता चलता है कि "बायीं डिम्बग्रन्थि सामान्य है और उसमें कोई घाव नहीं है। दायी डिम्बग्रन्थि का आकार थोड़ा सा बड़ा है और थोड़ी सी सिस्टयुक्त है।" चिकित्सा संबंधी शोध पुस्तकों से भी यही सिद्ध होता है कि इन परिस्थितियों में हिस्टेरेकटोमी की कोई आवश्यकता या शीघ्रता नहीं थी। इसके अलावा, प्रतिवादी संख्या 1 को, ईओसीनोफीलिया के लिए मेटराजोअन 100 एमजी टेबलट का कोर्स प्रैस्क्राइब किए जाने तक इंतजार करना चाहिए था। शिकायतकर्ता को, दस दिन के लिए दिन में तीन बार 'सिमोरल फोर्ट' दवाई भी दी गई। यह दवाई सिस्ट के सिकुड़ने के लिए थी। परंतु परिणाम का इंतजार किए बिना सर्जरी कर दी गई। रिकार्ड पर उपलब्ध सामग्री से प्रतिवादी संख्या 1 का निदान भी त्रुटिपूर्ण पाया गया। यह भी उल्लेख किया गया कि जिरह में प्रतिवादी संख्या 1 ने बताया कि गर्भाशय के निकालने को हिस्टेरेकटोमी कहा जाता है और सिस्टिक गर्भाशय के लिए सुसंगत इलाज हिस्टेरेकटोमी नहीं है। हिस्टेरेकटोमी के बाद भी गर्भाशय और सिस्ट, शरीर में रहते हैं। इसलिए, ठीक ही कहा गया है कि प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा की गई सर्जरी, बीमारी से संबंधित नहीं थी। प्रतिवादियों की इस दलील को नामंजूर कर दिया गया कि यदि प्रतिवादी संख्या 3 द्वारा हिस्टेरेकटोमी का आपरेशन न किया जाता तो

शिकायतकर्ता को कैंसर की बीमारी हो सकती थी। आयोग ने पाया कि यह पूरी तरह एक झूठा बचाव है। शिकायतकर्ता का 1982 में कैंसर के लिए आपरेशन किया गया था और इसके बाद बिल्कुल भी कोई लक्षण नहीं था और शिकायतकर्ता पूरी तरह सामान्य थी। इसके अलावा, अस्पताल के पास आपरेशन–पूर्व और आपरेशन के बाद के लिए या रक्त के भंडारण और प्रदान करने के लिए कोई उचित सुविधाएं नहीं थीं और तदनुसार इस प्रकार की सर्जरी के लिए कोई उपयुक्त स्थान नहीं था। इस प्रकार के पेचीदा आपरेशन के लिए, प्रतिवादी संख्या 2 के निवास स्थान से स्टेप्लर गन लेने के लिए, मरीज का पेट, आपेरशन टेबल पर आधे घंटे से भी अधिक समय तक खुला रखा गया जो गंभीर लापरवाही और सेवा में कमी है।

रिकार्ड पर उपलब्ध साक्ष्य से राष्ट्रीय आयोग ने निष्कर्ष दिया कि इस बात में कोई संदेह नहीं है कि प्रतिवादी संख्या 1 ने अपनी ड्यूटी का निर्वहन करने में कमी की। यह बात स्वीकार की गई कि डाक्टर ने लापरवाही से मलाशय काट दिया और साक्ष्य से पता चलता है कि श्रोणि भाग को काटना त्रुटिपूर्ण था। इसके अलावा, तत्काल हिस्टेरेकटोमी आपरेशन करने की कोई आवश्यकता नहीं थी। ज्यादा से ज्यादा डिम्बग्रन्थि का सिस्ट निकाले जाने की आवश्यकता थी और अंततः ऐसी पेचीदा हालत में अपेन्डिसाइटिस का आपरेशन करने की आवश्यकता नहीं थी। शिकायतकर्ता की (1) पूरे पेट की हिस्टेरेकटोमी, (2) द्विपक्षीय सालपिंगों ओफोरेक्टोमी और मलाशय ठीक करने, (3) बायीं वृहतान्त्र की एक से दूसरे सिरे तक एनासटामोसिस, (4) एल.यू.क्यू. लूप ट्रांसवर्स कोलोस्टोमी, (5) अपेन्डिकटोमी बरीइंग स्टम्प, और (6) छोटी आंत की मरम्मत की गई। शिकायतकर्ता का कोई दोष न होने पर भी उसके यह अनावश्यक आपरेशन किए गए और प्रतिवादी ही इसका कारण बेहतर जानते हैं। इसलिए, यह गंभीर डाक्टरी गलती का मामला है जिससे शिकायतकर्ता अपंग और निष्क्रिय जीवन बिता रही है। तदनुसार, शिकायत मंजूर की जाती है। प्रतिवादी संख्या 1 के खिलाफ कोई आदेश पारित नहीं किया जाता है, क्योंकि उसकी मृत्यु हो चुकी है। प्रतिवादी संख्या 2 और 3 को संयुक्त रूप से और अलग–अलग 9.5 लाख रुपए के मुआवजे का भुगतान करने के लिए जिम्मेदार ठहराया गया।

शिकायत मंजूर की गई।

मोहनन बनाम प्रभा जी. नायर और अन्य

I (2004) सी.पी.जे. 21 (उच्चतम न्यायालय)

तथ्य

अपीलकर्ता की पत्नी गर्भवती थी और गर्भावस्था के सातवें महीने से प्रतिवादी से परामर्श ले रही थी। इसके बाद, उसने डाक्टरी हस्तक्षेप के साथ एक मृत बच्चे को जन्म दिया और उसे अत्यधिक रक्तस्राव हुआ। बाद में उसकी मृत्यु हो गई। अपीलकर्ता ने पुलिस में रिपोर्ट दर्ज करवाई और मजिस्ट्रेट ने अपराध का संज्ञान लिया। इसके बाद प्रतिवादी ने शिकायत रद्द करने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अंतर्गत उच्च न्यायालय के समक्ष आवेदन दाखिल किया। एकल न्यायाधीश ने व्यवस्था दी कि रिकार्ड पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर कोई अपराध नहीं बनता और शिकायत खारिज कर दी। आदेश से व्यथित मृतक के प्रति ने मौजूदा अपील दायर की।

मुद्दा

क्या प्रारम्भिक चरण में शिकायत खारिज करना न्यायोचित था?

निर्णय

उच्चतम न्यायालय ने व्यवस्था दी कि अपीलकर्ता को मजिस्ट्रेट के समक्ष साक्ष्य प्रस्तुत करने का पूरा अवसर नहीं मिला। इस तथ्य मात्र कि मरीज की मृत्यु अस्पताल में हुई, से यह अनुमान नहीं लगाया जा सकता कि डाक्टरों की लापरवाही के कारण मृत्यु हुई और उसके मरीज की मृत्यु के लिए डाक्टर को आपराधिक रूप से जिम्मेदार बनाने की दृष्टि से यह साबित किया जाना चाहिए कि उसकी ओर से कोई लापरवाही या असक्षमता है जो किसी सिविल दायित्व के आधार पर मुआवजे के मामले से परे चला गया और कि उसने मरीज के जीवन और सुरक्षा के लिए अनदेखी करके कुछ काम किया। डाक्टर की लापरवाही, सामग्री का परीक्षण करने से पता लगाई जा सकती है। विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा प्रारंभ में ही शिकायत खारिज करना न्यायोचित नहीं था। इस प्रकार, उच्च न्यायालय का निर्णय रद्द कर दिया गया। मजिस्ट्रेट को निर्देश दिया गया कि वह मामले पर कानून के अनुसार विचार करे।

अपील का तदनुसार निपटान किया गया।

डॉ. कालीगौडेन बनाम एन. थंगामुथु

IIII (2004) सी.पी.जे. 9 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

प्रतिवादी की पत्नी श्रीमती तुलसीमनी, जिसकी आयु 42 वर्ष थी, ने अत्यधिक रक्तस्राव की स्त्रीरोग संबंधी समस्या के लिए दिनांक 29.4.1996 को याचिकाकर्ता डॉ. कालीगोडेन से परामर्श लिया। डॉ. कालीगोडेन ने गर्भाशय निकालने के लिए सर्जरी की सलाह दी और दिनांक 30.4.1996 की सुबह उसे अपने कोयूइन अस्पताल, इरोड में भर्ती कर लिया। उसने उसी दिन शाम उसका गर्भाशय निकाल दिया। दिनांक 5.5.1996 को उसने सिर में चक्कर आने और उल्टी की शिकायत की। पुतिजीवरक्तता (सेप्टिसीमिया) होने का संदेह व्यक्त किया गया और उसे कुछ एंटीबायटिक दी गई। उसकी हालत में कोई सुधार नहीं हुआ और 7 तारीख की सुबह उसे डॉ. रामालिंगम द्वारा चलाए जा रहे किडनी सेंटर में भेज दिया गया। तथापि, 7.5.1996 की रात को मरीज की मृत्यु हो गई। जारी किए गए मृत्यु प्रमाणपत्र से पता चला कि मृत्यु का कारण सेप्टिसीमिया द्वारा गुर्दा फेल होना था। मृतक के पति ने दिनांक 11.3.1997 को जिला फोरम के समक्ष एक शिकायत दायर की, परन्तु चूक के आधार पर शिकायत खारिज कर दी गई। इसलिए, उसने राज्य आयोग के समक्ष अपील दायर की और साथ ही साथ, शिकायत को पहले खारिज किए जाने के तथ्य को प्रकट किए बिना नए सिर से जिला फोरम के समक्ष शिकायत दायर की। राज्य आयोग ने अपील मंजूर कर ली और 4,50,00/– रुपए के मुआवजे का अवार्ड दिया। इसलिए, पुनर्विचार याचिका दायर की गई।

मुद्दे

पहला यह कि क्या शिकायत विचार किए जाने योग्य है और 'रेस जूडीकेटा' के सिद्धान्त से बाधित नहीं होती है और दूसरा यह कि क्या आपरेशन–पूर्व मूल्यांकन किए बिना गर्भाशय निकालना, याचिकाकर्ता की ओर से डाक्टरी लापरवाही मानी जाएगी।

निर्णय

'रेस जूडीकेटा' के मुद्दे के बारे में राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि 'रेस जूडीकेटा' का सवाल ही पैदा नहीं होता, क्योंकि पिछली शिकायत का निर्णय गुणावगुणों के आधार पर नहीं किया गया था बल्कि चूक के कारण उसे खारिज किया गया था। शिकायतकर्ता ने विपक्षी पार्टी को परेशान करने के लिए या उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के अंतर्गत उपलब्ध प्रक्रिया का दुरुपयोग करने के लिए नए सिरे से शिकायत नहीं की थी। इसलिए, शिकायत विचार किए जाने योग्य है। डाक्टरी लापरवाही के सवाल के बारे में यह अवलोकन किया गया कि गर्भाशय में अलसर के कारण मरीज को सेप्टिसीमिया हो गया। सर्जन अलसर का पता लगाने में विफल रहा, क्योंकि उसने आपरेशन से पहले कोई मूल्यांकन नहीं किया। यह कोई आपातकालीन आपरेशन नहीं था जिससे इस चूक को न्यायोचित ठहराया जा सकता। दूसरी बात यह है कि यह प्रमाणित किया गया कि मरीज की मृत्यु गुर्दा फेल होने के कारण हुई। सर्जन को यह पता लगाने के लिए प्रयोगशाला संबंधी विभिन्न परीक्षण करने चाहिएं थे कि क्या मरीज सर्जरी करवाने के लिए पूरी तरह फिट है। इसलिए, राष्ट्रीय आयोग ने, राज्य आयोग के इस निर्णय को न्यायोचित ठहराया कि याचिकाकर्ता की ओर से सेवा में कमी की गई। पुनर्विचार याचिका को रद्द कर दिया गया और राज्य आयोग के आदेश की पुष्टि कर दी गई।

पुनर्विचार याचिका खारिज की गई।

अवयस्क इबे बनाम जी.ई.एम. अस्पताल और अन्य

III (2004) सी.पी.जे. 37 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

अवयस्क इबे का जन्म प्रतिवादी के अस्पताल में दिनांक 26.4.1993 को हुआ था। क्योंकि उसका जन्म काल–पूर्व, अर्थात गर्भावस्था के सातवें महीने में हो गया था, इसलिए उसे इनक्युबेटर में रखा गया। जब उसका इलाज विपक्षी पार्टी के डाक्टरों द्वारा किया जा रहा था, उस समय उसे गैंगरीन हो गया जिसके परिणामस्वरूप कोहनी के नीचे उसके दाएं हाथ को काटना पड़ा। अवयस्क इबे के पिता (शिकायतकर्ता) ने जिला फोरम में एक शिकायत दायर की, जिसमें विपक्षी पार्टी मैसर्स जी.ई.एम. अस्पताल की ओर से इलाज करने में की गई सेवा की कमी का आरोप लगाया गया। जिला फोरम ने शिकायत मंजूर कर ली और विपक्षी पार्टी को निर्देश दिया कि वह मुआवजे के रूप में 1,00,000 रुपए और हर्जे–खर्चे के रूप में 500/– रुपए का भुगतान करे। इसके बाद दोनो ही पार्टियों ने राज्य आयोग में अपीलें दायर कीं। राज्य आयोग ने अस्पताल द्वारा दायर की गई अपील को मंजूर कर लिया और जिला फोरम के आदेश को रद्द कर दिया जिसके परिणामस्वरूप शिकायतकर्ता द्वारा दायर की गई अपील को खारिज कर दिया गया। इसलिए उसने पुनर्विचार याचिका दायर की।

मुद्दे

क्या सेवा प्रदान करने में प्रतिवादी द्वारा सेवा में कोई कमी की गई थी?

निर्णय

साक्ष्य पर विचार करने और चिकित्सा संबंधी साहित्य का अवलोकन करने के बाद राष्ट्रीय आयोग ने टिप्पणी दी कि यह बात स्पष्ट है कि बच्चे को संक्रमण के कारण उस समय गैंगरीन हो गया था जब उसे इनक्युबेटर में रखा गया था। नर्सिंग के सिद्वान्तों और व्यवहार से यह पता चलता है कि लापरवाही से सुई लगाने और अनुचित स्टरलाइजेशन के जरिए संक्रमण हो सकता है। संबंधित स्टाफ नर्सों, जिनके कारण संक्रमण हुआ था, की शैक्षिक योग्यता और पंजीकरण प्रमाण–पत्र की जांच नहीं की गई थी। इससे स्पष्ट पता चलता है कि देखभाल करने की ड्यूटी का उल्लंघन किया गया है। राष्ट्रीय आयोग ने अवलोकन किया कि संक्रमण समय से इलाज न करने के कारण विकसित हुआ और फैला। दिनांक 1.5.1993 को संक्रमण का पता लगा, परन्तु

इलाज के लिए बच्चे को 4.5.1993 को ही भेजा गया। इसलिए, राष्ट्रीय आयोग ने राज्य आयोग द्वारा पारित किए गए आदेश को रद्द कर दिया और जिला फोरम द्वारा पारित किए गए आदेश को ही न्यायोचित ठहराया।

पुनर्विचार याचिका मंजूर की गई।

विजय एच. मंकर बनाम डा. (श्रीमती) मंगला बनसोड और अन्य

I (2000) सी.पी.जे. 37 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

शिकायतकर्ता की पत्नी (मृतक), आयु 37 साल विपक्षी पार्टी की एक नियमित मरीज थी और गर्भावस्था के दौरान पूरे समय में विपक्षी पार्टी द्वारा नियमित रूप से उसका इलाज किया गया और उसे परामर्श दिया गया। प्रसव के संभावित समय के आसपास दिनांक 31.5.1990 को मृतक को बेचैनी हो रही थी और वह विपक्षी पार्टी के पास गई। जांच के बाद, विपक्षी पार्टी ने उसे कहा कि चिन्ता करने की कोई बात नहीं है और उसे कुछ दवाइयां लिख दीं। तथापि, दवाइयां लेने के बाद रात को उसे रक्तस्राव (काला) हुआ। अगले दिन, अर्थात 1.6.1990 को वह नर्सिंग होम में गई, जहां सोनोग्राफी के बाद उसे पता चला कि भ्रूण की मृत्यु हो चुकी है। इसके बाद लगभग 3.00 बजे अपराह्न में मरीज को भर्ती किया गया। तथापि, 8.00 बजे अपराह्न तक, अर्थात 5.00 घण्टे तक उसका कोई उपचार या देखभाल नहीं की गई, सिवाय इसके कि विपक्षी पार्टी द्वारा पिटोसिनड्रिप के लिए औपचारिक रूप से दौरा किया गया। जब उसकी हालत ज्यादा खराब हो गई तो विपक्षी पार्टी 12.00 बजे अपने नर्सिंग होम में आई और मरीज को लेबर रूम में लाया गया। 2.00 बजे विपक्षी पार्टी लेबर रूम से बाहर आई और मरीज के रिश्तेदारों से कहा कि मरीज ने बच्चे को स्वाभाविक रूप से जन्म दिया है और मरीज बिल्कुल ठीक है। तथापि, 5–10 मिनट बाद विपक्षी पार्टी ने मरीज के रिश्तेदारों से कहा कि वे ओ+ रक्त की 10–12 बोतलों की व्यवस्था करें, क्योंकि बहुत अधिक रक्तस्राव हो रहा था। इसी बीच, विपक्षी पार्टी ने मरीज को उसके रिश्तेदारों की सहमति या जानकारी के बिना राजकीय मैडिकल कॉलेज और अस्पताल में भेज दिया। यहां तक कि उसके साथ कोई जीवनरक्षक उपकरण भी नहीं दिया गया। जब अन्य रिश्तेदार जी.एम.सी. अस्पताल में दौड़े आए तो उन्होंने श्रीमती लता को मृत पाया। मृतक लता के पति ने डाक्टरी लापरवाही की बाबत एक शिकायत दायर की और मुआवजे के रूप में 7,47,600 रुपए का दावा किया।

मुद्दे

पहला यह कि क्या डाक्टर इलाज करने में लापरवाह रही, और दूसरा यह कि क्या निकट की रिश्तेदार होने के कारण डाक्टर ने निःशुल्क सेवा प्रदान की?

निर्णय

विपक्षी पार्टी की प्रारम्भिक आपत्ति यह थी कि उसने शिकायतकर्ता से प्रतिफल के रूप में कोई भुगतान प्राप्त नहीं किया और इसलिए इस मामले में प्रदान की गई सेवा उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम की धारा 2(1) (ण) के अंतर्गत नहीं आती। तथापि, मेडिकल एसोसिएशन बनाम वी.पी. सान्था और अन्य के मामले में उच्चतम न्यायालय के आदेश में अन्य बातों के साथ–साथ यह कहा गया है कि गैर–सरकारी अस्पताल/ नर्सिंग होम, जहां उन व्यक्तियों द्वारा भुगतान किए जाने की आवश्यकता है जो भुगतान करने की स्थिति में हैं और उन व्यक्तियों को निःशुल्क सेवाएं प्रदान की जाती हैं, जो इनका खर्च वहन नहीं कर सकते, अधिनियम की धारा 2(1)(ण) में यथापरिभाषित 'सेवा' शब्द के दायरे में आएंगे। मौजूदा मामले में यह बात सही है कि विपक्षी पार्टी की यह दलील थी कि मरीज से शुल्क नहीं लिया गया, क्योंकि मरीज सहयोगी डाक्टरों के निकट की रिश्तेदार थी, और कि निःशुल्क सेवा का मामला नहीं है क्योंकि मरीज खर्च वहन नहीं कर सकती थी। इसके अलावा, शिकायतकर्ता ने यह बयान दिया था कि विपक्षी पार्टी ने उस फीस की रसीद नहीं दी गई थी, जिसका भुगतान किया गया था, और कि विपक्षी पार्टी ने दिनांक 31.5.1990 को उसकी सास से कहा था कि प्रसव के बाद वह सभी भुगतानों की एक समेकित रसीद दे देगी। उसकी सास ने इस संबंध में एक शपथपत्र भी दायर किया है। उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, गुणावगुण आधार पर शिकायत के न्यायनिर्णयन के साथ इस मुद्दे को कार्यवाही में रखने की आवश्यकता नहीं है। जहां तक विरोधी पार्टी की ओर से की गई लापरवाही का संबंध है, आयोग ने व्यवस्था दी कि "हम बच्चे के प्रसव में विरोधी पार्टी द्वारा चुनी गई प्रक्रिया पर निर्णय लेने के बारे में कोई आपत्ति नहीं कर रहे हैं। तथापि, भर्ती के तुरन्त बाद अतिरिक्त स्त्री रोग विशेषज्ञ और संज्ञाहरण विशेषज्ञ की सेवाएं उपलब्ध कराने में और रक्त की आपूर्ति की पहले से उपलब्धता की व्यवस्था करने में विरोधी पार्टी के विफल रहने की अनदेखी नहीं की जा सकती और यह नहीं माना जा सकता कि इस मामले में मरीज की मृत्यु में इन चीजों का योगदान नहीं रहा है। इस मामले में डाक्टरी लापरवाही और अन्य प्रकार की लापरवाही रही है और इसलिए, मृतक के मामले को नियंत्रित करने में विपक्षी पार्टी की तरफ से सेवाओं में कमी रही है।" हर्जे–खर्चे के अलावा, 2,50,000/– लाख रुपए के मुआवजे का अवार्ड दिया गया।

शिकायत मंजूर की गई

डा. (श्रीमती) टी. वाणी देवी और अन्य बनाम तुगुतला लक्ष्मी नरसिहा नारसा रेड्डी

I (2004) सी.पी.जे. 180 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

श्रीमती प्रमिला देवी गर्भवती थी और उसे दिनांक 4.6.1992 को लगभग 12.30 बजे पूर्वाह्न तीसरे अपीलकर्ता के अस्पताल में भर्ती किया गया। डाक्टर टी. वाणी देवी पहली अपीलकर्ता ने मरीज की जांच करने के बाद कहा कि प्रसव 5–6 घंटे के अंदर हो जाएगा। बाद में यह कहा गया कि बच्चे का आकार सामान्य से बड़ा है और सिजेरियन आपरेशन जरूरी है। लिखित सहमति प्राप्त करने के बाद डाक्टर वाणी देवी ने कहा कि सिजेरियन आपरेशन की जरूरत नहीं है। लगभग प्रातः 8.30 बजे मृतक की माता और अन्य पड़ोसी, लोग लेबर रूप में उपस्थित थे, को बाहर जाने के लिए कहा गया। डाक्टर वाणी देवी ने फोरकैप्स लगाया और जोर से बच्चे को बाहर खींचा। इसके तुरन्त बाद वह सरकारी कर्मचारी होने के नाते अपनी ड्यूटी पर सरकारी अस्पताल में चली गई। उस समय बहुत अधिक रक्तस्राव हो रहा था, परन्तु लगभग दोपहर तक मरीज को बिना देखभाल किए छोड़े रखा गया। लगभग दोपहर को नर्सिंग होम की प्रभावी डाक्टर ने मरीज को सैलिंग और कुछ इंजेक्शन दिए, परन्तु उनसे रक्तस्राव नहीं रुका। वाणीदेवी मृतक को देखने के लिए लगभग 2.00 बजे आई, परन्तु बिना कोई उपचार दिए चली गईं। उसी दिन 4.00 बजे प्रमिला देवी की मृत्यु हो गई। मृतक के पिता ने शिकायत दायर की। राज्य आयोग ने गहराई से मामले की जांच करने के बाद निष्कर्ष दिया कि यह डाक्टरी लापरवाही का मामला है और मुआवजे का अवार्ड दिया। आदेश से व्यथित डाक्टर वाणी देवी अपील के जरिए राष्ट्रीय आयोग में गईं।

मुद्दे

क्या अपीलकर्ता डाक्टरी लापरवाही के लिए जिम्मेदार है?

निर्णय

राष्ट्रीय आयोग ने अवलोकन किया कि अपीलकर्ता मृतक को उचित डाक्टरी सेवाएं प्रदान करने में बहुत अधिक लापरवाह थे। फोरकैप्स का इस्तेमाल करना हालांकि प्रचलन में था, परन्तु इसका सहारा नहीं लिया जाना चाहिए था जब बच्चे का आकार सामान्य से बड़ा था और

सिजेरियन आपरेशन करने के लिए अपीलकर्ताओं से पहले ही हस्ताक्षर करा लिए गए थे। हालांकि फोरकैप्स के प्रसव में कोई दोष नहीं है, परन्तु यह कार्य जल्दी में किया गया था जिसके कारण पक्षाघात हो गया। इससे पता चलता है कि अपनी सरकारी ड्यूटी करने में जल्दबादी के कारण अपीलकर्ता ने सिजेरियन आपरेशन नहीं किया और फोरकैप्स प्रसव का सहारा लिया गया। इससे बहुत अधिक रक्तस्राव हुआ, परन्तु रक्तस्राव को रोकने के लिए किसी भी प्रकार का प्रयास नहीं किया गया और नवजात बालिका को छोड़कर प्रमिला देवी चल बसीं। राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि अपीलकर्ता लापरवाह थे और क्योंकि नर्सिंग होम में आपातकालिक स्थिति से निबटने के लिए उचित व्यवस्था नहीं थी, इसलिए वे मुआवजे का भुगतान करने के लिए संयुक्त रूप से जिम्मेदार हैं। राज्य आयोग के आदेश को न्यायोचित ठहराया गया।

अपील खारिज कर दी गई

मीनाक्षी मिशन अस्पताल एवं अनुसंधान केन्द्र और अन्य बनाम सामूराज और अन्य

I (2005) सी.पी.जे. 33 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

मामले के संक्षिप्त मुद्दे ये हैं कि शिकायतकर्ता की 13 साल की पुत्री, जिसका नाम सुबाता था, को "क्लैफ्ट–लिप" की सर्जरी के लिए दिनांक 17.12.2005 को याचिकाकर्ता के अस्पताल में भर्ती किया गया था। उसे दिनांक 20.12.1995 को लगभग प्रातः 9.30 बजे सर्जरी के लिए ले जाया गया और प्रातः 10.30 बजे उसे मृत घोषित कर दिया गया। इन परिस्थितियों में डाक्टरी लापरवाही के लिए जिला फोरम में शिकायत दायर की गई। जिला फोरम ने पार्टियों की सुनवाई करने के बाद और याचिकाकर्ता को लापरवाह पाने के बाद निर्देश दिया कि वह मुआवजे के रूप में 3,00,000/– रुपए का भुगतान करे। इस आदेश से व्यथित राज्य आयोग के समक्ष उसने अपील दायर की। राज्य आयोग ने एक विवेकपूर्ण और विस्तृत आदेश के जरिए हर्जे–खर्चे के साथ अपील को खारिज कर दिया। इस प्रकार, राष्ट्रीय आयोग के समक्ष पुनर्विचार याचिका दायर की गई।

मुद्दे

पहला यह कि क्या जिला फोरम और राष्ट्रीय आयोग ने अनुमान के आधार पर ही आदेश पारित किए थे? और दूसरा यह कि क्या डाक्टर, मरीज का इलाज करने में लापरवाह थे?

निर्णय

राष्ट्रीय आयोग ने विस्तार में गए बिना पहले मुद्दे को खारिज कर दिया, क्योंकि जिला फोरम और राज्य आयोग का आदेश एक विस्तृत आदेश था और उन्होंने पार्टियों द्वारा उठाए गए प्रत्येक मुद्दे पर विस्तार से विचार किया था। दूसरे मुद्दे पर आयोग ने व्यवस्था दी कि "यह नोट करना बहुत सुसंगत है कि प्रबंध निदेशक द्वारा दाखिल किए गए किसी के भी शपथ–पत्र में या इस उद्देश्य के लिए रखी गई आपरेशन टिप्पणियों में किसी ऐसे व्यक्ति के नाम का उल्लेख नहीं किया गया है जिसने एनेसथीसिया दिया हो। यह बात भी स्पष्ट नहीं की गई कि आपरेशन थियेटर के अन्दर दो एनेसथिटिस्ट क्या कर रहे थे? वहां इन दोनों की क्या आवश्यकता थी? हमने दिनांक 20.12.1995 को प्रातः 10.00 बजे की आपरेशन टिप्पणियों, जब वह रिकार्ड की गई थी, को

सावधानी से देखा है। उसे ई.डी.जी. मॉनीटर और पल्स ऑक्सीमीटर कवर के अंतर्गत जी.ए. द्वारा एनेसथीसिया दिया गया था। पूरी प्रक्रिया के रिकार्ड में कहीं भी इस बात का उल्लेख नहीं है कि यह एनेसथीसिया किसने दिया? राज्य आयोग की तरह हम भी इस बात को जानने में असमर्थ हैं कि डाक्टर भास्करण, जिसने तथाकथित रूप से एनेसथीसिया दिया और वे देश में ही मौजूद हैं, को क्यों पेश नहीं किया जा सका? हम यह मानने में भी असमर्थ हैं कि दो अलग–अलग कागजों में एक ही मरीज के बारे में दो प्रोग्रेस कार्ड कैसे हो सकते हैं, विशेष रूप से 11.30 बजे के बाद, जब बच्चे को आई.सी.आर.यू. में भेजा गया था। यह रिकार्ड पूरी तरह स्पष्ट है कि बच्चे को प्रातः 10.00 बजे और 10.30 बजे दो एनेसथीस्टों द्वारा एनेसथीसिया दिया गया और बच्चे की नब्ज नहीं चल रही थी। मृत्यु के लिए दिए गए सभी कारणों की विधिवत जांच विस्तारपूर्वक चिकित्सा संबंधी पुस्तकों और विवरण के संदर्भ में राज्य आयोग द्वारा की गई जिससे हम पूरी तरह सहमत हैं। यह डाक्टरी लापरवाही का एक स्पष्ट मामला है।

हम यहां यह भी उल्लेख करते हैं कि आमतौर पर डाक्टरों पर ही लापरवाही के विशिष्ट आरोप लगाए जाते हैं, परन्तु इस मामले में एनेसथीस्टों के नामों के बारे में सभी आपरेशन टिप्पणियां/ प्रोग्रैस रिकार्ड में कोई जिक्र नहीं है। इन एनेसथीस्टों के नाम का कहीं भी उल्लेख नहीं किया गया है। इसलिए, अस्पताल में जो कुछ भी हुआ, उसके लिए अस्पताल जिम्मेदार है। इस बात को ध्यान में रखते हुए, हमारे समक्ष दायर की गई पुनर्विचार याचिका में कोई सार नहीं है। इसलिए, उक्त याचिका खारिज की जाती है।

पुनर्विचार याचिका खारिज कर दी गई

मौ. सुलेमान अंसारी (डी.एम.एस.) बनाम शंकर भंडारी

III (2005) सी.पी.जे. 1 (उच्चतम न्यायालय)

तथ्य

दिनांक 12 अक्तूबर, 1994 को प्रतिवादी, जो उस समय अवयस्क था, के हाथ में फ्रेक्चर हो गया। प्रतिवादी को उसके पिता द्वारा अपीलकर्ता के पास ले जाया गया। अपीलकर्ता ने प्रतिवादी के हाथ में पट्टी बांध दी और कुछ दवाइयां लिख दी गई। प्रतिवादी बहुत बेचैनी में था। उसे वापस अपीलकर्ता के पास लाया गया जिसने उसके हाथ में दुबारा पट्टी बांधी। अंततः, प्रतिवादी को अन्य डाक्टरों के पास ले जाया गया। तथापि, इस समय तक यह कहा गया कि प्रतिवादी के हाथ में स्थायी क्षति हो गई है। इस आरोप के आधार पर प्रतिवादी द्वारा जिला फोरम के समक्ष शिकायत दायर की गई। जिला फोरम का विचार था कि यह मुद्दा सिविल न्यायालय द्वारा तय किया जाना चाहिए। तदनुसार, शिकायत को नामंजूर कर दिया गया। व्यथित प्रतिवादी ने राज्य आयोग के समक्ष अपील दायर की। राज्य आयोग ने अपील मंजूर कर ली और 1.5 लाख रुपए के मुआवजे का भुगतान करने का निर्देश दिया। राष्ट्रीय आयोग ने भी अपीलकर्ता द्वारा दायर की गई पुनर्विचार याचिका को नामंजूर कर दिया, इसलिए मौजूदा अपील की गई।

मुद्दा

क्या यह शिकायत कालबाधित है?

निर्णय

अपीलकर्ता द्वारा यह दलील दी गई कि प्रतिवादी का वाद कारण दिनांक 12.10.1994 को उत्पन्न हुआ था जबकि शिकायत 1998 में दायर की गई थी। इसलिए, यह शिकायत कालबाधित है। प्रतिवादी द्वारा यह दलील दी गई कि हालांकि विलम्ब की माफी के लिए कोई आवेदन दाखिल नहीं किया गया है, परन्तु फिर भी इस न्यायालय को संविधान के अनुच्छेद 142 के अंतर्गत इस कमी पर ध्यान नहीं देना चाहिए। आगे यह कहा गया कि वाद कारण अभी भी चल रहा है और रिकार्ड पर उपलब्ध साक्ष्य स्पष्ट रूप से साबित करता है कि अपीलकर्ता दवाई देने के लिए पूरी तरह अयोग्य था।

उच्चतम न्यायालय ने व्यवस्था दी कि "यदि यह अनुमान भी लगा लिया जाए कि वाद कारण चल रहा है, तब भी हमारे विचार से प्रतिवादी के हाथ में अपीलकर्ता द्वारा पहुंचाई गई स्थायी क्षति के साथ साक्ष्य को जोड़ना सारहीन प्रतीत होता है, विशेष रूप से इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि प्रतिवादी को दूसरे डाक्टरों के पास ले जाना पड़ा और अपीलकर्ता द्वारा अन्तिम बार देखे जाने से चार साल की अवधि तक उसे कोई शिकायत नहीं हुई। तथापि, प्रतिवादी की इस दलील में कुछ औचित्य प्रतीत होता है कि अपीलकर्ता वास्तव में प्रेक्टिस करने का बिल्कुल भी हकदार नहीं था।" इस प्रकार इस मुद्दे को अंतिम रूप से तय किए बिना इस मामले के तथ्यों को ध्यान में रखते हुए (अर्थात् समयसीमा) उच्चतम न्यायालय ने इस मामले का निपटान अपीलकर्ता को यह निर्देश देते हुए किया कि वह 80,000 रुपए का भुगतान करे। इस अपील को हर्जे खर्चे के साथ खारिज कर दिया गया।

हेमिना हितेश कोटक बनाम डॉ. अशोक नाथवानी

II (2004) सी.पी.जे. 11 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

पहले प्रतिवादी की लापरवाही से हुई हितेश कोटक की मृत्यु के कारण उन्हें दिए गए मुआवजे की राशि बढ़ाने के लिए राज्य आयोग के आदेश के खिलाफ शिकायतकर्ता ने अपील दायर की। प्रतिवादियों की संख्या चार थी। पहला प्रतिवादी डाक्टर था, जिसके खिलाफ लापरवाही का आरोप लगाया गया। प्रतिवादी संख्या 2 और 3 उस डाक्टर के अधीन काम करने वाले कर्मचारी थे और चौथा प्रतिवादी नेशनल इंश्योरेंस कम्पनी लिमिटेड है, जिसने पहले प्रतिवादी को 5 लाख रुपए का इंश्योरेंस कवर दे रखा था। किसी भी प्रतिवादी ने पहले प्रतिवादी के खिलाफ उस लापरवाही के निष्कर्ष को चुनौती नहीं दी जिससे 31 साल के युवा हितेश कोटक की मृत्यु हुई थी। हितेश एक इंजीनियर था और एक प्राइवेट फर्म में काम करता था। वह 4061/– रुपए प्रतिमाह आहरित करता था। राज्य आयोग ने मुआवजे के रूप में 50,000/– रुपए का अवार्ड दिया। मुआवजे की राशि के खिलाफ और इसे बढ़ाने के लिए मौजूदा अपील दायर की गई।

मुद्दा

क्या मुआवजे के रूप में 50,000/– रुपए का अवार्ड तर्कसंगत है?

निर्णय

राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि राज्य आयोग ने अपने आपको पूरी तरह भ्रमित किया है। मानव जीवन बहुमूल्य है। इलाज में की गई लापरवाही के कारण यह जीवन नष्ट हुआ। मृतक की आयु केवल 31 साल थी। वह अपने पीछे एक विधवा, एक अवयस्क बच्चा और माता–पिता छोड़ गया। वह 4061/– रुपए प्रतिमास अर्जित कर रहा था और बेहतर भविष्य के साथ उसके वेतन के बढ़ने की हर संभावना थी। मोटर वाहन अधिनियम के उपबंधों और अन्य सुसंगत उपबंधों को ध्यान में रखते हुए इस बात पर विचार करते हुए कि पहले प्रतिवादी की लापरवाही के कारण शिकायतकर्ताओं को कितनी क्षति और उत्पीड़न हुआ होगा, हमारा विचार है कि 5 लाख रुपए के अवार्ड से न्याय की मांग पूरी होगी। इसलिए, राष्ट्रीय आयोग ने मुआवजे की राशि को 50,000/– रुपए से बढ़ाकर 5,00,000/– रुपए कर दिया। अपील मंजूर की गई।

सैलेश मुंजाल और अन्य बनाम अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान और अन्य

III (2004) सी.पी.जे. 93 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

शिकायतकर्ताओं की यह दलील है कि चूंकि उनके पुत्रों में से एक, दूसरी गर्भावस्था के समय थालासेमिया मेजर से पीड़ित था, इसलिए वे थालासेमिया मेजर के प्रसव–पूर्व निदान के संबंध में परामर्श के लिए और इस जांच के लिए कि क्या गर्भ में बच्चा उसी बीमारी से पीड़ित है, दिनांक 28.11.1989 को एम्स में गए। जांच करने पर विपक्षी पार्टी संख्या 2 ने थालासेमिया मेजर के लिए भ्रूण परीक्षण की सलाह दी और कोरिओ विल्लस नमूने (सी वी एस) के लिए उसे ट्यूबें दी और कोरिओनिक विल्लस बायप्सी (सी वी बी) कराने का निर्देश दिया। थालासेमिया मेजर के लिए प्रसव–पूर्व निदान हेतु शिकायतकर्ताओं से एम्स द्वारा 9500/– रुपए की राशि भी वसूल की गई। विपक्षी पार्टी संख्या 1 और 2 ने सी.वी.एस. नमूने नेशनल सेंटर फॉर हेमोग्लोबिनोपैथ्स इंस्ट्टियूट ऑफ मोलेक्यूलर मेडिसिन, ऑक्सफोर्ड, यू.के. के परामर्शदाता डॉ. जोहन एम. ओल्ड को भेजे। अपेक्षित परीक्षण करने के बाद डॉ. जोहन एम. ओल्ड ने अपने दिनांक 12.12.1989 के पत्र द्वारा विपक्षी पार्टी संख्या 2 को सूचित किया कि शिकायतकर्ता संख्या 2, अर्थात उसकी सी.वी.एस. निदान, बीटा थालासेमिया ट्रेट है और आगे सूचित किया कि रिपोर्ट तथा इनवायस बाद में भेजा जाएगा। दिनांक 19.12.1989 की भ्रूण निदान रिपोर्ट में सी.वी.एस. की सूचना दी गई। इस रिपोर्ट के आधार पर विपक्षी पार्टी 2 ने शिकायतकर्ता 2 को सलाह दी कि वह गर्भ को बनाए रखे। शिकायतकर्ता संख्या 2 ने दिनांक 25.6.1990 को एक लड़के को जन्म दिया। जब बच्चे का हिमोग्लोबिन स्तर नीचे चला गया तो शिकायतकर्ता विपक्षी पार्टी संख्या 2 के पास गए, जिसने दुबारा परिवार के सदस्यों के खून के नमूने लिए और परीक्षण के लिए यू.के. भेजे। डॉ. जोहन एम. ओल्ड ने सूचित किया कि बच्चे को होमोजीन्स बीटा थालासेमिया (थालासेमिया मेजर) है। यह भी उल्लेखनीय है कि विपक्षी पार्टी संख्या 2 ने अन्य बातों के साथ–साथ स्वीकार किया था कि दिनांक 19.12.1989 की पहली रिपोर्ट में गलती हुई थी, क्योंकि माता के टिश्यू से डी.एन.ए. संदूषित हो गया था। इन परिस्थितियों में शिकायतकर्ता मुआवजे के लिए राष्ट्रीय आयोग में गया।

मुद्दा

क्या उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 के अंतर्गत एम्स के खिलाफ शिकायत धार्य है?

निर्णय

प्रारंभिक दलील यह दी गई कि एम्स और सेवाएं प्रदान करने वाले डाक्टरों के खिलाफ शिकायत, अधिनियम के उपबंधों के अंतर्गत धार्य नहीं है। ऐसा प्रतीत होता है कि अधिनियम के निहितार्थ के बारे में कुछ भ्रान्ति है। यह बात उचित ढंग से समझी जानी चाहिए कि अधिनियम से कोई नए अधिकार या दायित्व सृजित नहीं होते। इसने केवल तीव्र उपाय और राहत के लिए उपभोक्ताओं के लाभ के लिए एक अतिरिक्त फोरम बनाया है। कानून के अंतर्गत, प्राइवेट, सार्वजनिक या सरकारी अस्पतालों में काम कर रहे चिकित्सा व्यवसायी अपनी ड्यूटियों में लापरवाही के लिए जिम्मेदार थे और हैं। इसका उपाय सिविल न्यायालय में जाना है। सिविल न्यायालय में जाने के उपाय के अलावा, उन उपभोक्ताओं, जो 'उपभोक्ता' और 'सेवा' खंड की परिभाषा में कवर होते हैं, के पक्ष में अतिरिक्त फोरम गठित किया गया है। उक्त दलील को मानने के लिए आयोग ने चर्चा के सुसंगत भाग और आई.एम.ए. बनाम वी.पी. शान्ता के मामले का हवाला दिया। उक्त मामले में न्यायालय ने यह विनिर्धारित किया कि किन परिस्थितियों में, चिकित्सा व्यवसायियों द्वारा प्रदान की गई सेवाएं, अधिनियम की धारा 2(1)(ण) के उपबंधों द्वारा कवर की गई नहीं मानी जाएंगी और किन मामलों में सरकारी अस्पतालों द्वारा कवर की जाएंगी या कवर नहीं की जाएंगी। धारा 2(1)(ण), जिसमें व्यवस्था है कि 'सेवा' में निःशुल्क प्रदान की गई कोई सेवा शामिल नहीं होगी, को ध्यान में रखते हुए, न्यायालय ने अस्पतालों और नर्सिंग होमों को निम्नलिखित तीन श्रेणियों में विभाजित किया है:

(i) जहां सेवाओं का लाभ उठाने वाले प्रत्येक व्यक्ति को उक्त सेवाएं निःशुल्क प्रदान की जाती हैं;

(ii) जहां सेवाओं का लाभ उठाने वाले प्रत्येक व्यक्ति द्वारा प्रभारों का भुगतान करना होता है; और

(iii) जहां सेवाओं का लाभ उठाने वाले व्यक्तियों द्वारा प्रभारों का भुगतान करना होता है, परन्तु व्यक्तियों, जो भुगतान नहीं कर सकते, की कुछ श्रेणियों को निःशुल्क सेवाएं प्रदान की जाती हैं।

पहली श्रेणी के लिए न्यायालय ने व्यवस्था दी कि डाक्टर और अस्पताल, जिन्होंने सेवाओं का लाभ उठाने वाले प्रत्येक व्यक्ति को किसी भी प्रकार के प्रभार के बिना सेवाएं प्रदान की, अधिनियम की धारा 2(1)(ण) में दी गई 'सेवा' शब्द की परिभाषा के दायरे में नहीं आएंगी। पंजीकरण के उद्देश्यों के लिए सांकेतिक धनराशि के भुगतान से इन डाक्टरों और अस्पतालों के संबंध में उपबंधों में कोई परिवर्तन नहीं होगा। दूसरी श्रेणी के लिए कोई विवाद नहीं हो सकता और यह व्यवस्था दी गई कि यह स्पष्ट रूप से अधिनियम की धारा 2(1)(ण) के दायरे में आएगी। तीसरी श्रेणी के लिए निम्नलिखित व्यवस्था दी गईः

"डाक्टरों और अस्पतालों की तीसरी श्रेणी, गरीब वर्ग के कुछ मरीजों को निःशुल्क सेवाएं उपलब्ध कराते हैं, परन्तु अधिकांश सेवाएं भुगतान के आधार पर प्रदान की जाती हैं। निःशुल्क सेवाएं प्रदान करने के लिए किया गया खर्च, भुगतान करने वाले मरीजों को प्रदान की गई सेवाओं से हुई आय से पूरा किया जाता है। भुगतान करने वाले मरीजों को डाक्टरों और अस्पतालों द्वारा प्रदान की गई सेवाएं निस्संदेह, अधिनियम की धारा 2(1)(ण) के दायरे में आती हैं।"

उपरोक्त सिद्धान्तों को ध्यान में रखते हुए, इस बात पर कोई विवाद नहीं किया जा सकता कि पंजीकरण शुल्क के भाग प्रतिवादी संस्थान, अस्पताल प्रभार, निदान प्रभार आदि मरीजों से वसूल करता है। एम्स के निदेशक डॉ. पी. वेणुगोपाल द्वारा दाखिल किए गए दिनांक 10 दिसम्बर, 2003 के हलफनामे में यह बात स्वीकार की गई है। इस बात का उल्लेख किया गया है कि हर साल लाखों लोग एम्स में इलाज कराते हैं। एम्स में चिकित्सा सेवाएं निःशुल्क प्रदान की जाती हैं। सभी रूटीन पैथोलोजी परीक्षण निःशुल्क किए जाते हैं। तथापि, नैदानिक किट, रिएजेंट्स, एक्सरे/सी.टी. फिल्म, कोंट्रास्ट मीडिया, रसायन, डाइज, ओरल/IV जैसे अन्य जटिल या मंहगे परीक्षणों में इस्तेमाल की गई उपभोज्य वस्तुओं की लागत, प्राइवेट वार्ड में भर्ती किए गए मरीजों से ली जाती है। प्राइवेट वार्डों में प्रभार केवल न्यूनतम लागतों को कवर करने के लिए लिए जाते हैं। जनरल वार्ड में भर्ती किए गए मरीजों को सैम्पल, न्यूनतम लागत पर, अर्थात लगभग निःशुल्क उपलबध कराए जाते हैं। लाभ कमाने का कोई सवाल ही नहीं है। तथापि, कार्डियो न्यूरो सेंटर में प्राइवेट वार्ड में भर्ती किए गए मरीजों को, प्राइवेट कमरों में उपलब्ध कराई जाने वाली अतिरिक्त सुविधाओं की उपभोज्य वस्तुओं की लागत की प्रतिपूर्ति के अलावा भुगतान करना होगा। हलफनामे में उपरोक्त बयान पर विचार करते हुए, यह मानना मुश्किल होगा कि एम्स द्वारा प्रदान की गई सेवाएं, अधिनियम की धारा 2(1)(ण) के उपबंधों द्वारा कवर नहीं होगी, क्योंकि सेवाएं निःशुल्क नहीं हैं – बहुत अधिक सीमा तक सहायताप्राप्त हो सकती हैं। उच्चतम न्यायालय द्वारा दिया गया

निर्णय सभी पर बाध्यकारी है और इसीलिए यह मानने के अलावा कोई विकल्प नहीं है कि एम्स द्वारा प्रदान की गई सेवाएं अधिनियम के उपबंधों में कवर होंगी, इस तथ्य के बावजूद कि इसकी स्थापना शिक्षा और अनुसंधान उद्देश्यों के लिए की गई है। इस कारण यह अपवर्जन खण्ड में कवर नहीं होती, अर्थात निःशुल्क सेवा प्रदान करना 'सेवा' शब्द में शामिल नहीं होता। इसलिए, पहली प्रारंभिक दलील को नामंजूर कर दिया गया।

दूसरे मुद्दे के लिए, सेवा में कमी को निर्धारित करने हेतु सुस्थापित कसौटी पर विचार किया गया – क्या किसी विवेकपूर्ण सक्षम चिकित्सा व्यवसायी के स्तर के अनुसार काम करने में विफलता रही? और क्या सतर्कता की उचित डिग्री का इस्तेमाल किया गया?

यह दलील दी गई कि विपक्षी पार्टियों ने एक उच्च आवर्धन वाली विच्छेदन माइक्रोस्कोप का इस्तेमल करके कोरिओनिक विल्लस नमूने में माता के टिशू से भ्रूण के टिशू को अलग करने का अपना काम अति सावधानीपूर्वक किया गया। शिकायतकर्ताओं और उनके दो पुत्रों से खून के 36 नमूने भी एकत्रित किए गए तथा खून के इन चार नमूनों से डी.एन.ए. निकाला गया। शिकायतकर्ता के परिवार के सदस्यों के खून से और कोरिओनिक विल्लस (भ्रूण) से प्राप्त डी.एन.ए. के नमूने का विवरण दिनांक 12.12.1989 के फैक्स द्वारा भेजे गए पत्र के जरिए विश्लेषण के लिए डॉ. जोह्न एम. ओल्ड को भेजे गए। डॉ. जोह्न एम. ओल्ड द्वारा सूचित किया गया कि श्रीमती कमलेश मुंजाल का सी.वी.एस. निदान बीटा थालासीमिया ट्रेट है। रिपोर्टों में, मातृत्व टिशुओं द्वारा सी.वी.एस. के संदूषण की मौजूदगी या संदेह का कोई उल्लेख नहीं था। इस चरण में डॉ. जोह्न ओल्ड ने सी.वी.एस. से डी.एन.ए. की असंतोषजनक तैयारी या मातृत्व संदूषण के बारे में कोई संदेह व्यक्त नहीं किया। यह मानना मुश्किल है कि कोई लापरवाही या गंभीर गलती हुई है या कोई ऐसी गलती हुई है जो विशेष दक्षता वाले किसी विवेकपूर्ण चिकित्सक द्वारा नहीं की जानी चाहिए थी। आमतौर पर हर सतर्कता बरती जाती है, परन्तु कभी–कभी प्राप्त किए गए सी.वी.एस. नमूने ऐसे होते हैं कि उनमें सम्मिश्रण हो जाता है। इससे यह बात स्पष्ट है कि कुछ मामलों में 0.5 प्रतिशत की भिन्नता की गलती होने की संभावना रहती है। इसके अलावा, यह दर्शाने के लिए रिकार्ड पर कोई साक्ष्य उपलब्ध नहीं है कि विपक्षी पार्टियों ने माता के टिशू से भ्रूण के टिशुओं को अलग करके डी.एन.ए. विश्लेषण करते समय उचित सावधानी या सतर्कता नहीं बरती। ऐसे मामलों में, इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए इप्सा लोक्युटूर के सिद्धान्त को लागू नहीं किया जा सकता कि विपक्षी पार्टी संख्या 2 टिशुओं को अलग करने में लापरवाह थी। चिकित्सा व्यवसायी के मामले में सुस्थापित कानून के अनुसार, लापरवाही का अर्थ है – सुसंगत समय पर, विवेकपूर्ण सक्षम

चिकित्सा व्यवसायी के मानक के अनुसार काम करने में विफल रहना। ऊपर चर्चा किए गए साक्ष्य से इस निष्कर्ष पर पहुंचना मुश्किल होगा कि माता के टिशू से भ्रूण के टिशुओं को अलग करने में हालांकि गलती या अपूर्णता रही है, परन्तु इसे विपक्षी पार्टी संख्या 2 की ओर से की गई लापरवाही माना जाएगा। निस्संदेह ऐसे मामले में गलती, अपूर्णता या चूक और लापरवाही में हल्का सा अंतर होता है। उपरोक्त दलील पर विचार करते हुए, परीक्षण में अपूर्णता के कारण उत्पन्न हुई अप्रत्याशित स्थिति के मौजूदा मामले में, न्याय करने के लिए, राष्ट्रीय आयोग ने निर्देश दिया कि विपक्षी पार्टी संख्या 1, इस विषय पर परामर्शदाता द्वारा उसकी आवधिक जांच करने के बाद, 'थालासीमिया मेजर' के लिए शिकायतकर्ता के पुत्र को बिना किसी प्रभार के दवाई देगा। खून चढ़ाने के लिए भी बिना किसी प्रभार के आवधिक रूप से दवाई दी जानी चाहिए, यदि शिकायतकर्ता द्वारा ऐसा करने का विकल्प चुना जाए, क्योंकि शिकायतकर्ताओं का विद्वान वकील, दूरी के आधार पर, खून चढ़ाने के लिए मरीज के दिल्ली आने में कठिनाई व्यक्त कर रहा था। किसी भी मामले में यदि शिकायतकर्ता के पुत्र द्वारा इलाज कराने का विकल्प चुना जाए तो यह इलाज उसे बिना किसी प्रतिबंध के तब तक दिया जाएगा जब तक उसे इसकी जरूरत है। इसके लिए, संबंधित डाक्टर और स्टाफ को विपक्षी पार्टी संख्या 1 के निदेशक द्वारा उचित निर्देश दिए जाएंगे। इन निर्देशों के साथ मूल याचिका का निपटान किया जाता है। हर्जे–खर्चे के बारे में कोई आदेश नहीं होगा।

तदनुसार शिकायत का निपटान किया गया।

श्रीमती सविता गर्ग बनाम निदेशक, नेशनल हार्ट इंस्टिट्यूट

IV (2004) सी.पी.जे. 40 (उच्चतम न्यायालय)

तथ्य

अपीलकर्ता के पति को डाक्टरी इलाज के लिए नेशनल हार्ट इंस्ट्टियूट में भर्ती किया गया और इंस्टिट्यूट के डाक्टरों की लापरवाही के कारण उसे उचित डाक्टरी इलाज नहीं मिल सका और अंततः उसकी मृत्यु हो गई। यह आरोप लगाया गया कि दिनांक 3.8.1994 को उसका आपरेशन किया गया था और उसे इंस्ट्टियूट के आई.सी.यू. में लाया गया था। उस दिन, अर्थात 3.8.1994 को मृतक के शरीर में आठ बोतल खून चढ़ाया गया और 4.8.1994 को भी खून की आठ बोतलों की मांग की गई। यह कहा गया कि मरीज को पीलिया हो गया है और संभवतः इसका कारण गलत खून का चढ़ाना या अतिरिक्त खून चढ़ाना है। आगे यह आरोप लगाया गया कि मृतक को सैप्टिक हो गया है। इसलिए, मृतक की एक टांग काटने के लिए बतरा अस्पताल के एक डाक्टर को बुलाया गया। इसके बाद, चूंकि इसे गुर्दा फेल होने का एक केस बताया गया, इसलिए मृतक को डायलसिस पर रखा गया। तथापि, दिनांक 9.8.1994 को मरीज को मृत घोषित कर दिया गया। इसलिए, राष्ट्रीय आयोग के समक्ष एक शिकायत दायर की गई, जिसमें 45,00,000/– रुपए की राशि का दावा किया गया, परन्तु मामले का निपटान आयोग द्वारा अपने दिनांक 6.2.2003 के आदेश द्वारा किया गया, जिसमें व्यवस्था दी गई कि इलाज करने वाले डाक्टरों को मुकदमें की एक पार्टी न बनाए जाने के कारण मूल याचिका धार्य नहीं है। इस प्रकार, पार्टियों के शामिल न किए जाने के कारण शिकायत को खारिज कर दिया गया। इस आदेश से व्यथित शिकायतकर्ता ने उच्चतम न्यायालय में मौजूदा अपील दायर की।

मुद्दा

क्या इलाज करने वाले डाक्टरों को एक पार्टी के रूप में शामिल न करने के परिणामस्वरूप मूल याचिका को रद्द किया जा सकता है?

निर्णय

माननीय उच्चतम न्यायालय ने व्यवस्था दी कि उपभोक्ता फोरम बनाने का उद्देश्य उपभोक्ताओं के हितों की बेहतर ढंग से रक्षा करना है और मामले को शार्ट सर्किट करना या तकनीकी आधारों पर दावे में दोष बताना नहीं है। वास्तव में जब मरीज को मौजूदा संस्थान, जैसे

अत्यधिक वाणिज्यिक अस्पताल में भर्ती किया गया था, उस समय अस्पताल के प्राधिकारियों द्वारा पूर्ण रूप से मरीज की जांच किए जाने की आवश्यकता थी। मरीज के परीक्षण के बाद संस्थान ही इस बात का पता लगा सकता था कि मरीज किस बीमारी से पीड़ित है और ऐसा कौन सा डाक्टर है जो उसे सबसे अच्छा इलाज दे सकता है। मरीज के लिए यह बहुत मुश्किल बात है कि वह कोई ऐसा विवरण दे कि कौन सा डाक्टर उसका इलाज कर सकता है और कि क्या डाक्टर लापरवाह था या नर्सिंग स्टाफ लापरवाह था? यह बहुत मुश्किल बात है कि मरीज या उसके रिश्तेदार दावे की याचिका में पार्टियों को मुकदमें में शामिल करें। यह एक बहुत मुश्किल बात होगी और यदि इस आधार पर दावे को नामंजूर किया जाता है तो यह अधिनियम के उपबंधों का पूरी तरह दुरुपयोग होगा जिससे दावेदार लाभ से वंचित रह जाएंगे। सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 1 नियम 10 के अंतर्गत भी आवश्यक पार्टी को मुकदमे में शामिल न करने के बारे में यह उल्लेख किया गया है कि कोई भी मुकदमा पार्टियों को शामिल न करने या गलत पार्टियों को शामिल करने के कारण विफल नहीं होगा। एक बार मरीज को अस्पताल में भर्ती कर लिए जाने के बाद अस्पताल की यह जिम्मेदारी है कि वह सर्वोत्तम सेवाएं प्रदान करे और यदि वह ऐसा नहीं करता है तो अस्पताल तकनीकी आधारों पर इस बात का सहारा नहीं ले सकता कि संबंधित सज्जन या नर्सिंग स्टाफ, जैसा भी मामला हो, को मुकदमे में शामिल नहीं किया गया है। इसलिए, आवश्यक पार्टियों को शामिल न किए जाने के सवाल पर आयोग द्वारा मूल याचिका को संक्षिप्त रूप से खारिज कर दिया जाना उचित नहीं था। यदि शिकायतकर्ता आरोप को सिद्ध साबित करने में विफल रहता है तो शिकायत भी विफल हो जाएगी, परन्तु आवश्यक पार्टियों के शामिल न किए जाने के आधार पर शिकायत विफल नहीं होगी। परन्तु साथ ही साथ, अस्पताल इलाज करने वाले डाक्टर को पेश करके बचाव में अपनी यह जिम्मेदारी पूरी कर सकता है कि पूरी सावधानी और सतर्कता बरती गई है और इसके बावजूद भी मरीज की मृत्यु हो गई। आवश्यक पार्टियों के मुकदमे में शामिल न किए जाने के कारण अस्पताल/संस्थान को हानि नहीं पहुंच रही थी और आयोग को अस्पताल के खिलाफ कार्यवाही करनी चाहिए थी। अन्यथा भी इस बात को उचित ठहराने के लिए कि इस मामले में कोई लापरवाही नहीं की गई, संस्थान को इलाज करने वाले संबंधित चिकित्सक को पेश करना चाहिए था और यह साक्ष्य पेश करने चाहिएं थे कि उनके द्वारा या उनके स्टाफ के द्वारा सभी सावधानी और सतर्कता बरती गई। इसलिए, इलाज करने वाले डाक्टर को एक पार्टी के रूप में मुकदमे में शामिल न करने से कोई अन्तर नहीं पड़ता। एक बार यह आरोप लगाने पर कि मरीज को एक विशेष अस्पताल में भर्ती किया गया था और इस बात से संतुष्ट करने के लिए साक्ष्य पेश किया गया है कि उसकी मृत्यु उचित देखभाल में कमी और आपरवाही के कारण हुई है

तो इस बात को न्यायोचित ठहराने की जिम्मेदारी अस्पताल पर होगी कि इलाज करने वाले डाक्टर/ या अस्पताल की ओर से कोई लापरवाही नहीं की गई थी। इसलिए, किसी भी मामले में अस्पताल ही यह कहने की बेहतर स्थिति में होता है कि किस तरह की सावधानी बरती गई थी और मरीज को कौन सी दवाई दी गई थी। इस बात से संतुष्ट करना अस्पताल की ड्यूटी है कि देखभाल में या इलाज करने में कोई कमी नहीं की गई थी। ऐसे अस्पताल प्रतिष्ठित अस्पताल होते हैं और लोग इनसे बेहतर तथा दक्ष सेवा की अपेक्षा करते हैं। यदि संविदा के आधार पर नियुक्त किए गए या कार्य के आधार पर नियुक्त किए गए अपने डाक्टरों के माध्यम से ड्यूटियों का निवर्हन करने में अस्पताल असफल रहते हैं, तो अस्पताल को ही इसका औचित्य सिद्ध करना होगा और किसी डाक्टर विशेष को मुकदमे में शामिल न करने की अपनी जिम्मेदारी से अस्पताल मुक्त नहीं होगा। इसके परिणामस्वरूप याचिकाकर्ता को कानून के अनुसार मामले पर निर्णय देने के लिए राष्ट्रीय आयोग में वापस भेजा जाता है।

अपील मंजूर की गई।

डॉ. सी.सी. चौबाल बनाम पंकज श्रीवास्तव

IV (2003) सी.पी.जे. 111 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

याचिकाकर्ता – डॉ. के खिलाफ डाक्टरी लापरवाही के एक मामले में सह–प्रतिवादी के रूप में बीमा कम्पनी को मुकदमे में शामिल करने के लिए उसके द्वारा एक आवेदन दाखिल किया गया। जिला फोरम ने उसका आवेदन खारिज कर दिया और उस आदेश के खिलाफ की गई अपील भी राज्य आयोग द्वारा खारिज कर दी गई। इसलिए, मौजूदा पुनर्विचार याचिका दायर की गई।

मुद्दा

क्या बीमा कम्पनी को सह–प्रतिवादी के रूप में मुकदमे में शामिल किया जा सकता है?

निर्णय

राष्ट्रीय आयोग ने अवकलोकन किया कि बीमा कम्पनी संभवतः आवश्यक पार्टी नहीं है, परन्तु क्योंकि डाक्टर के खिलाफ दावे को कवर किया जाएगा, इसलिए यह निश्चित रूप से एक उचित पार्टी है, यदि उसके खिलाफ कोई डाक्टरी लापरवाही पाई जाती है। यह अधिक उपयुक्त होगा कि यदि बीमा कम्पनी को सह–प्रतिवादी बना दिया जाए। बाद में, यदि डाक्टरों के खिलाफ कोई आदेश पारित किया जाता है तो शिकायतकर्ता को बीमा कम्पनी की पालिसी की धनराशि की सीमा तक मुआवजे की राशि प्राप्त करने में कोई परेशानी नहीं होगी। इस प्रकार, जिला फोरम और राज्य आयोग के आदेश रद्द किए जाते हैं और डाक्टर का आवेदन मंजूर किया जाता है। बीमा कम्पनी को सह–प्रतिवादी के रूप में मुकदमे में शामिल किया जाएगा। शिकायत में याचिकाकर्ता द्वारा नए सिरे से पार्टियों का आवेदन दाखिल किया जाएगा और इसके बाद प्रतिवादी को नोटिस जारी किया जाएगा तथा इसके बाद शिकायत का कानून के अनुसार निपटान किया जाएगा।

तदनुसार, पुनर्विचार याचिका का निपटान किया जाता है।

सुश्रुषा सिटीजन्स को–आपरेटिव अस्पताल और अन्य बनाम मुरलीधर एकनाथ मैसोर

II (2003) सी.पी.जे. 127 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

डाक्टरी लापरवाही के कारण सेवा में कमी का आरोप लगाते हुए प्रतिवादी द्वारा एक शिकायत दायर की गई। राज्य आयोग ने दिनांक 29.10.1994 के अपने आदेश में याचिकाकर्ता को व्यावसायिक लापरवाही का दोषी माना। शिकायत को मंजूर कर लिया गया और पहले याचिकाकर्ता (अस्पताल) को निर्देश दिया गया कि वह मुआवजे के रूप में 3,00,000/– रुपए का भुगतान करे और दूसरे याचिकाकर्ता डाक्टर को आदेश दिया गया कि वह मुआवजे के रूप में 50,000/– रुपए का भुगतान करे। दोनों याचिकाकर्ताओं ने राष्ट्रीय आयोग के समक्ष अपील दायर की और दिनांक 13.2.1995 के अंतरिम आदेश द्वारा इस शर्त पर स्थगन आदेश दिया गया कि याचिकाकर्ता सावधि जमा के रूप में किसी राष्ट्रीयकृत बैंक में धनराशि जमा करेगा, जो शिकायतकर्ता के नाम में होगी और उक्त सावधि जमा रसीद (एफडीआर) राज्य आयोग, मुम्बई की रजिस्ट्री में जमा की जाएगी। बाद में, याचिकाकर्ताओं की अपील राष्ट्रीय आयोग द्वारा खारिज कर दी गई और राज्य आयोग के आदेश की पुष्टि कर दी गई। इसके बाद, शिकायतकर्ता ने निष्पादन याचिका दायर की और राज्य आयोग ने निर्देश दिया कि मुआवजे की धनराशि वसूल किए जाने तक 18 प्रतिशत प्रतिवर्ष ब्याज के साथ अवार्ड की गई पूरी धनराशि का भुगतान किया जाए। इस आदेश के खिलाफ पुनर्विचार याचिका दायर की गई।

मुद्दे

यह दलील दी गई कि एक बार याचिकाकर्ताओं को राज्य आयोग के पास रखी गई एफ. डी.आर. लेने की बात कहे जाने पर और उस एफ.डी.आर. पर अर्जित पूरा ब्याज शिकायतकर्ता को ही भुगतानयोग्य था और 18 प्रतिशत प्रतिवर्ष ब्याज नहीं।

निर्णय

राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि यह दलील स्वीकार्य नहीं है। याचिकाकर्ता के वकील को कुछ भ्रान्ति है। जहां सिविल प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत डिक्री के हिसाब से धनराशि जमा की जाती है, ऐसी स्थिति में उस धनराशि पर ब्याज नहीं मिलता, परन्तु यहां ऐसी स्थिति नहीं है।

याचिकाकर्ता ने इस विवादित आदेश पर स्थगन की मांग की और एफ.डी.आर. ले लेने की शर्त पर स्थगन आदेश मंजूर कर लिया गया, परन्तु वह धनराशि राज्य आयोग में जमा नहीं की गई और शिकायतकर्ता को उक्त धनराशि निकालने का अधिकार नहीं था। राष्ट्रीय आयोग के आदेश से उक्त राशि की सुरक्षा हो जाती, यदि अंततः अपील की अनुमति दे दी जाती। शिकायतकर्ता द्वारा दायर की गई शिकायत पर पारित किए गए राज्य आयोग के आदेश और राष्ट्रीय आयोग के समक्ष रखे गए आदेश से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि ब्याज 18 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से भुगतानयोग्य है। इस प्रकार, राज्य आयोग का दृष्टिकोण सही है। पुनर्विचार याचिका में कोई दम नहीं है और इसलिए तद्नुसार, उसे खारिज किया जाता है।

बम्बई अस्पताल और चिकित्सा अनुसंधान केन्द्र बनाम कृष्ण बिहारी एम. अग्रवाल

IV (2003) सी.पी.जे. 61 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

मृतक श्रीमती कमलेश अग्रवाल का 5.11.1993 से सीने में दर्द, रेट्रोस्टर्नल भारीपन की शिकायत थी। यह शिकायत अधिक पसीने, उल्टी, दोनों ऊपरी अंगों, पीठ और जबड़े में विकिरणकारी दर्द के साथ बढ़ गई। उसका बम्बई के डॉक्टर रेन्स अस्पताल में इलाज चल रहा था। दिनांक 8.11.1993 को चूंकि मरीज बेचैन हो गई और उसका ई.सी.जी. कराया गया, जिसमें हृदय के पूरी तरह अवरुद्ध होने का पता चला। वह मधुमेह से पीड़ित थीं, जिसके लिए उसे दाबेनेसे गोली दी जा रही थी और उसे बेहतर नियंत्रण के लिए बम्बई अस्पताल में भेजा गया। अस्पताल में अन्य के परीक्षणों के साथ–साथ, ब्लड शूगर का परीक्षण भी किया गया। अपीलकर्ता अस्पताल की दिनांक 8.11.1993 की रिपोर्ट में दर्शाया गया कि ब्लड शूगर 734 एम.जी.एम. प्रति 100 सी.सी. है। यह आरोप लगाया गया कि आई.सी.यू. में लगभग 15 घंटे रहने के दौरान मरीज को किसी वरिष्ठ डाक्टर ने नहीं देखा और पूरी तरह यह पता लग जाने के बाद कि मरीज को मधुमेह है, दिनांक 8.11.1993 को अपराह्न 7.00 बजे से दिनांक 9.12.1993 को अपराह्न 8.00 बजे के बीच मधुमेह को नियंत्रित करने के लिए कोई इन्सुलिन नहीं दिया गया। दिनांक 9.12.1993 को मरीज की मृत्यु हो गई। मृत्यु का कारण 'कार्डियो–रिस्पारेटरी फेल्योर' दिया गया। आसन्न कारण 'एक्यूट म्यो कार्डियल इन्फ्रैक्शन' दिया गया। शिकायतकर्ता (मृतक के पति) द्वारा आरोप लगाया गया कि मधुमेह का नियंत्रण न करने के कारण उसकी पत्नी की मृत्यु हुई है। पार्टियों की सुनवाई करने और रिकार्ड पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन करने के बाद, राज्य आयोग ने व्यवस्था दी कि अपीलकर्ता ने लापरवाही की है और मुआवजे के रूप में 4.50 लाख रुपए का अवार्ड दिया गया। इसलिए, मौजूदा अपील की गई।

मुद्दे

पहला यह कि याचिकाकर्ताओं के खिलाफ लापरवाही साबित करने के लिए लापरवाही की किसी विशिष्ट बात का आरोप नहीं लगाया गया, और दूसरा यह कि शिकायत पार्टियों को शामिल न किए जाने के कारण खारिज कर दी जानी चाहिए।

निर्णय

पार्टियों को शामिल न करने के संबंध में राष्ट्रीय आयोग ने अवलोकन किया कि डाक्टर तिवारी, जो एक हृदयरोग विशेषज्ञ, परामर्शदाता हैं, जिसकी देखरेख में मृतक का इलाज चल रहा था को पार्टी नहीं बनाया गया। अस्पताल के रिकार्ड से यह बात स्पष्ट है कि मरीज को लगभग 7.00 बजे अपराह्न अस्पताल में लाया गया था और डाक्टर तिवारी केवल कुछ मिनटों के लिए ही लगभग 10.30 बजे सुबह अस्पताल में आए थे। शिकायतकर्ता ने नहीं बल्कि अस्पताल ने उन्हें बुलाया था। मरीज को देखने के बाद डाक्टर तिवारी के बारे में न तो कुछ सुना गया और न ही उन्हें वहां देखा गया। राज्य आयोग ने अपीलकर्ता की इस दलील को नामंजूर करने में कोई गलती नहीं की कि डाक्टर तिवारी कोई आवश्यक या उचित पार्टी नहीं थे। राष्ट्रीय आयोग ने भी इस दलील को नामंजूर कर दिया और व्यवस्था दी कि जो कुछ भी अस्पताल के अंदर हुआ है, उस सबके लिए अस्पताल ही पूरी तरह जिम्मेदार है। डाक्टर तिवारी को अनावश्यक रूप से इस मामले में घसीटा जा रहा है ताकि अस्पताल द्वारा उचित इलाज न करके की गई गलतियों और लापरवाही के कार्यों को छिपाया जा सके।

डाक्टरी लापरवाही के संबंध में अपीलकर्ता की यह जिम्मेदारी नहीं थी कि मरीज को इन्सुलिन दिया जाए। चिकित्सा संबंधी पुस्तकों और डाक्टर रे ने, जो डी.एम. कार्डियोलोजी थी, के शपथपत्र से यह बात स्पष्ट है कि मधुमेह को नियंत्रित करने के लिए इन्सुलिन दिया जाना चाहिए था, परन्तु ऐसा नहीं किया गया। जो बात स्पष्ट है, वह यह है कि दिनांक 8–9 नवम्बर,1993 की रात के दौरान स्टाफ/डाक्टरों के यह प्रयास थे कि वे रक्तचाप को नियंत्रित रखें और मधुमेह के नियंत्रण की पूरी तरह अनदेखी की गई। इसके अलावा, अवसर दिए जाने के बावजूद साक्ष्य के रूप में अपीलकर्ता/विपक्षी पार्टी द्वारा कोई शपथपत्र अपने समर्थन में दाखिल नहीं किया गया, न तो अपनी ओर से और न ही विशेषज्ञों की ओर से। याचिकाकर्ता की ओर से की गई लापरवाही साबित होती है और राज्य आयोग के आदेश को परिपुष्टि की जाती है।

तद्नुसार, अपील हर्जे–खर्चे के साथ खारिज की गई।

डॉ. जे.जे. मरचेन्ट और अन्य बनाम श्रीनाथ चतुर्वेदी

III (2002) सी.पी.जे. 8 (उच्चतम न्यायालय)

तथ्य

शिकायतकर्ता के पुत्र, जिसकी आयु 21 वर्ष थी, को स्लिप डिस्क के आपरेशन के लिए दिनांक 4.8.1992 को बीच कैन्डी अस्पताल, मुम्बई में भर्ती किया गया था, क्योंकि वह पीठ के दर्द से पीड़ित था। यह बताया गया कि वह व्यवसाय प्रबंधन में डिग्री प्राप्त करने के बाद जून, 1992 में यू.एस.ए. से लौटा था। दिनांक 29 अगस्त, 1992 को अस्पताल में ही उसकी मृत्यु हो गई। मृतक के पिता ने डाक्टरी लापरवाही का आरोप लगाया। राष्ट्रीय आयोग में शिकायत दायर करने से पहले, शिकायतकर्ता ने भारतीय दंड संहिता की धारा 304–क/201 और 203 के अंतर्गत आपराधिक शिकायत भी दर्ज कराई थी। वह मुकदमा भी लम्बित है। विपक्षी पार्टी ने राष्ट्रीय आयोग के समक्ष प्रार्थना की कि तथाकथित डाक्टरी लापरवाही के लिए दायर की गई शिकायत, खारिज की जाए, क्योंकि उनके अनुसार, कानून और तथ्यों के पेचीदा सवाल उत्पन्न होते हैं जिन्हें सिविल न्यायालय द्वारा तय किया जा सकता है या विकल्प के रूप में आपराधिक मुकदमे के लम्बित रहने के दौरान कार्यवाही स्थगित रखी जा सकती है। इस आवेदन को आयोग द्वारा नामंजूर कर दिया गया। इसलिए, उच्चतम न्यायालय के समक्ष अपील दायर की गई।

मुद्दे

पहला यह कि क्या उपभोक्ता फोरम या आयोग द्वारा मामलों के निपटान में होने वाला विलम्ब, शिकायतकर्ता को सिविल न्यायालय में जाने के निर्देश का आधार बनेगा? दूसरा यह है कि क्या तथ्यों के ऐसे पेचीदा सवाल संक्षिप्त कार्यवाही में तय नहीं किए जा सकते?

निर्णय

पहले मुद्दे के लिए उच्चतम न्यायालय ने अवलोकन किया कि अधिनियम के अंतर्गत राष्ट्रीय आयोग का अध्यक्ष, इस न्यायालय का कोई सेवानिवृत्त न्यायाधीश होना चाहिए। वे तथ्यों या कानून के पेचीदा मुद्दों पर निर्णय देने के लिए सक्षम होते हैं। इसलिए, यह मानना उचित नहीं है कि ऐसे मामलों में जहां विशेषज्ञों पर लापरवाही का आरोप लगाया गया हो, उपभोक्ताओं को यह निर्देश देना चाहिए कि वे सिविल न्यायालय में जाएं। आयोग का यह विवेकाधिकार है कि वे शिकायतकर्ता को उपयुक्त राहत के लिए सिविल न्यायालय में जाने के लिए कहें। दूसरा मुद्दा भी नामंजूर किया

जाता है, क्योंकि अधिनियम के अंतर्गत संक्षिप्त या तीव्र मुकदमे के लिए नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्तों के अनुरूप विस्तृत प्रक्रिया दी गई है। इसलिए, केवल इसलिए क्योंकि यह उल्लेख किया गया है कि आयोग या फोरम को संक्षिप्त मुकदमा चलाना चाहिए, को उपभोक्ता को यह निर्देश देने का आधार नहीं बनाया जा सकता कि वह सिविल न्यायालय में जाए। मुकदमे के न्यायपूर्ण और तर्कसंगत होने के लिए अपनी तरफ से व्यथित पक्ष को परेशान करने के लिए, मुकदमे के पक्षकारों को पर्याप्त अवसर देने वाली लम्बे समय से चल रही विलम्बित प्रक्रिया को अपनाना आवश्यक नहीं है। यह बात ध्यान में रखी जानी चाहिए कि विधानपालिका ने उपभोक्ताओं को वैकल्पिक, प्रभावोत्पादक, सरल, सस्ता और तीव्र उपचार उपलब्ध कराया है और उन आधारों पर इसे आवश्यक नहीं बनाया जाना चाहिए। इसके अलावा, विलम्ब से बचने के लिए जिला फोरम या आयोग भारी खर्च लगाने की प्रक्रिया तैयार कर सकता है, जहां पार्टी द्वारा स्थगत की मांग के लिए, अधिनियम और नियमों के अंतर्गत निर्धारित की गई प्रक्रिया का पूरी तरह पालन किया जाना चाहिए।

मौजूदा मामले में उच्चतम न्यायालय ने, निर्धारित की गई अवधि के अंदर शिकायतों का निपटान करने में होने वाले विलम्ब से बचने के लिए उपयुक्त कदम उठाने हेतु राष्ट्रीय आयोग के लिए निम्नलिखित दिशानिर्देश दिए हैं:

(क) प्रशासनिक नियंत्रण रखने के लिए, यह देखा जा सकता है कि सभी स्तरों पर सदस्यों के रूप में सक्षम व्यक्तियों को नियुक्त किया जाए ताकि सदस्यों के न होने के कारण फोरम या आयोग के गठन में कोई विलम्ब न हो;

(ख) यह इस बात पर निगरानी रखेगा कि बचाव संबंधी बयान दाखिल करने और शिकायतों के निपटान के लिए निर्धारित की गई समय–सीमा का पूरी तरह पालन किया जाए;

(ग) यह इस बात को देखेगा कि शिकायतों और बचाव संबंधी बयानों के साथ वह दस्तावेज और हलफनामें हों, जिन्हें पार्टियों द्वारा आधार बनाया गया है;

(घ) ऐसे मामलों में, जहां उन व्यक्तियों के साथ जिरह आवश्यक है जिन्होंने हलफनामें दाखिल किए हैं, उन व्यक्तियों को पूछे जाने वाले जिरह के सवाल उन व्यक्तियों को दिए गए हों, जिन्होंने अपने हलफनामें दाखिल किए हैं और उत्तर भी हलफनामों में ही होने चाहिएं;

(ड.) ऐसे मामलों में, जहां आयोग व्यक्तिगत रूप से गवाहों के साथ ज़िरह करना उचित समझे, विडियो कान्फ्रेंस या टेलीफोनिक कान्फ्रेंस की व्यवस्था उन व्यक्तियों के लिए कर सकता है

जो इसके लिए आवेदन करें या आयोग के माध्यम से इस प्रकार की ज़िरह की जा सकती है। यह प्रक्रिया डाक्टरों जैसे विशेषज्ञों के साथ की जाने वाली ज़िरह में सहायक हो सकती है।

इस प्रकार, उपरोक्त निर्देशों के साथ अपील का निपटान किया जाता है।

भजन लाल गुप्ता और अन्य बनाम मूलचंद खैराती राम अस्पताल और अन्य

I (2001) सी.पी.जे. 31 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

मृतक के पिता स्वर्गीय विजय कुमार द्वारा एक शिकायत दायर की गई। मृतक जब 27 जून, 1992 को उठा तो उसे यह शिकायत थी कि वह अपने पैरों को हिला–ढुला नहीं सकता था और उसकी टांगों में दर्द था। मृतक को प्रतिवादी संख्या 1 (अस्पताल) में ले जाया गया और कैजुअल्टी में भर्ती किया गया। तंत्रिका विभाग के डाक्टर ने मरीज की जांच की और उसका ई.सी. जी. किया, बुखार और रक्तचाप नापा। जब डाक्टर मरीज की जांच कर ही रहा था, मरीज को सांस लेने में समस्या हो गई और उसके आक्सीजन मास्क से भी कोई राहत नहीं मिली। डाक्टर की राय थी कि मरीज को आई.सी.यू में भर्ती कर दिया जाए। इसी दौरान, प्रभारी डाक्टर, प्रतिवादी संख्या 4, जिसके अधीन मरीज को भर्ती किया गया था, मृतक को देखने के लिए गया। जांच करने के बाद प्रतिवादी संख्या 4 ने इस बात की पुष्टि की कि मरीज को आई.सी.सी.यू. में भेज दिया जाए। इसके बाद प्रतिवादी संख्या 5, जो तंत्रिका विभाग में एक वरिष्ठ परामर्शदाता थे, की भी सलाह ली गई। उन्होंने कुछ दवाइयां लिखी और उनका विचार था कि यह गंभीर मामला है और इलाज का एक नया तरीका, अर्थात् प्लाज्मा फेरासिस का उपयोग किया जाए। प्रतिवादी संख्या 5 के अनुसार, यह सुविधा जी.बी. पंत अस्पताल और सफदरजंग अस्पताल में उपलब्ध थी। उसने शिकायतकर्ता को एक पत्र दिया, जो जी.बी. पंत अस्पताल के डॉ. एम.एम. मेंहदीरत्ता को संबोधित था और उसके बाद वह चला गया। अब यह मामला प्रतिवादी संख्या 4, जो प्रभारी डाक्टर था, की देखरेख और उसकी यूनिट के स्टाफ की देखरेख में था। इसके अलावा, प्लाज्मा फेरासिस का उक्त इलाज प्रतिवादी संख्या 1 में उपलब्ध नहीं था। जब शिकायतकर्ता डॉ. एम.एम. मेंहदीरत्ता, प्रतिवादी संख्या 6 के पास गया, तो उसने कहा कि वह मरीज को भर्ती नहीं कर सकता, क्योंकि कोई बिस्तर उपलब्ध नहीं है और यह भी बताया कि मरीज को सोमवार को लाया जाए। जब शिकायतकर्ता अस्पताल में वापस आया तो उसने पाया कि उसके पुत्र की पहले ही मृत्यु हो चुकी है।

मुद्दा

क्या प्रतिवादी की तरफ से कोई डाक्टरी लापरवाही की गई थी?

निर्णय

डाक्टरी लापरवाही की कसौटी का मामला वह होता है कि जो चिकित्सा पद्धति अपनाई जानी चाहिए थी, उसे नहीं अपनाया गया या जो कुछ किया गया, वह दिशानिर्देशों के विपरीत था। साथ ही साथ, यह भी एक सुस्थापित सिद्धान्त है कि विशेषज्ञ को मरीज के इलाज की अद्यतन तकनीकों की जानकारी होनी चाहिए और यदि उसे यह जानकारी नहीं है तो उसे अपने व्यवसाय में प्रैक्टिस में लापरवाही माना जाएगा। इस मामले के तथ्यों को देखते हुए, राष्ट्रीय आयोग ने पाया कि प्रतिवादी संख्या 4 ने आई.सी.सी.यू. के प्रभारी स्टाफ को विस्तृत निर्देश दिए थे और प्रतिवादी संख्या 5 को यह सुझाव दिया था कि मरीज को इनट्यूबेट किया जाए। इस बात में कोई संदेह नहीं है कि मरीज को आक्सीजन पर रखा गया था और आई.सी.सी.यू. में उस पर नजर रखी जा रही थी, फिर भी दो बड़ी गंभीर गलतियां की गई थीं। पहली गलती यह थी कि नर्सों ने यह नहीं देखा था कि आक्सीजन ट्यूब बाहर निकल गई थी और दूसरी गलती यह थी कि मरीज को इनट्यूबेट करने में लगभग दो घंटे का विलंब हो गया था। इस प्रकार की गंभीर गलतियों के मामले में अतिरिक्त सावधानी और सतर्कता बरते जाने की आवश्यकता है। इसकी कमी के गंभीर परिणाम हो सकते हैं, जैसा कि इस मामले में हुआ है। नियमानुसार, गंभीर मरीज को आई.सी.सी.यू. में भर्ती किया जाता है और स्टाफ से यह अपेक्षा की जाती है कि वह अतिरिक्त सावधानियां बरतें। मृतक तीव्र पोलीरेडीकुलोन्यूरोपैथी से पीड़ित था और यह बहुत दुर्भाग्यपूर्ण है कि यह बीमारी इतनी तेजी से बढ़ी कि मरीज को दूसरे सेंटर में ले जाए जाने से पहले, जहां प्लाज्मापैरासिस का अद्यतन इलाज उपलब्ध था, मरीज की मृत्यु हो गई। कोई निश्चित रूप से यह नहीं कह सकता कि यदि मरीज को समय से इनक्युबेशन दे दिया जाता, तो उसे बचाया जा सकता था या कम से कम उसको तब तक बचाया जा सकता था जब तक उसे दूसरे अस्पताल में ले जाया जाता। फिर भी आक्सीजन ट्यूब बाहर निकल जाने को न देखने की विलंब, जो जीवन समर्थक पद्धति का एक तरीका है, बहुत गंभीर मामले हैं, जिसके लिए अस्पताल प्रशासन अपनी जिम्मेदारी से नहीं बच सकता। प्रतिवादी संख्या 4 और 5 की तरफ से कोई निर्दयता नहीं दिखाई गई। इस प्रकार, यह माना गया कि अस्पताल याचिकाकर्ता को मुआवजा देने के लिए जिम्मेदार है और 2,00,000/– रुपए की धनराशि शिकायतकर्ताओं को अवार्ड की गई।

तदनुसार, शिकायत का निपटान किया गया।

हरियाणा राज्य सरकार और अन्य बनाम श्रीमती संतरा

I (2000) सी.पी.जे. 53 (उच्चतम न्यायालय)

तथ्य

हरियाणा सरकार द्वारा 'नसबंदी योजना' चलाई गई और इस योजना का लाभ उठाते हुए श्रीमती संतरा 1988 में अपनी नसबंदी के लिए गुड़गांव के मुख्य चिकित्सा अधिकारी के पास गई। उसका एक आपरेशन किया गया और इस संबंध में उसे एक प्रमाणपत्र प्रदान किया गया। परन्तु आपरेशन के बाद भी वे गर्भवती हो गईं। जब उसने मुख्य चिकित्सा अधिकारी और जनरल अस्पताल, गुड़गांव के अन्य डाक्टर से सम्पर्क किया तो उसे सूचित किया गया कि वह गर्भवती नहीं हैं। दो महीने के बाद जब गर्भावस्था दिखाई देने लगी तो वह दोबारा उन डाक्टरों के पास गई, जिन्होंने उस समय उसे बताया था कि नसबंदी का आपरेशन सफल नहीं था। गर्भवती होने का पता चलने के बाद उसने गर्भपात करने का अनुरोध किया परन्तु उसे गर्भपात न कराने की सलाह दी गई, क्योंकि यह उसके जीवन के लिए खतरनाक साबित हो सकता था। अंततः, उसने एक बालिका को जन्म दिया। इन परिस्थितियों में, श्रीमती संतरा द्वारा नसबंदी आपरेशन में की गई डाक्टरी लापरवाही के लिए मुकदमा दायर किया गया और हर्जाने के रूप में 2,00,000/– रुपए का दावा किया, जिसके विपरीत 54,000/– रुपए की राशि की डिक्री दे दी गई। इस डिक्री के खिलाफ दो अपीलें दायर की गईं – एक अपील जिला जज, गुड़गांव के न्यायालय में दायर की गई, जिसका निपटान अपर जिला जज द्वारा किया गया। दूसरी अपील हरियाणा सरकार द्वारा दायर की गई, जिसको पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय द्वारा संक्षिप्त विचारण के बाद खारिज कर दिया गया। इन परिस्थितियों में मौजूदा विशेष अनुमति याचिका इस न्यायालय में दायर की गई।

मुद्दा

'अनचाहे' बच्चे को पालने में किए जाने वाले खर्च को कौन वहन करेगा?

निर्णय

बच्चे के भरण–पोषण में स्पष्ट रूप से भोजन, कपड़े, आवास, शिक्षा, डाक्टरी इलाज शामिल होंगे। बच्चे के भरण–पोषण की जिम्मेदारी कानूनी होने के साथ–साथ व्यक्तिगत भी होती है। परन्तु

वर्तमान परिस्थितियों में, एच.ए.एम.ए. की धारा 73 यहां लागू नहीं होती, क्योंकि बच्चे का भरण–पोषण करने की कानूनी जिम्मेदारी, उचित देखभाल और जिम्मेदारी के साथ नसबंदी का आपरेशन न करने में की गई डाक्टरी लापरवाही के कारण हर्जाने का दावा करने में बाधा नहीं बनेगी। रिकार्ड पर उपलब्ध साक्ष्य से यह सिद्ध हो गया है कि श्रीमती संतरा का नसबंदी का आपरेशन पूरी तरह नहीं किया गया था और इस आपरेशन में केवल दाईं फाल ओपिनियन ट्यूब का ही आपरेशन किया गया था और बाई ट्यूब को अछूता छोड़ दिया गया था। यह चिकित्सा अधिकारिकयों की तरफ से लापरवाही का एक स्पष्ट मामला था। इसके अलावा, श्रीमती संतरा ने पहले ही कह दिया था कि वह एक गरीब औरत है और उसके पहले से ही सात बच्चे हैं और उसके ऊपर बहुत अधिक आर्थिक भार है। उसकी इस अनचाही बालिका के जन्म से उस पर अतिरिक्त भार पड़ गया है और इसका कारण डाक्टरों की लापरवाही है। इसलिए, वह स्पष्ट रूप से राज्य सरकार की तरफ से पूर्णतः मुआवजे का दावा करने की हकदार है ताकि वह कम से कम उसके युवावस्था तक पहुंचने तक बच्चे का भरण–पोषण कर सके। इस प्रकार, मुआवजे के आदेश को न्यायोचित ठहराया गया।

तदनुसार, अपील खारिज कर दी गई।

सी.डी.आर. अस्पताल और अन्य बनाम श्रीमती निर्मला मंगेश और अन्य

I (2004) सी.पी.जे. 70 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

शिकायतकर्ता/प्रतिवादी – श्रीमती निर्मला स्कूटर से गिर गई थीं और उसकी दाईं पलख और गाल की हड्डी में मामूली चोट लग गई थी। उसे तुरन्त नजदीक के अस्पताल में ले जाया गया, जहां उसे प्राथमिक उपचार दे दिया गया और चिकित्सक के पास जाने की सलाह दी गई। बाद में वह अपीलकर्ता अस्पताल में गई। यह आरोप लगाया गया कि सैलिंग से घाव साफ करते समय अस्पताल में नर्स ने लापरवाही से एमप्युल को तोड़ दिया और एमप्युल के टूटे हुए कांच के टुकड़े शिकायतकर्ता के चेहरे और नाक में गढ़ गए। दूसरा आरोप यह था कि शिकायतकर्ता के घाव को साफ करते समय चेहरे पर रेजीडेंट मेडिकल डाक्टर ने सैलिंग के बजाय स्पिरिट लगा दी जिसके कारण चेहरे पर उस जगह छाले पड़ गए, जहां दुर्घटना से चोट नहीं भी लगी थी। राज्य आयोग ने विपक्षी पार्टी को लापरवाह माना और मुआवजे के रूप में 30,000/– रुपए का अवार्ड दिया। इस आदेश के खिलाफ अपील दायर की गई और यह दलील दी गई कि अपीलकर्ता दोषी नहीं है और छाले इसलिए पड़े हैं क्योंकि उसे सेवलान से एलर्जी है। यह भी दलील दी गई कि नर्स द्वारा एमप्युल तोड़ने का कोई मामला नहीं था।

मुद्दा

क्या शिकायतकर्ता का इलाज करते समय अपीलकर्ता की ओर से कोई लापरवाही की गई?

निर्णय

राष्ट्रीय आयोग ने निष्कर्ष दिया कि रिकार्ड पर उपलब्ध सामग्री के अवलोकन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि प्राथमिक उपचार के बाद शिकायतकर्ता को अपीलकर्ता के अस्पताल में भर्ती किया गया था और तीन 'फारेन बाडीज' को निकाल दिया गया था। विशेषज्ञों की राय से यह बात भी स्पष्ट थी कि शिकायतकर्ता को सेवलान से एलर्जी थी। विशेषज्ञों की राय को गलत ठहराने के लिए अपीलकर्ता द्वारा कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया और वे इस बात का स्पष्टीकरण देने में विफल रहे कि शिकायतकर्ता के चेहरे पर छाले कैसे पड़ गए थे। इस प्रकार, राज्य आयोग के आदेश में कोई अवैधता नहीं पाई गई। शिकायतकर्ता का इलाज करने में अपीलकर्ता ने लापरवाही बरती। राज्य आयोग के आदेश को न्यायोचित ठहराया गया।

तदनुसार अपील खारिज कर दी गई।

इन्द्रजीत सिंह बनाम डाक्टर जगदीप सिंह

III (2004) सी.पी.जे. 20 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

शिकायतकर्ता को बाईं आंख में कुछ खराबी थी और वह प्रतिवादी डाक्टर के पास गया, जिसने उसकी आंख में लैंस लगाने की सलाह दी। दिनांक 12.3.1998 को आपरेशन किया गया, परन्तु इस आपरेशन के बाद भी नजर का दोष और फ्लोटर बना रहा। प्रतिवादी ने उसे चश्मा लगाने की सलाह दी, परन्तु स्थिति में सुधार नहीं हुआ। बाद में, याचिकाकर्ता ने दूसरे डाक्टर से सलाह ली, जिसने तथाकथित रूप से बताया कि उसकी आंख में प्रतिवादी द्वारा किए गए गलत आपरेशन के कारण समस्या उत्पन्न हुई है। इन परिस्थितियों में शिकायत दायर की गई, जिसमें आरोप लगाया गया कि प्रतिवादी की ओर से की गई डाक्टरी लापरवाही के कारण उसकी बाईं आंख की 75 प्रतिशत रोशनी स्थायी रूप से समाप्त हो गई। यह शिकायत जिला फोरम के समक्ष दायर की गई, जिसने उपलब्ध सामग्री और साक्ष्य की विस्तृत जांच करने के बाद शिकायत खारिज कर दी, क्योंकि याचिकाकर्ता रिकार्ड पर विशेषज्ञों की कोई डाक्टरी पेश करने में विफल रहा। याचिकाकर्ता द्वारा राज्य आयोग के समक्ष इसके खिलाफ अपील दायर की गई और इस अपील को भी खारिज कर दिया गया। इस प्रकार, पुनर्विचार याचिका दायर की गई।

मुद्दे

क्या शिकायतकर्ता की आंखों में लैंस लगाते समय, जिसके परिणामस्वरूप उसकी बाईं आंख में समस्या आई, प्रतिवादी द्वारा कोई लापरवाही की गई?

निर्णय

रिकार्ड पर लाए गए साक्ष्य और सामग्री के अवलोकन के बाद और दोनों पार्टियों के विद्वान वकीलों द्वारा पेश किए गए तर्कों की सुनवाई करने के बाद राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि प्रतिवादी की दलील की पुष्टि करने के लिए और प्रतिवादी के खिलाफ डाक्टरी लापरवाही का मामला सिद्ध करने के लिए रिकार्ड पर पर्याप्त सामग्री नहीं लाई गई है। प्रतिवादी द्वारा अपनाया गया इलाज का तरीका स्वीकृत पद्धति के अनुसार था। इस बात का प्रतिरोध रिकार्ड पर उपलब्ध किसी सामग्री द्वारा नहीं किया गया। इसलिए, राज्य आयोग के आदेश को न्यायोचित ठहराया गया। इस प्रकार, पुनर्विचार याचिका को रद्द कर दिया गया।

डॉ. वी. पाहवा बनाम सुरेन्द्र मोहन घोष
IV (2004) सी.पी.जे. 1 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

आंख में कुछ परेशानी होने के कारण शिकायतकर्ता अपीलकर्ता डाक्टर के पास गया। उस डाक्टर ने कुछ जांच करने के लिए लिखा। बी–स्कैन के अलावा, सभी जांच कराई गई। जांच रिपोर्ट प्राप्त होने पर डाक्टर ने आंख की सर्जरी की और सर्जरी के दौरान रेटिना अपनी जगह से हटा हुआ पाया गया। आंख की खराब हालत के कारण इंटरा–आक्युलर लैंस नहीं लगाया गया। आपरेशन की गई आंख की हालत खराब हो गई और शिकायतकर्ता की आंख की रोशनी चली गई। दूसरी सर्जरी के बाद भी आंख में कोई सुधार नहीं हुआ और अंततः दिनांक 16.11.1993 को डाक्टर द्वारा शिकायतकर्ता को बताया गया कि उसकी आंख का इलाज नहीं किया जा सकता। शिकायतकर्ता इलाज में की गई लापरवाही का आरोप लगाते हुए राज्य आयोग में गया। राज्य आयोग द्वारा डाक्टर को दोषी पाया गया और मुआवजे के रूप में 1,00,000/– रुपए की राशि का अवार्ड दिया गया। इस आदेश से व्यथित डाक्टर ने राष्ट्रीय आयोग के समक्ष अपील दायर की।

मुद्दा

इस मामले में तीन मुद्दे उठाए गए । अपीलकर्ता द्वारा उठाया गया पहला मुद्दा इस तथ्य से संबंधित था कि शिकायत कालबाधित है। शिकायतकर्ता द्वारा उठाया गया दूसरा मुद्दा किसी विशेषज्ञ गवाह द्वारा जांच न करने के संबंध में था। और, तीसरा मुद्दा मुआवजे की राशि के संबंध में था।

निर्णय

पहले मुद्दे, अर्थात् कालबाधित होने के संबंध में राष्ट्रीय आयोग ने पाया कि यह बात सच है कि सर्जरी 2.2.1994 को की गई थी और शिकायत मई 1996 में दायर की गई थी। परन्तु इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि शिकायतकर्ता को अभी भी आशा थी और उसने 16.11.1994 तक डाक्टर के पास जाना जारी रखा। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए, समय–सीमा की अवधि मरीज द्वारा व्यथित महसूस करने के समय से और उसकी आंख का इलाज न हो सकने की बात बताए जाने के समय से आरम्भ होती है और यह तारीख 16.11.1994 है। इस प्रकार, यह शिकायत कालबाधित नहीं है।

विशेषज्ञ की गवाही के संबंध में दूसरे मुद्दे में आयोग ने पाया कि आंख के आपरेशन के लिए बी–स्कैन आवश्यक है, क्योंकि इस परीक्षण से आंख की हालत का पता चला होगा। इससे रेटिना के अपने स्थान से हटने की स्थिति का पता भी चला होगा, जो सर्जरी के दौरान अपीलकर्ता की जानकारी में आया। कांट्रेक्ट आपरेशन में आमतौर पर आईओएल इंटरा–आक्युलर लैंस लगाया जा सकता था। परन्तु ऐसा नहीं किया गया, क्योंकि आंख की हालत ठीक नहीं थी, जिसका पता डाक्टर द्वारा बी–स्कैन करके ही लगाया जा सकता था। परन्तु अपीलकर्ता द्वारा ऐसा नहीं किया गया और फिर भी सर्जरी कर दी गई। यह लापरवाही का एक स्पष्ट मामला है और इसमें विशेषज्ञ की गवाही की कोई आवश्यकता नहीं है।

तीसरा मुद्दा मुआवजे की राशि से संबंधित है। आयोग ने यह व्यवस्था दी कि अभिघात के निर्धारण के लिए कोई पैमाना तय नहीं किया जा सकता और इसलिए, इस मामले में शिकायतकर्ता के एक महत्त्वपूर्ण अंग, अर्थात् आंख की क्षति हुई है। इस प्रकार, मुआवजे के रूप में 1,00,000/– रुपए की राशि को ब्याज सहित न्यायोचित ठहराया गया।

तदनुसार अपील खारिज कर दी गई।

डॉ. काम इन्द्रनाथ शर्मा और अन्य बनाम सतीश कुमार और अन्य

II (2005) सी.पी.जे. 75 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

मृतक बबीता रानी को दिनांक 6.2.1999 को अपीलकर्ता के नर्सिंग होम में भर्ती किया गया। उसे मधुमेह का रोग था, जहां उसे इन्सुलिन के बिना ग्लूकोज दिया गया और दो बार खून चढ़ाया गया। जब उसकी हालत में सुधार नहीं हुआ तो उसे पटियाला के मेडिकल कॉलेज में रेफर कर दिया गया और वह दिनांक 8.2.1999 को पटियाला के लिए रवाना हो गई। परन्तु धुरी से पटियाला के रास्ते में ही मरीज की हालत बिगड़ गई और उसे लगभग 3.30 बजे अपराह्न डाक्टर सिंघला के अस्पताल में भर्ती किया गया और दिनांक 8.2.1999 को अपराह्न 4.30 बजे उसकी मृत्यु हो गई। डाक्टरी लापरवाही के मुद्दे पर मुख्य आरोप यह था कि अपीलकर्ता ने यह जानते हुए भी कि मरीज को मुधेमह है, इन्सुलिन का इस्तेमाल किए बिना उसे ग्लूकोज चढ़ा दिया, और दूसरा यह कि मृतक के रक्त समूह की समुचित जांच किए बिना उसे खून चढ़ा दिया गया। रिकार्ड पर उपलब्ध सामग्री पर विचार करने के बाद राज्य आयोग ने शिकायत मंजूर कर ली और मुआवजे के रूप में 1.2 लाख रुपए का भुगतान करने का निर्देश दिया। इस आदेश से व्यथित होकर मौजूदा अपील दायर की गई।

मुद्दे

पहला यह कि क्या इन्सुलिन के बिना ग्लूकोज चढ़ाना लापरवाही मानी जाएगी? और दूसरा यह कि क्या मृतक के रक्त समूह की जांच किए बिना खून चढ़ाया गया था?

निर्णय

पहले मुद्दे पर अपीलकर्ता की दलील थी कि उन्होंने 'फ्रैक्टोस' चढ़ाया था, न कि ग्लूकोज। मेडिकल रिकार्ड के अनुसार, मरीज को 'डेक्सट्रोज' और 'फ्रैक्टोस' के साथ इन्सुलिन दिया गया था। परन्तु इस बात को नोट करना सुसंगत है कि अस्पताल का मेडिकल रिकार्ड बहुत विरोधाभासी मामला है। दो विशेषज्ञों की राय रिकार्ड पर उपलब्ध है। उनमें से एक फारेंसिक विज्ञान के परामर्शदाता प्रसाद की रिपोर्ट प्राप्त करने के बाद शिकायतकर्ता द्वारा दाखिल की गई और दूसरी राय मेडिकल रिकार्ड में हेराफेरी करने के संबंध में हस्तलिपि और फिंगरप्रिंट विशेषज्ञ जैस्सी अनोर्ड

से प्राप्त अपीलकर्ता द्वारा दाखिल की गई थी। राज्य आयोग ने शिकायतकर्ता द्वारा दाखिल की गई रिपोर्ट को आधार बनाया और उसके द्वारा पारित किए गए आदेश में उसे ज्यों का त्यों लिखा। राष्ट्रीय आयोग ने राज्य आयोग के निष्कर्षों में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं पाया।

दूसरी मुद्दे पर शिकायतकर्ता ने सीधा आरोप लगाया कि मृतक को दिनांक 6 और 8 फरवरी, 1999 को दो बार खून चढ़ाया गया। इस बात से किसी भी चरण में, विशेष रूप से इंकार नहीं किया गया। तथापि, दूसरी बार खून चढ़ाने की बात का उल्लेख दिनांक 8.2.1999 को डिस्चार्ज करने से पहले के मेडिकल रिकार्ड में है। जब आयोग ने अपीलकर्ता को मेडिकल रिकार्ड और अपीलकर्ता के बयान के बीच विरोधाभास की स्थिति पर स्पष्टीकरण देने को कहा तो वह कोई स्पष्टीकरण नहीं दे सका।

अपीलकर्ता की यह दलील थी कि मरीज को उसका जीवन बचाने के लिए खून चढ़ाया गया था। आयोग ने मेडिकल रिकार्ड की जांच की और पाया कि रिकार्ड पर कोई ऐसी सामग्री उपलब्ध नहीं है जिसमें यह दिखाया गया हो कि मृतक का रक्त समूह कौन सा है और किस आधार पर मृतक के रिश्तेदारों से खून लाने के लिए कहा गया था। पहले इस बात से पूरी तरह इंकार करना कि दिनांक 8.2.1999 को खून चढ़ाया गया था और फिर 6.2.1999 तथा 8.2.1999 को मरीज के रक्त समूह की जांच किए बिना खून चढ़ाना निश्चित रूप से चिकित्सा संबंधी गंभीर लापरवाही का मामला है। यह बात सिद्ध हो गई है कि अनधिकृत तरीके से और अत्यधिक लापरवाही से खून चढ़ाया गया था, जिसके परिणामस्वरूप मरीज की मृत्यु हो गई। राज्य आयोग के आदेश को न्यायोचित ठहराया गया।

तदनुसार अपील खारिज कर दी गई।

डा. रामधुनी साहू बनाम दुलारी बाई

III (2005) सी.पी.जे. 35 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

इस मामले में याचिकाकर्ता एक विपक्षी पार्टी थी और सेवा में कमी के लिए प्रतिवादी ने शिकायत दायर की, जिसमें यह आरोप लगाया गया कि दिनांक 7.2.1999 को याचिकाकर्ता की बाईं बाजू में इंजेक्शन लगाया गया, जिससे गैंगरीन हो गया और डा. प्रभात कोठारी नर्सिंग होम, रायपुर में इलाज कराने के बाद ही उसका हाथ काटे जाने से बचाया जा सका। जिला फोरम ने याचिकाकर्ता को लापरवाह पाया और यह भी पाया कि जिस इंजेक्शन से गैंगरीन हुआ था, जो याचिकाकर्ता द्वारा ही दिया गया था और मुआवजे के रूप में 25,000/– रुपए का अवार्ड दिया गया। इस आदेश के खिलाफ की गई याचिका राज्य आयोग द्वारा खारिज कर दी गई। इसलिए, मौजूदा पुनर्विचार याचिका दायर की गई।

मुद्दा

क्या जिला फोरम और राष्ट्रीय आयोग के आदेश वैध हैं, जब उन्हीं तथ्यों के आधार पर फौजदारी न्यायालय में एक अपील लम्बित है?

निर्णय

जिला फोरम द्वारा पारित किए गए आदेश से पता चलता है कि प्रतिवादी द्वारा दायर की गई प्रथम सूचना रिपोर्ट के आधार पर एक मामला दर्ज किया गया था और याचिकाकर्ता को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 269 और 337 के अंतर्गत सजा सुनाई गई थी और उसे तीन महीने के कारावास का दण्ड दिया गया था। याचिकाकर्ता द्वारा यह दलील दी गई कि विचारण मजिस्ट्रेट के इस आदेश के खिलाफ उसके द्वारा दायर की गई अपील लम्बित है, इसलिए उसके नीचे वाले फोरमों द्वारा पारित आदेश अपील पर निर्णय किए जाने तक स्थगित रखे जाने चाहिएं। राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि प्रतिवादी को याचिकाकर्ता के खिलाफ फौजदारी और सिविल कानूनों, दोनों के अंतर्गत कार्रवाई करने का अधिकार प्राप्त है। फोरमों द्वारा अवार्ड किए गए मुआवजे के रूप में दी गई राहत का किसी भी तरीके से आपराधिक अपील के लम्बित होने के साथ कोई संबंध नहीं है। इंजेक्शन, जिसके परिणामस्वरूप प्रतिवादी के बाएं हाथ में गैंगरीन हो गया था, देने के लिए जिम्मेदार याचिकाकर्ता के संबंध में निचले फोरमों द्वारा लौटा दिए गए समवर्ती निष्कर्षों को ध्यान में रखते हुए, पुनर्विचार याचिका खारिज कर दी गई।

डा. शाम लाल और अन्य बनाम श्रीमती सरोज रानी और अन्य

I (2003) सी.पी.जे. 47 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

मृतक रविन्द्र और उसकी पत्नी जांच के लिए अपने चिकित्सक डॉक्टर सोनी के पास गए। मृतक ने पेट में दर्द होने के बारे में डाक्टर से शिकायत की। यह पेट दर्द उसे पिछली रात को हुआ था। डॉक्टर ने इसे लेफ्ट रेंटल कोलिक का मामला पाया और कुछ दवाइयां लिख दी। डाक्टर ने सलाह दी कि इंटरा–मस्कुलर इंजेक्शन दिया जाना चाहिए। शिकायतकर्ता के अनुसार, मृतक उन दवाइयों को लेने के लिए गया और केमिस्ट द्वारा उसे सलाह दी गई कि वह केमिस्ट के पिता से इंजेक्शन लगवा ले। डॉ. शाम लाल, केमिस्ट की दुकान के बराबर में ही अपना क्लिनिक चलाता था। यह इंटरा–विनस इंजेक्शन लगाया गया, जिसके परिणामस्वरूप उसके शरीर में कंपकपी शुरू हो गई और कुछ ही मिनटों के अंदर वहीं पर रविन्द्र कुमार की मृत्यु हो गई। यह मृत्यु इस सामान्य ज्ञान कि इंजेक्शन इंटरा–मस्कुलर दिया जाना चाहिए था, के खिलाफ इंटरा–विनस तरीके से इंजेक्शन देने के परिणामस्वरूप हुई। यह डाक्टर शाम लाल की तरफ से की गई लापरवाही है, जिसके परिणामस्वरूप 32 साल की आयु में ही रविन्द्र कुमार की असामयिक मृत्यु हो गई। प्रतिवादी की तरफ से की गई लापरवाही का आरोप लगाते हुए मृतक की विधवा, बच्चे और माता–पिता ने राज्य आयोग के समक्ष शिकायत दायर की। राज्य आयोग ने दोनों पार्टियों की सुनवाई करने के बाद 6,00,000/– रुपए के मुआवजे का अवार्ड दिया। इस आदेश के खिलाफ दोनों ही पार्टियों ने दो अलग–अलग अपीलें दायर की। प्रतिवादी द्वारा की गई अपील राज्य आयोग के आदेश को रद्द करने के संबंध में थी। दूसरी अपील शिकायतकर्ताओं द्वारा मुआवजे की राशि में बढ़ोतरी करने के संबंध में दायर की गई थी।

मुद्दे

पहला यह कि शिकायतकर्ता उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के अर्थ में उपभोक्ता नहीं है, क्योंकि इस मामले में कोई प्रतिफल नहीं था। दूसरा यह कि प्रैसक्राइब किए गए इंजेक्शन और इसकी खरीद के संबंध में कोई साक्ष्य नहीं था। तीसरा यह कि क्या मुआवजे की राशि पर्याप्त है?

निर्णय

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम की अनुप्रयोज्यता के संबंध में पहले मुद्दे पर राष्ट्रीय आयोग ने कहा कि "यदि संक्षेप में कहें, तो यह बहुत दुर्भाग्यपूर्ण तर्क है। एक मृतक व्यक्ति भुगतान कैसे कर सकता है? यह एक ऐसे व्यक्ति का मामला है, जो इंजेक्शन लगवाने के लिए आता है, इंजेक्शन लगाया जाता है और कुछ ही मिनटों में उस व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है। ऐसी स्थिति में प्रतिफल का भुगतान किसके द्वारा किया जाना चाहिए था।? इस बात से इंकार नहीं किया गया कि मृतक उसके क्लिनिक में आया और उसे इंजेक्शन लगाया गया। परन्तु भुगतान करने के लिए वह जीवित नहीं बचा। यह तर्क पूरी तरह अस्वीकार्य है और हम इसकी निंदा करते हुए इसे नामंजूर करते हैं।" दूसरे मुद्दे, अर्थात इंजेक्शन के नाम के बारे में कोई भी साक्ष्य रिकार्ड पर नहीं लाया गया या जिस डाक्टर ने दवाइयां लिखी थीं, उसके साथ जिरह नहीं की गई। इसके अलावा, शव–परीक्षा की रिपोर्ट से स्पष्ट रूप से यह पता चलता है कि 15 सेंटीमीटर सर्कुलर के लाल रंग के निशान मृतक के शरीर पर केवल इंजेक्शन से ही हुए थे। इस संबंध में दो हल्फनामे भी दायर किए गए, जिनमें कहा गया कि इंजेक्शन लगाया गया था। एम.बी.बी.एस. और एम.डी. के रूप में किसी योग्यता–प्राप्त सर्जन का कोई साक्ष्य इस बारे में मौजूद है कि इंजेक्शन इंटरा–मस्कुलर रूप से लगाए जाने चाहिएं थे और यदि इंटरा–विनस के रूप में लगाए जाते तो इससे मरीज का हृदय सिकुड़ सकता है जिससे हृदय में रक्त का प्रवाह बंद हो जाता है। इस विशेषज्ञ की राय का प्रतिरोध करने के लिए रिकार्ड पर कोई सामग्री उपलब्ध नहीं थी। विपक्षी पार्टी की तरफ से की गई डाक्टरी लापरवाही साबित हो गई है और इसलिए उसकी अपील को खारिज किया गया। तीसरे मुद्दे, अर्थात् मुआवजे की अपर्याप्तता के बारे में राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि 15,00,000/– रुपए के दावे के समर्थन में या दावे की धनराशि को बढ़ाने के समर्थन में कोई आधार या सामग्री प्रस्तुत नहीं की गई है। इसलिए, राज्य आयोग द्वारा प्रदान किया गया मुआवजा उचित है और इस अपील में कोई सार नहीं है सिवाय इसके कि शिकायतकर्ता राज्य आयोग के समक्ष शिकायत दायर करने की तारीख से उक्त मुआवजे पर 12 प्रतिशत की दर से ब्याज का हकदार होगा।

अपील को आंशिक रूप से मंजूर किया गया।

सुश्री सेफाली भार्गव बनाम इन्द्रपस्थ अपोलो अस्पताल और अन्य

I (2003) सी.पी.जे. 216 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

यह शिकायत कुमारी सेफाली भार्गव, अवयस्क, जिसकी आयु 17 वर्ष थी, के द्वारा अपने पिता और प्राकृतिक अभिभावक के माध्यम से दायर की गई। इसमें यह आरोप लगाया गया कि प्रतिवादी अस्पताल ने गलत ढंग से अपने ब्लड बैंक से उसे खून दिया, जिसके कारण उसे बहुत गंभीर बीमारी का संक्रमण हो गया। यह बीमारी हैपेटाइटिस सी वायरस थी, जिससे उसका जीवन तबाह हो गया। शिकायतकर्ता को नई दिल्ली के अपोलो अस्पताल में 104 डिग्री के मलेरिया बुखार की शिकायत की बीमारी के साथ भर्ती किया गया था। चिकित्सा परीक्षण के बाद प्रतिवादी ने सोचा कि शिकायतकर्ता को ब्लड फ्लैटलेट चढ़ाने की जरूरत है और उसकी माता को यह सलाह दी कि वह उसके खून के जांच कराए ताकि खून चढ़ाने के लिए उसके खून का इस्तेमाल किया जा सके। तथापि, बाद में शिकायतकर्ता को ब्लड फ्लैटलेट की पांच यूनिट दी गई। यह पांच अलग–अलग खून देने वालों से ब्लड बैंक में तैयार किए गए थे। 25 जून को एच.सी.वी. (हैपेटाइटिस सी) एंटीबायटिक एच.बी. एंटीजेन्स के लिए उसके खून की जांच की गई और दोनों ही नैगेटिव पाए गए। इसके बाद, बुखार कुछ कम हो गया और उसे अस्पताल से डिस्चार्ज कर दिया गया और सलाह दी गई कि उसे दी गई मलेरिया प्रतिरोधक दवाइयों का इस्तेमाल करते रहना चाहिए। शिकायतकर्ता का कहना था कि उसने तीन महीने की अवधि तक निर्धारित दवाइयां लेना जारी रखा। तथापि, उसने एक महीने बाद जांच नहीं कराई बल्कि दो महीने के बाद कराई। जांच से पता चला कि एस.जी.पी.टी. (लिवर एंजाइमे टेस्ट) का परिणाम असामान्य था। इन परीक्षणों से पता चला कि उसे हैपेटाइटिस सी का तीव्र दौरा पड़ा था। वह इस बात से सहमत है कि यह संक्रमण गलत ढंग से की गई जांच से हुआ था और अपोलो अस्पताल में उसे पुराने ब्लड प्रोडक्ट दिए गए थे। हैपेटाइटिस सी वायरस की सामान्य परिपक्व अवधि आठ से बारह सप्ताह है और वायरस परिपक्व अवधि के बाद ग्यारहवें सप्ताह में दिखाई देते हैं।

मुद्दे

पहला यह कि उसे प्लैटलेट दिए जाने की आवश्यकता नहीं थी और यदि यह प्लैटलेट दिए जाने का मुद्दा है, तो यह प्लैटलेट चढ़ाने का काम उसकी माता के खून से दिया जाना चाहिए

था। दूसरा यह कि रक्तदाता की जांच गलत और अपर्याप्त ढंग से की गई और कि अपोलो अस्पताल द्वारा दिए गए खून से संबंधित रिकार्ड दोषपूर्ण हैं।

निर्णय

मामले की परिस्थितियों से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि हैपेटाइटिस सी का संक्रमण, जिससे 4 जुलाई, 1997 को एस.जी.पी.टी. काउंट बढ़कर 13 सितम्बर, 1997 को, अर्थात 9 सप्ताह के बाद 1384 हो गए, यह अवधि खून चढ़ाने के बाद 10 सप्ताह की सामान्य परिपक्व अवधि से मेल खाती है, पांच से अधिक डोनरों में से किसी के खून से प्लैटलेट चढ़ाने के द्वारा संक्रमण हुआ होगा। प्रतिवादी संख्या 1 ने यह खून चढ़ाने में आवश्यक सावधानी और सतर्कता नहीं बरती जबकि रक्ताधान माता के खून से किया जा सकता था। इस लापरवाही से एक युवा जीवन गंभीर रूप से प्रभावित हो गया है। इसलिए, राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि विपक्षी पार्टी डाक्टरी लापरवाही के लिए जिम्मेदार है और मुआवजे के रूप में 18,00,000/– रुपए की राशि मंजूर की।

शिकायत को मंजूर कर लिया गया।

डॉ. के.जी. कृष्णन बनाम प्रवीण कुमार (अवस्क)
II (2003) सी.पी.जे. 125 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

शिकायतकर्ता प्रवीण कुमार (अवयस्क, जिसका प्रतिनिधित्व उसके पिता ने किया), को दिनांक 9.4.1996 को बुखार के कारण प्रतिवादी के अस्पताल में भर्ती किया गया। जांच के बाद बुखार 101 डिग्री फारेनहाइट पाया गया। प्रतिवादी (डाक्टर) की सलाह के अनुसार, नर्स ने शिकायतकर्ता को बाएं नितम्ब में पैरासिटामोल इंजेक्शन दिया। शिकायतकर्ता की बाईं टांग में तुरन्त पक्षाघात हो गया। जब यह मामला प्रतिवादी की जानकारी में लाया गया, तो उसने कहा कि शिकायतकर्ता कुछ समय बाद ठीक हो जाएगा। अगले दिन प्रतिवादी को डिस्चार्ज कर दिया गया। दिनांक 11.4.1996 को उसे बुखार बढ़ गया और बच्चे को उसी अस्पताल में दाखिल कर दिया गया और उसे दिनांक 13.4.1996 को डिस्चार्ज किया गया। दिनांक 17.4.1996 को उसे मेडिकल कॉलेज अस्पताल में आगे के इलाज के लिए भर्ती किया गया, जहां डाक्टरों ने राय दी कि पैरासिटामोल इंजेक्शन देने के समय हुई क्षति के कारण शिकायतकर्ता की साइटिक नर्व क्षतिग्रस्त हो गई है। जब यह तथ्य प्रतिवादी की जानकारी में लाया गया, तो उसने शिकायतकर्ता को 500/– रुपए देने का प्रस्ताव किया। प्रतिवादी के दृष्टिकोण से असंतुष्ट होकर व्यथित शिकायतकर्ता ने राहत के लिए जिला फोरम का दरवाजा खटखटाया। तथ्यों और कानून का विस्तृत विश्लेषण करने के बाद जिला फोरम ने व्यवस्था दी कि प्रतिवादी लापरवाह रहा है और मुआवजे के रूप में 1,00,000/– रुपए का भुगतान करने का निर्देश दिया। आदेश से असंतुष्ट महसूस करते हुए विपक्षी पार्टी ने जिला फोरम के आदेश के खिलाफ अपील की। राज्य आयोग ने अपील को खारिज कर दिया, क्योंकि उसमें कोई सार नहीं था। इसलिए, डाक्टर ने राष्ट्रीय आयोग के समक्ष पुनर्विचार याचिका दायर की।

मुद्दे

क्या पैरासिटामोल का इंजेक्शन देने में नर्स की ओर से कोई लापरवाही की गई है और क्या उस लापरवाही के कारण शिकायतकर्ता को कोई क्षति पहुंची है? दूसरा यह कि शिकायतकर्ता द्वारा लगाए गए आरोप नर्स के खिलाफ हैं,? परन्तु उसे फोरमों के समक्ष कार्यवाही में कोई पार्टी

नहीं बनाया गया है और इसलिए शिकायत को आवश्यक पार्टियों को शामिल न किए जाने के कारण खारिज कर दिया जाना चाहिए।

निर्णय

रिकार्ड पर उपलब्ध साक्ष्य का अवलोकन करने के बाद राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि अवयस्क शिकायतकर्ता के नितम्ब पर पैरासिटामोल का इंटरा–मस्कुलर इंजेक्शन देने में नर्स की ओर से की गई लापरवाही के कारण शिकायतकर्ता की साइटिक नर्व क्षतिग्रस्त हो गई और उसका पैर लटक गया, जिसका पूरी तरह इलाज नहीं किया जा सकता। इस प्रकार, नर्स की ओर से की गई लापरवाही सिद्ध होती है। जहां तक दूसरे मुद्दे का संबंध है, आयोग ने व्यवस्था दी कि तर्क देने के दौरान इस बात का प्रतिरोध नहीं किया गया कि नर्स ने प्रतिवादी (डाक्टर) की प्रत्यक्ष देखरेख में इंजेक्शन दिया था और नर्स को स्वयं डाक्टर द्वारा नियोजित किया गया था। यदि नर्स को पार्टी न भी बनाया गया हो, फिर भी प्रतिनिधिक जिम्मेदारी के सिद्धान्त के आधार पर नर्स का नियोक्ता जिम्मेदारी से नहीं बच सकता। इस प्रकार, दिए गए इलाज और उसके कर्मचारियों, जिन्होंने डाक्टर की देखरेख और निर्देशों के अधीन इलाज किया, के लिए भी डाक्टर जिम्मेदार है। राज्य आयोग के आदेश को न्यायोचित ठहराया गया।

पुनर्विचार याचिका को खारिज कर दिया गया।

सिद्धार्थ बाटा बनाम डॉ. मेजर जनरल एन.एल. मगोत्रा

IV (2003) सी.पी.जे. 182 (खण्ड पीठ)

तथ्य

शिकायतकर्ता पहले ही दिन से बीमार था जब वह पीलिया और तीव्र अतिसार से पीड़ित हुआ था। उसे दिनांक 19.5.1989 को डाक्टर मोहन लाल द्वारा सेंटामाइसीन और अन्य दवाइयां दी गई थीं। यह आरोप लगाया गया कि इस दवाई को दिए जाने के कारण शिकायतकर्ता बहरा हो गया। इस बात का दिनांक 17.11.1989 को किए गए आडियोग्राम परीक्षण में पता चला। शिकायतकर्ता को लुधियाना के सरकारी अस्पताल और अन्य अस्पतालों में भी ले जाया गया, परन्तु अंततः यह विचार व्यक्त किया गया कि शिकायतकर्ता स्थायी रूप से बहरा है। शिकायतकर्ता ने राज्य आयोग में अपनी पिता के माध्यम से एक शिकायत दायर की, जिसमें डाक्टर एम.एल. मगोत्रा के खिलाफ डाक्टरी लापरवाही का आरोप लगाया गया। रिकार्ड पर लाए गए साक्ष्य और सामग्री की विस्तृत जांच करने के बाद राज्य आयोग ने शिकायत खारिज कर दी, क्योंकि शिकायतकर्ता ने अपने आरोप के समर्थन में कोई पुख्ता सबूत प्रस्तुत नहीं किया था। इसलिए, यह अपील की गई।

मुद्दा

क्या बहरापन, जिससे शिकायतकर्ता पीड़ित था, सेंटाइमाइसीन दवाई के इंजेक्शन की अधिक डोज के कारण हुआ?

निर्णय

साक्ष्य का अवलोकन करने के बाद यह व्यवस्था दी गई कि सेंटाइमाइसीन किसी बच्चे को भी दिया जा सकता है और प्रतिवादी डाक्टर द्वारा प्रैसक्राइब की गई डोज अनुमत्य सीमाओं में थी। यह व्यवस्था दी गई कि प्रतिवादी डाक्टर ने स्वीकृत पद्धति के अनुसार इलाज किया। इसलिए, वह डाक्टरी लापरवाही का दोषी नहीं था। राज्य आयोग के आदेश को न्यायोचित ठहराया गया।

अपील खारिज कर दी गई।

पी.जी.आई., चंडीगढ़ बनाम जसपाल सिंह और अन्य
III (2000) सी.पी.जे. 32 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

शिकायतकर्ता और उसके अवयस्क पुत्र ने अस्पताल (पी.जी.आई.) के खिलाफ एक शिकायत दायर की, जिसमें शिकायतकर्ता नं.1 की पत्नी श्रीमती हरजीत कौर की मृत्यु के लिए डाक्टरी लापरवाही का आरोप लगाया गया। मृतक 30.3.1996 को 50 प्रतिशत की सीमा तक जल गई थी और उसे बी.एम.सी., लुधियाना में दाखिल किया गया था और बाद में दिनांक 19.4.1996 को उसे पी.जी.आई. में शिफ्ट कर दिया गया था, क्योंकि प्राइवेट अस्पताल में इलाज मंहगा था। दिनांक 1.7.1996 को उसकी मृत्यु हो गई और उसके पति ने पी.जी.आई. अस्पताल के खिलाफ डाक्टरी लापरवाही के आरोप लगाए और दलील दी कि गलत खून चढ़ाने के कारण उसकी पत्नी की मृत्यु हुई है और 9,00,000/– रुपए की राशि के मुआवजे का दावा किया। राज्य आयोग ने पी.जी.आई. को यह निर्देश दिया कि वह मुआवजे के रूप में 2,00,000/– रुपए का भुगतान करे। पी.जी.आई., चंडीगढ़ के आदेश के खिलाफ शिकायतकर्ता ने अपील दायर की।

मुद्दा

क्या मृत्यु का कारण सेप्टीसीमिया और जलना था या गलत खून चढ़ाना था?

निर्णय

राष्ट्रीय आयोग ने मृत्यु की रिपोर्ट का सारांश और राज्य आयोग के आदेश का अवलोकन किया। यह देखा गया कि मरीज का गुर्दा क्षतिग्रस्त था और खून का स्तर 100 जी.एम.एस. पहुंच गया था। उक्त अस्पताल में डाक्टर द्वारा गलत खून चढ़ाने के बाद होमोग्लोबिन का प्रतिशत 5 एम.जी. तक घट गया था। मरीज को गलत खून चढ़ाने के संबंध में अस्पताल को लिखित शिकायत शिकायतकर्ता द्वारा दिए जाने के बाद भी जांच की गई और सही बात का पता चला। क्षति नियंत्रण इलाज लिखित शिकायत के बाद ही शुरू किया गया। अपीलकर्ता द्वारा यह दलील दी गई कि होमोग्लोबिन के स्तर का प्रतिशत सामान्य ले आया गया था, परन्तु यह बात स्पष्ट है कि लीवर का आंतरिक संतुलन, गुर्दे का कार्यचालन और होमोग्लोबिन के स्तर का घटना गलत खून देने के बाद ही शुरू हुआ। हालांकि, सेप्टीसीमिया को ही मृत्यु का अंतिम कारण लिखा गया।

परन्तु मरीज का स्वास्थ्य उसे गलत खून देने के बाद खराब होता चला गया और यह अस्पताल के डाक्टरों की तरफ से स्पष्ट रूप से लापरवाही का मामला है, जिससे अपीलकर्ता मना नहीं कर सकता और उससे बच नहीं सकता। राज्य आयोग द्वारा पारित किए गए आदेश में कोई कानूनी गलती नहीं पाई गई और इसे न्यायोचित ठहराया गया।

अपील को खारिज कर दिया गया।

डॉ. रबिनारायण साहू बनाम डॉ. बी. जयराम पात्रा और अन्य

I (2004) सी.पी.जे. 3 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

गाल ब्लैडर स्टोन निकालने के लिए याचिकाकर्ता की माता को इनडोर रोगी के रूप में दाखिल किया गया। प्रतिवादी संख्या 1 ने मरीज का इलाज किया और पेट में गंभीर दर्द की शिकायत के लिए अनेक दवाइयां दी। बाद में, प्रतिवादी संख्या 2 के साथ उसका आपेरशन किया गया। आपरेशन के बाद दुर्भाग्यवश मरीज की मृत्यु हो गई। शिकायतकर्ता द्वारा यह आरोप लगाया गया कि आपरेशन दोषपूर्ण था और कि चिकित्सक द्वारा मरीज का इलाज करने में उचित सतर्कता बरतने में कमी की गई थी। जिला फोरम ने प्रतिवादी संख्या 1 को आपरेशन करने में लापरवाह माना और आदेश दिया कि सेवाओं में की गई कमी के लिए 50,000/– रुपए का भुगतान किया जाए। आदेश से व्यथित विपक्षी पार्टी ने राज्य आयोग में अपील की और शिकायत की धार्यता को चुनौती दी, क्योंकि आपरेशन के लिए किसी प्रतिफल का भुगतान नहीं किया गया था। राज्य आयोग ने अपील को इस आधार पर मंजूर किया कि शिकायत उपभोक्ता संरक्षण अधिनियिम, 1986 के अंतर्गत धार्य नहीं है, चूंकि निःशुल्क सेवाएं अधिनियम के दायरे में नहीं आतीं, इसलिए शिकायतकर्ता ने यह पुनर्विचार याचिका दायर की।

मुद्दा

क्या शिकायत धार्य है, क्योंकि शिकायतकर्ता की माता का कैपिटल अस्पताल में इलाज किया गया था, जो एक सरकारी अस्पताल है और किए गए इलाज के लिए किसी प्रतिफल का भुगतान शिकायतकर्ता द्वारा अस्पताल को या उस डाक्टर को नहीं किया गया था?

निर्णय

याचिकाकर्ता ने तर्क दिया कि उसने पैथोलोजिकल टैस्टों के लिए नाम मात्र की फीस का भुगतान किया था और इस फीस को अस्पताल/डाक्टरों को भुगतान किए गए प्रतिफल के रूप में माना जाना चाहिए। राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि आवश्यक परीक्षण कराने के लिए प्रतिफल का भुगतान किया गया था और उक्त सर्जरी के लिए नहीं। परीक्षणों के लिए प्रतिफल का भुगतान आपरेशन से पहले किया गया था, जिसके लिए कोई लापरवाही या सेवा में कमी का आरोप सिद्ध

नहीं होता है। इसलिए, इसे बाद में हुई उस घटना तक विस्तारित नहीं किया जा सकता जो पूर्णतः भिन्न प्रकार की है और इन दोनों घटनाओं को एक साथ जोड़कर नहीं देखा जा सकता। तद्नुसार, राष्ट्रीय आयोग ने याचिका को अधार्य के रूप में खारिज कर दिया।

पुनर्विचार याचिका खारिज कर दी गई।

सुयश अस्पताल प्राइवेट लिमिटेड और अन्य बनाम प्रसन्ना कुमार ओझा

II (2003) सी.पी.जे. 150 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

शिकायतकर्ता की माता श्रीमती शान्ति देवी ओझा पेट के दर्द से पीड़ित थी और उसे विपक्षी पार्टी के अस्पताल में ले जाया गया, जहां जांच के बाद पता चला कि उसके गाल ब्लैडर में पथरी है और क्रोनिक चोलेसिसटाइटिस है। दिनांक 2.5.1995 को उसका आपरेशन किया गया। इसके बाद, दिनांक 8.5.1995 को टांके काट दिए गए। उसी दिन जब मरीज को खांसी का दौरा पड़ा, तो उसके बाद उसका पेट फट गया तथा पेट का दर्द शुरू हो गया जिसका विपक्षी पार्टी द्वारा उसी दिन इलाज कर दिया गया। दिनांक 9.5.1995 को मरीज ने सीने में दर्द की शिकायत की और डाक्टर जॉय, कार्डियोलाजिस्ट और अन्य डाक्टरों के प्रयासों के बावजूद 23.5.1995 को उसकी मृत्यु हो गई। सेवा में कमी की शिकायत करते हुए शिकायतकर्ता, अर्थात मरीज के पुत्र ने जिला फोरम के समक्ष एक शिकायत दायर की। जिला फोरम ने शिकायत मंजूर कर ली और मुआवजे के रूप में 50,000/– रुपए का अवार्ड दिया। इस आदेश से व्यथित होकर विपक्षी पार्टी ने राज्य आयोग में अपील की। राज्य आयोग ने मामले की विस्तार से जांच की और पाया कि जहां तक आपरेशन का संबंध है, हालांकि कोई लापरवाही नहीं की गई थी। परन्तु आपरेशन के बाद की देखभाल में अस्पताल के स्टाफ की ओर से चूक की गई थी और राज्य आयोग ने जिला फोरम द्वारा दिए गए आदेश की पुष्टि की। राज्य आयोग के आदेश से व्यथित विपक्षी पार्टियों ने राष्ट्रीय आयोग के समक्ष पुनर्विचार याचिका दायर की।

मुद्दे

यह दलील दी गई कि जिला फोरम ने अपने मनोयोग का इस्तेमाल नहीं किया और केवल आधारहीन अनुमानों के आधारों पर ही मुआवजे का अवार्ड दे दिया, और कि राज्य आयोग ने काल्पनिक आधार पर अपील को खारिज किया। दूसरा मुद्दा यह था कि निचले फोरम ने विपक्षी पार्टियों की ओर से की गई लापरवाही के समवर्ती निष्कर्ष पर पहुंचने में विशेषज्ञों की राय को आधार नहीं बनाया।

निर्णय

राष्ट्रीय आयोग ने दोनों ही दलीलों का नामंजूर कर दिया और अवलोकन किया कि "हमारी दृष्टि से इस दलील में कोई सार नहीं है, क्योंकि हमारे द्वारा की गई राज्य आयोग और जिला फोरम के आदेश की समीक्षा करने पर हम पाते हैं कि दोनों पक्षों द्वारा हलफनामे दायर करने के अलावा किसी भी पक्ष ने किसी विशेषज्ञ को बुलाने और विशेषज्ञों की राय लेने का अनुरोध नहीं किया। इसलिए, राज्य आयोग ने पाठ्यपुस्तकों को आधार बनाया।" अंततः, राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि मामले के तथ्यों को देखते हुए, लापरवाही का मामला बनता है। इसलिए, दोनों पक्षों द्वारा दाखिल किए गए हलफनामों और रिकार्ड पर उपलब्ध अन्य सामग्री को आधार बनाते हुए निचला फोरम समवर्ती निष्कर्ष पर पहुंचा। इस प्रकार, जिला फोरम के आदेश को न्यायोचित ठहराया गया।

पुनर्विचार याचिका को खारिज कर दिया गया।

श्रीमती शान्ता मोहन लक्ष्मी बनाम डॉ. सी.वी. रत्नम और अन्य

IV (2003) सी.पी.जे. 12 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

शिकायतकर्ता ने बाएं नितम्ब में दर्द के लिए डॉ. रत्नम, विपक्षी पार्टी से परामर्श किया। उसका कहना था कि उसकी बाईं टांग जन्म से ही एक इंच छोटी थी। परामर्श किए जाने पर विपक्षी पार्टी ने बाएं नितम्ब को पूरी तरह प्रतिस्थापित करने की सलाह दी और बताया कि इसका दो चरणों में आपरेशन किया जाना आवश्यक है। तद्नुसार, दिनांक 5.7.1991 और 25.7.1991 को उसका आपरेशन किया गया। दूसरे आपरेशन के एक दिन बाद शिकायतकर्ता ने महसूस किया कि बाएं घुटने के नीचे कोई संवेदना नहीं है और उसकी बाईं टांग दाईं टांग के मुकाबले लम्बी है। उसने अपनी टांग में लगातार दर्द होने की शिकायत की और वह 25 दिन तक अस्पताल के बिस्तर से बाहर नहीं आ सकी। दिनांक 20.8.1991 को उसे ज़िम्मेर फेन की सहायता से चलने के लिए कहा गया। इस अभ्यास को छोड़ दिया गया, जब उसने बर्दाश्त न किए जा सकने वाले दर्द की शिकायत की। 22 तारीख को उसके पैर के अग्र भाग में सूजन आ गई और उसका रंग भी बदल गया। 23 तारीख को पैर का अग्र भाग पूरी तरह ठंडा हो गया और उसे अस्पताल से डिस्चार्ज कर दिया गया। उसी दिन वह एन.आई.एम.एस., जो एक सरकारी अस्पताल है, में गई और उसी दिन अपने आपको दाखिल कराया। चार दिन के अंदर, अर्थात 27.8.1991 को उसकी बाईं टांग घुटने के ऊपर से काट दी गई, क्योंकि उसमें गैंगरीन हो गया था। अंततः, एन.आई.एम.एस. में दो और आपरेशनों के बाद दिनांक 25.9.1991 को उसे डिस्चार्ज कर दिया गया। शिकायतकर्ता राज्य आयोग में गई और डाक्टर सी.वी. रत्नम की ओर से सेवा में की गई कमी और गंभीर लापरवाही का आरोप लगाया। राज्य आयोग ने शिकायतकर्ता के पक्ष में फैसला दिया और 1,11,000/– रुपए की प्रतिपूर्ति के आदेश दिए तथा 5,000/– रुपए की लागत के साथ 1,50,000/– रुपए का हर्जाना मंजूर किया। शिकायतकर्ता अपर्याप्त मुआवजे के लिए राष्ट्रीय आयोग के शरण में गई और विपक्षी पार्टी ने राज्य आयोग के आदेश के खिलाफ अपील दायर की।

मुद्दे

क्या विपक्षी पार्टी की अपील कालबाधित है? दूसरा यह कि क्या इलाज में कोई डाक्टरी लापरवाही की गई थी? और तीसरा यह कि क्या मुआवजा अपर्याप्त था?

निर्णय

डाक्टर सी.वी. रत्नम की अपील दिनांक 31.5.2002 को, अर्थात विवादित आदेश की तारीख के 492 दिन बाद दायर की गई थी। उन्होंने तर्क दिया कि राज्य आयोग के आदेश की प्रमाणित प्रति प्राप्त करने में 395 दिन का समय लग गया। इसके बाद भी अपील दायर करने में 87 दिन का विलम्ब किया गया है और विलम्ब का स्पष्टीकरण देने में कोई पर्याप्त और संतोषजनक कारण पेश नहीं किया गया है। इस प्रकार, राष्ट्रीय आयोग ने डाक्टरी लापरवाही के संबंध में दूसरे मुद्दे पर विचार किए बिना समय–सीमा के आधार पर पहली अपील को खारिज कर दिया।

जहां तक शिकायतकर्ता द्वारा दायर की गई अपील का संबंध है, जिसमें उसने मुआवजे की राशि बढ़ाने का दावा किया है, राष्ट्रीय आयोग ने अवलोकन किया कि शिकायतकर्ता और उसके पति की आय में सही–सही क्षति दर्शाने के लिए रिकार्ड पर कोई विस्तृत विवरण नहीं लाया गया। इस प्रकार, राज्य आयोग के आदेश को न्यायोचित ठहराया गया।

अपील खारिज कर दी गई।

डॉ. शैलेश शाह बनाम अफरेम जयनंद राठौड और अन्य
(2003) 5 सी.एल.डी. 440 (एन.सी.डी.आर.सी.)

तथ्य

शिकायतकर्ता पेट के दर्द से पीड़ित था और उसने दिनांक 4.8.1993 को अपीलकर्ता डाक्टर साह से परामर्श किया था। डाक्टर शाह ने कुछ दवाइयां लिखी थीं और कुछ परीक्षण कराने की सिफारिश की थी। रिपोर्टों के आधार पर डाक्टर साह ने शिकायतकर्ता की बीमारी को तीव्र अपेंडेसाइटिस पाया और उसे आपरेशन की सलाह दी। दिनांक 10.8.1993 को आपरेशन किया गया, जो 11 घंटे चला। शिकायतकर्ता को खाने या पीने के लिए कुछ भी नहीं दिया गया। उसे इंजेक्शन दिया गया और ड्रिप पर रखा गया और चूंकि यह कार्य डाक्टर शाह के अयोग्यताप्राप्त स्टाफ द्वारा किया गया, इसलिए उसके हाथ में सूजन आ गई, जिसका परिणाम यह हुआ कि उसकी दो उंगलियां पूरी तरह निष्क्रिय हो गई और इसके बाद वह फिटर के रूप में काम नहीं कर सका। शिकायतकर्ता को तेज बुखार भी हो गया और चिकित्सक के निर्देश के बावजूद उसका कोई परीक्षण नहीं किया गया। बाद में, उसे टांके काटने के लिए आपरेशन थियेटर में बुलाया गया और उसे कोई सूचना दिए बिना और उसकी सहमति के बिना उसका दूसरा आपरेशन कर दिया गया। अंततः, बहुत अधिक दर्द सहने के बाद और उसके दाएं हाथ की दो उंगलियां निष्क्रिय हो जाने के बाद तथा हर्निया से पीड़ित होने पर भी उसे अस्पताल से डिस्चार्ज कर दिया गया। शिकायतकर्ता ने उसका आपरेशन करने में डाक्टर शाह द्वारा की गई गंभीर लापरवाही और उसकी सहमति के बिना दूसरा आपरेशन कर देने के लिए राज्य आयोग में आवेदन किया, जिसमें आरोप लगाया गया कि इसे 'सेवा में कमी' माना जाए। राज्य आयोग ने रिकार्ड का परीक्षण करने के बाद निम्नलिखित व्यवस्था दी:

(क) डॉ. शाह द्वारा दिया गया यह स्पष्टीकरण सही नहीं है कि आपरेशन में विलम्ब शिकायतकर्ता के कारण हुआ है।

(ख) शिकायतकर्ता का यह आरोप सही था कि उसके दाएं हाथ में सूजन इंटरा–विनस फ्लूड और इंजेक्शन गलत तरीके से देने के कारण हुई थी।

(ग) जब डाक्टर साह ने चिकित्सक से परमार्श किया था, तो उसे साक्ष्य के रूप में बुलाया जाना चाहिए था और यह दर्शाने के लिए रिकार्ड पर कोई चीज उपलब्ध नहीं है कि चिकित्सक ने रि–एक्सप्लोरेटरी सर्जरी की सलाह दी थी।

(घ) दूसरा आपरेशन इसलिए किया गया क्योंकि शिकायतकर्ता पहले आपरेशन के बाद रिकवर नहीं कर रहा था।

(ड.) आपरेशन में विलम्ब किया गया था और इस बात का स्पष्टीकरण क्यों नहीं दिया गया था कि डाक्टर कीर्ति द्वारा कौन से टैस्ट प्रैसक्राइब किए गए थे, जिन्हें नहीं कराया गया था।

मुद्दा

क्या विपक्षी पार्टियां डाक्टरी लापरवाही के लिए जिम्मेदार हैं?

निर्णय

कोई डाक्टरी रिकार्ड पेश नहीं किया गया। तथापि, रिकार्ड पर उपलब्ध अन्य सामग्री से डाक्टर साह की यह मंशा साबित नहीं होती है कि इंटरा–एबडोमिनल सेप्सिस परफोरेशन के कारण रि–एक्सप्लोरेशन आवश्यक था। अपीलकर्ता द्वारा इलाज का तरीका उचित ढंग से प्रकट नहीं किया गया। इसके अलावा, यह भी अवलोकन किया गया कि राठौड का दूसरा आपरेशन डाक्टर शाह द्वारा मरीज की जानकारी और सहमति के बिना किया गया और कि यह डाक्टर की ओर से 'सेवा में की गई गंभीर कमी' है। डाक्टर शाह की यह दलील नामंजूर कर दी गई कि दूसरे आपरेशन के लिए राठौड के हस्ताक्षर इसलिए नहीं लिए गए, क्योंकि उसके दाएं हाथ में ड्रिप लगी हुई थी।

पूरे रिकार्ड की जांच करने के बाद, राष्ट्रीय आयोग ने राज्य आयोग के निष्कर्षों से असहमति व्यक्त करने का कोई आधार नहीं पाया। राज्य आयोग के आदेश को न्यायोचित ठहराया गया।

अपील को हर्जे–खर्चे के साथ खारिज कर दिया गया।

डी.डी. तिरखा बनाम डॉ. देवीन्दर महन्त और अन्य

II (2002) सी.पी.जे. 116 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

शिकायतकर्ता को पेशाब करने में दिक्कत थी। जब वह अमृतसर में था तो उसने डाक्टर महन्त से परामर्श किया। डाक्टर ने उसे अल्ट्रासाउंड कराने और पेशाब टेस्ट कराने की सलाह दी। रिपोर्टों की जांच करने के बाद, डॉ. महन्त ने बताया कि प्रोस्टेट ग्रन्थि की अतिवृद्धि के कारण शिकायतकर्ता को पेशाब करने में दिक्कत हो रही है। उसने कथेटराइजेशन की सलाह दी। डॉ. महन्त ने कथेटराइजेशन किया, परन्तु कोई आराम नहीं हुआ। 2/3 जुलाई, 1998 की पूरी रात अपेक्षित मात्रा में पेशाब नहीं आया बल्कि नाल–शलाका में खून आना पाया गया। दिनांक 4.7.1998 को डॉ. महन्त ने नाल–शलाका हटा दी, जिसके परिणामस्वरूप अत्यधिक रक्तस्राव होने लगा जो अनियंत्रणीय था। उसे विपक्षी पार्टी संख्या 3 के अस्पताल में भेज दिया गया। विपक्षी पार्टी संख्या 2 ने उसका आपरेशन किया। शिकायतकर्ता की हालत में कोई सुधार नहीं हुआ बल्कि और बिगड़ गई। मलद्वार से पेशाब आना शुरू हो गया। चार दिन के बाद मलद्वार से खून आना भी शुरू हो गया। इसके बाद उसे चंडीगढ़ लाया गया और पी.जी.आई. अस्पताल में दाखिल कराया गया। यहां दोबारा उसका आपरेशन किया गया। शिकायतकर्ता ने जिला फोरम में डाक्टरी लापरवाही की शिकायत दायर की और मुआवजे के रूप में 20,000/– रुपए का अवार्ड दिया गया। राज्य आयोग ने भी मुआवजे को उचित ठहराया। शिकायतकर्ता ने मुआवजा बढ़ाने के लिए मौजूदा पुनर्विचार याचिका दायर की।

मुद्दा

क्या 20,000/– रुपए के हर्जाने का अवार्ड नितलीय कानून है?

निर्णय

राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि रिकार्ड पर उपलब्ध साक्ष्य से यह साबित हो गया है कि कथेटराइजेशन की प्रक्रिया में डॉ. महन्त की लापरवाही के कारण उसने ब्लैडर की भित्ति में 'रैंट' कर दिया था जिससे मलद्वार के अंदर एक छेद हो गया था। यह एक ऐसी स्थिति थी जिसे पी.जी. आई. के डाक्टर ठीक नहीं कर सके। अब परिणाम यह हुआ कि शिकायतकर्ता को जीवनभर अपनी

पीठ पर एक बैग के साथ जीना पड़ेगा जिसमें शरीर का कचरा जमा होगा। इस सारी परेशानी के लिए अवार्ड किया गया मुआवजा पर्याप्त नहीं था। इस प्रकार, मुआवजे को बढ़ाकर 1,20,000/– रुपए कर दिया गया।

पुनर्विचार याचिका मंजूर कर ली गई।

चरण सिंह बनाम हीलिंग टच अस्पताल और अन्य

III (2003) सी.पी.जे. 62 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

शिकायतकर्ता तेज पेट दर्द और पिछले एक साल से पेशाब में जलन की अनुभूति के साथ विपक्षी पार्टी संख्या 1 के अस्पताल में गया, जहां उसे विपक्षी पार्टी संख्या 2 डॉ. जुनेजा द्वारा देखा गया। उसने जांच करने और टेस्ट कराने के बाद शिकायतकर्ता को सलाह दी कि वह मूत्राशय से पथरी निकलवाने के लिए सर्जरी कराए। विपक्षी पार्टी संख्या 3 द्वारा उसका आपरेशन किया गया। शिकायतकर्ता द्वारा यह आरोप लगाया गया कि विपक्षी पार्टी संख्या 4 ने लापरवाही से उसकी रीढ़ की हड्डी में एनेस्थीसिया दिया जिसके परिणामस्वरूप उसके शरीर के दांये हिस्से में लकवा मार गया और पेशाब में खून भी आने लगा। इसके बावजूद भी उसे डिस्चार्ज कर दिया गया। जब स्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ तो शिकायतकर्ता दोबारा अस्पताल में गया और विपक्षी पार्टी संख्या 2 ने उसे एक और सर्जरी कराने की सलाह दी और अपने रिश्तेदारों को बुलाने के लिए कहा। सर्जरी को सफल घोषित किया गया, परन्तु शिकायतकर्ता ने विरोधी पार्टियों से शिकायत की कि उसके दांये हाथ के अलावा उसके शरीर का दांया भाग काम नहीं कर रहा है। इसके बावजूद उसे डिस्चार्ज कर दिया गया और दो महीने तक बैसाखी का इस्तेमाल करने को कहा। इसके बाद वह ओर्थोनोवा अस्पताल में गया। मेडिकल डायग्नोस्टिक सेंटर में टैस्ट किए जाने के दौरान ही डाक्टर ने उसे बताया कि दूसरे आपरेशन के दौरान उसकी किडनी निकाल ली गई है जिसके बारे में उसे पता नहीं है। यह आरोप लगाया गया कि शिकायतकर्ता उसके शरीर के दांये भाग में लकवा मार जाने के साथ–साथ विकलांग हो गया और अब वह स्थायी रूप से बैसाखियों के सहारे पर है।

मुद्दे

पहला यह कि क्या रीढ़ की हड्डी में एनस्थीसिया देने में लापरवाही करने के कारण उसके शरीर के दायें भाग में लकवा मारा? दूसरा यह कि क्या सहमति के बिना किडनी निकाल लेना डाक्टरी लापरवाही माना जाएगा?

निर्णय

पहले मुद्दे के लिए विपक्षी पार्टी ने इस मामले में केवल विशेषज्ञ की गवाही का साक्ष्य पेश किया और हलफनामे के अनुसार यह अनुमान लगाया जा सकता है कि सामान्य एनस्थीसिया

तकनीक के मुकाबले स्पाइनल एनस्थीसिया तकनीक को तरज़ीह दी जाती है, जहां कहीं यह संभव है, क्योंकि इसमें कम पेचीदगियां हैं। पी.सी.एन.एल. कराने के लिए स्पाइनल एनस्थीसिया तकनीक एक वरीयता वाली तकनीक है जब तक कि मरीज में विपरीत लक्षणों का पता न चला हो। यह एक सुस्थापित कानून है कि जहां दो विकल्प उपलब्ध हों तो डाक्टर के निर्णय के अनुसार सर्वोत्तम विकल्प का इस्तेमाल करना और जब इसका प्रतिरोध करने के लिए कुछ अन्य उपलब्ध नहीं है तो ऐसी परिस्थितियों में डाक्टर को लापरवाह नहीं माना जा सकता। शिकायतकर्ता ने अपनी दलील के समर्थन में किसी विशेषज्ञ का साक्ष्य या चिकित्सा संबंधी साहित्य पेश नहीं किया, जबकि उसकी दलील का केवल स्पष्ट रूप से खंडन ही नहीं किया गया बल्कि खंडन का समर्थन इस क्षेत्र के विशेषज्ञ की राय द्वारा किया गया। पहले मुद्दे के बारे में इस आयोग ने व्यवस्था दी कि एनस्थीस्ट ने जो कुछ किया, वह इस विषय पर स्वीकृत चिकित्सा प्रक्रिया और सुस्थापित स्थिति के अनुसार था। इन परिस्थितियों में उसे किसी लापरवाही का दोषी नहीं माना जा सकता।

दूसरे मुद्दे, अर्थात बांयी किडनी निकालने के बारे में शिकायतकर्ता के दो मित्रों/रिश्तेदारों के हलफनामे दाखिल किए गए। यह दोनों ही हलफनामे झूठे और गलत पाए गए। शिकायतकर्ता की बांयी किडनी में पथरी थी और दूसरी सर्जरी के दौरान बांयी किडनी एक जीवन रक्षक उपाय के रूप में निकाली गई और इस तथ्य को स्पष्ट रूप से डिस्चार्ज नोट में दर्शाया गया। तथ्य को, रिकार्ड से बेहतर कुछ भी साबित नहीं करता और शिकायतकर्ता द्वारा रिकार्ड को चुनौती नहीं दी गई। इसके अलावा, शिकायतकर्ता के खिलाफ प्रतिकूल अनुमान लगाया गया, क्योंकि उसने अन्य अस्पतालों में भी इलाज कराया और इन अस्पतालों में शिकायतकर्ता के लिए अपनाई गई प्रक्रिया रिकार्ड पर पेश नहीं की गई। इन अस्पतालों में से किसी भी अस्पताल में किसी इलाज के परिणामस्वरूप स्थिति बिगड़ सकती थी। शिकायतकर्ता चिकित्सा विशेषज्ञ या चिकित्सा साहित्य के किसी साक्ष्य द्वारा विपक्षी पार्टी के खिलाफ कोई ऐसी लापरवाही साबित करने में विफल रहा कि जो कुछ उसने किया, वह किसी औसत दक्षता वाले डाक्टर से अपेक्षित नहीं था। यहां डाक्टर लम्बे अनुभव वाले थे। अपेक्षित शैक्षिक योग्यता और अनुभव रखने के कारण उन्होंने वही किया जो किसी डाक्टर द्वारा किया जाना चाहिए था। इस प्रकार, डाक्टरी लापरवाही का कोई मामला साबित नहीं होता।

हर्जे–खर्चे के साथ शिकायत खारिज कर दी गई।

श्रीमती शान्ताबेन मुल्जीभाई पटेल और अन्य बनाम बीच कैंडी अस्पताल एवं अनुसंधान केन्द्र और अन्य

I (2005) सी.पी.जे. 10 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

मृतक श्री एम.एम. पटेल, जिसकी बीच कैंडी अस्पताल में मृत्यु हो गई, की पत्नी और उसके दो पुत्रों ने यह शिकायत दायर की, जिसमें अस्पताल के स्टाफ की चिकित्सा संबंधी लापरवाही का आरोप लगाया गया। दुर्भाग्यपूर्ण मृत्यु के लिए 1,02,00,000/– रुपए का दावा किया गया। मामले के संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि मृतक को श्लेषमल कफोत्सारण के साथ खांसी हो गई थी और सांस लेने में दिक्कत थी। उसकी बाई–पास सर्जरी और मिट्राल वाल्व प्रतिस्थापन 1988 में किया गया था और कठिन इंट्यूबेशन से उत्पन्न पेचीदगियों की पुरानी बीमारी थी। मृतक की एंजियोग्राफी बिना किसी पेचीदगी के, की गई थी। एंजियोग्राफी के आधार पर मृतक की पुत्री और दामाद ने डॉ. भट्टाचार्य से परामर्श किया क्योंकि जांच से, प्रतिस्थापित मिट्राल वाल्व के क्षतिग्रस्त होने का पता चला। मृतक को सलाह दी गई कि मिट्राल वाल्व की और बाई–पास सर्जरी दुबारा कराए। यह आरोप लगाया गया कि मरीज के अस्पताल में भर्ती होने के बाद डॉ. भट्टाचार्य आपरेशन से पहले का आकलन करने में विफल रहे। दिनांक 2.12.1996 को श्री पटेल को, आपरेशन से पहले एनस्थीटिस्ट के किसी राउंड के बिना, आपरेशन थिएटर में ले जाया गया। सर्जरी के दौरान मिट्राल वाल्व प्रतिस्थापन के लिए इस्तेमाल किए गए पिछले टिशु वाल्व के आकार की पुष्टि नहीं की गई जिससे अनावश्यक पेचीदगियां हुईं। यह आरोप भी लगाया गया कि सर्जरी से पहले खून की 10 यूनिटें डोनेट करने के बावजूद शिकायतकर्ताओं को सूचित नहीं किया गया कि खून में हाई बिलीरूबिन के कारण खून चढ़ाने के लिए दो बोतलों का इस्तेमाल नहीं किया जा सका और अंतिम क्षणों में शिकायतकर्ताओं को खून की दो बोतलों के लिए दौड़ाया गया। खून की क्षति से डाक्टरों के परिचित होने के बावजूद, बाहरी ब्लड बैंक या बड़े अस्पताल से खून लेने के लिए कोई वैकल्पिक व्यवस्था नहीं की गई। इसके अलावा, यह तथ्य एस.आई.सी.यू. के स्टाफ द्वारा अंतिम चरण में देखा गया कि श्री पटेल ने अपने आपको एक्सट्युबेट कराया था। इस तथ्य के बावजूद कि एनस्थीटिस्ट का काम अत्यधिक विशेषज्ञता वाला होता है, बीच कैंडी अस्पताल द्वारा कोई रेसीडेंट हाउस एनस्थीटिस्ट नियुक्त नहीं किया गया और आपातकाल के दौरान किसी बाह्य एनस्थीटिस्ट को बुलाया जाता है। मरीज का कठिन इंट्यूबेशन का इतिहास होते हुए अस्पताल को

कोई रेसीडेंशियल एनस्थीटिस्ट तत्काल उपलब्ध कराकर आवश्यक एहतियात बरतने चाहिएं थे। इसके परिणामस्वरूप श्री पटेल द्वारा अपने आपको एक्सटुबेट करा लेने के बाद हाउस फिजीशियन, न कि कोई एनस्थीटिस्ट, कफ्ड पोरशन एंडोटरचियल ट्यूब संख्या 9 से एंडोटरचियल इंट्यूबेशन का प्रयास कर रहा था, क्योंकि वह इस बात से अनभिज्ञ था कि ट्यूब संख्या 6 का इस्तेमाल किया जाना था क्योंकि सफल इंट्यूबेशन 1988 में भी उसी का इस्तेमाल किया गया था। जब तक बाहरी सहायता मांगी जा सकी और जब तक एक वर्किंग वैंटीलेटर एस.आई.सी.सी.यू. में लाया जा सका, तब तक मरीज की मस्तिष्कीय रूप से मृत्यु हो चुकी थी। इसके बाद दिनांक 4.12.1996 को लगभग 11.30 बजे रात को श्री पटेल की मृत्यु हो गई। इन परिस्थितियों में शिकायतकर्ता, राष्ट्रीय आयोग में गए और मुआवजे के रूप में 1,02,00,000/– रुपए का दावा किया।

मुद्दा

पहला कि क्या अस्पताल, आपातकालिक स्थिति से निपटने के लिए साधनयुक्त था? और दूसरा कि क्या आपरेशन के बाद की देखभाल करने में अस्पताल लापरवाह है?

निर्णय

राष्ट्रीय आयोग ने पाया कि तथ्यों के अलावा शिकायतकर्ताओं को प्रदान की गई सेवा में कमी का कोई साक्ष्य नहीं है। रिकार्ड पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर राष्ट्रीय आयोग ने निम्नलिखिलि टिप्पणी दीः

(i) मृतक का मामला अत्यधिक जोखिम वाला मामला था।

(ii) उसने 1988 में बाई–पास सर्जरी कराई थी और मिट्राल वाल्व भी बदलवाया था।

(iii) 1996 में, यह पाया गया कि मृतक का हृदय संचालन 15 प्रतिशत इजेक्शन फ्रेक्शन तक क्षतिग्रस्त हो गया था।

(iv) आपरेशन सफलतापूर्वक किया गया था।

(v) आपरेशन के बाद का इलाज करवाते समय एक्सटुबेशन किया गया था।

(vi) चिकित्सा संबंधी साहित्य के अनुसार, एक्सीडेंटल एक्सटुबेशन की संभावना 8.5 प्रतिशत से 3 प्रतिशत के बीच होती है।

(vii) एक्सटुबेशन तुरन्त और अचानक किया गया था, परन्तु इसे तुरन्त नर्स द्वारा देख लिया गया, तुरन्त सीनियर नर्स यूनिट में आई और विशेषज्ञ डाक्टरों को बुलाया, जिन्होंने इंट्यूबेशन करना कठिन पाया तथा 10 मिनट के अंदर हृदयघात हो गया। इसके कारण मृत्यु हो गई, जैसा कि शव–परीक्षा रिपोर्ट में उल्लेख किया गया है।

(viii) तीन डाक्टरों, जो इस क्षेत्र में विशेषज्ञ हैं, ने इंट्यूबेट का प्रयास किया, परन्तु इसे कठिन पाया क्योंकि श्वासनली संकुलित थी। शव–परीक्षा रिपोर्ट में यह उल्लेख भी किया गया है कि कंठ और श्वासनली संकुलित थी।

(ix) यह साबित करने के लिए कुछ भी रिकार्ड पर उपलब्ध नहीं है कि ऐसे मामलों के लिए बीच कैंडी असपताल आवश्यक उपकरणों से युक्त नहीं था और शिकायत में लगाए गए ये आरोप सारहीन और निराधार हैं कि सर्जीकल आई.सी.सी.यू. अपर्याप्त था, उसमें कोई रेजीडेंशियल एनस्थीटिस्ट नहीं था, कोई रेजीडेंट कार्डियक सर्जन नहीं था, वेंटीलेशन पर मरीज को पुनर्जीवित करने के लिए आवश्यक बेसिक उपकरणों की कमी थी।

राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि डाक्टरों ने अपनी ड्यूटी अपनी सर्वोत्तम क्षमता और सतर्कता तथा सावधानी के साथ की है। इस बात में कोई विवाद नहीं है कि मृतक का मामला एक अत्यधिक जोखिम वाला मामला था और आकस्मिक घटना को नियंत्रित नहीं किया जा सकता या उससे बचा नहीं जा सकता। प्रत्येक सर्जरी आपरेशन में खतरा होता है। इसलिए केवल इस कारण 'सेवा में कमी' का निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता, क्योंकि कुछ गलत हो गया है। मौजूदा मामले में, यह बात स्पष्ट है कि डाक्टरों और अस्पताल के स्टाफ ने स्वीकृत पद्धति के अनुसार काम किया है। केवल इसलिए क्योंकि मरीज द्वारा एक्सटुबेशन के बाद, श्वासनली के संकुलन के कारण, तुरन्त इंट्यूबेशन नहीं किया जा सका, यह नहीं माना जा सकता कि एस.आई.सी.सी.यू. में डाक्टर सक्षम नहीं थे या उनकी ड्यूटी के निर्वहन में कमी थी। खर्चे के साथ शिकायत खारिज कर दी गई।

शिकायत खारिज कर दी गई।

डॉ. के. महाबाला भट्ट और अन्य बनाम के. कृष्णा
II (2002) सी.पी.जे. 127 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

याचिकाकर्ता और उसकी पत्नी दोनों के पास जी.सी.आई.एम. के रूप में जानी जाने वाली औषधियों में प्रैक्टिस करने की शैक्षिक योग्यता थी। वे मरीजों को दवाइयां दे रहे हैं, परन्तु उनके पास सर्जीकल प्रक्रियाओं में विशेषज्ञता नहीं है। दिनांक 27.12.1994 को प्रतिवादी की पत्नी श्रीमती गीता ने गर्भपात कराने के लिए याचिकाकर्ता से परामर्श किया। उसी दिन उसे नर्सिंग होम में दाखिल कर लिया गया। जब याचिकाकर्ता ने पाया कि श्रीमती गीता के गर्भ में मृत भ्रूण है तो उसने सर्जरी कर दी, जिसके परिणामस्वरूप श्रीमती गीता की मृत्यु हो गई। मृतक के पति ने जिला फोरम में शिकायत दायर की, जिसमें डाक्टरी लापरवाही का आरोप लगाया गया। जिला फोरम ने मुआवजे के रूप में 2,01,000/रुपए का अवार्ड दिया। आदेश से व्यथित याचिकाकर्ता ने राज्य आयोग में अपील की, जिसे तथ्यों पर विचार करने के बाद नामंजूर कर दिया गया। इसके बाद मौजूदा पुनर्विचार याचिका दायर की गई।

मुद्दा

क्या याचिकाकर्ता उस सर्जीकल प्रक्रिया का सहारा ले सकते थे जिसमें विशेषज्ञ नहीं थे?

निर्णय

राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि याचिकाकर्ता अत्यधिक आपातकाल में ऐसा मामला ले सकते हैं, परन्तु मौजूदा मामले में उन्हें ऐसा नहीं करना चाहिए था, क्योंकि मरीज ऐसी स्थिति में नहीं थी, जहां उसके जीवन को तुरन्त कोई खतरा था और सर्जीकल इलाज के लिए मरीज को उपयुक्त केन्द्र में ले जाने का पर्याप्त समय था। याचिकाकर्ता ने अत्यावश्यकता के बिना इन प्रक्रियाओं का सहारा लिया। राज्य आयोग के आदेश को न्यायोचित ठहराया गया और याचिकाकर्ताओं को लापरवाही के लिए जिम्मेदार माना गया।

याचिका का तदनुसार निपटान किया गया।

बालासाहेब गंगाराम गोवडे बनाम रविन्दर कुलकर्णी

I (2005) सी.पी.जे. 52 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

शिकायतकर्ता की पत्नी गर्भवती होने पर प्रतिवादी के पास गई, जहां दिनांक 28.12.1992 को उसने एक बालिका को जन्म दिया। इसके बाद उसने दर्द की शिकायत की, परन्तु कोई डाक्टर उपलब्ध नहीं था। मृतक के रिश्तेदारों के बार–बार अनुरोध करने पर अंततः एक डाक्टर एक विशेषज्ञ के साथ आया। अब बहुत देर हो चुकी थी और हृदयघात के कारण उसी शाम को मरीज की मृत्यु हो गई थी। डाक्टरी लापरवाही का आरोप लगाते हुए जिला फोरम के समक्ष एक शिकायत दायर की गई। पार्टियों की सुनवाई करने के बाद जिला फोरम ने शिकायत मंजूर कर ली और प्रतिवादी को निर्देश दिया कि वह मुआवजे के रूप में 2,50,000/– रुपए का भुगतान ब्याज के साथ करे। राज्य आयोग के समक्ष प्रतिवादी द्वारा दायर की गई अपील को मंजूर कर लिया गया और जिला फोरम के आदेश को रद्द कर दिया गया। इसलिए, यह पुनर्विचार याचिका दायर की गई।

मुद्दा

क्या गवाहों से ज़िरह किए बिना, दिया गया आदेश कानून के अनुसार है?

निर्णय

राष्ट्रीय आयोग ने साहित्य, विशेषज्ञ के साक्ष्य और रिकार्ड पर उपलब्ध अन्य सामग्री सहित विस्तृत सामग्री का अवलोकन किया और टिप्पणी दी कि दो महत्त्वपूर्ण गवाहों डॉ. खाडे और डॉ. एल.आर. बाधे के साथ ज़िरह नहीं की गई। डॉ. बाधे द्वारा की गई शव–परीक्षा की रिपोर्ट, जो शव–परीक्षा के एक साल बाद लिखी गई, के अनुसार मृत्यु का कारण "आघात से पोस्ट पारटेम हैमरेज" था। इस संदर्भ में एक स्वतंत्र गवाह और एक चिकित्सा विशेषज्ञ डॉ. ए.आर. खाडे की रिपोर्ट का बहुत महत्त्व है। यदि बयानकर्ताओं के साथ ज़िरह करने की इजाजत दी गई होती, तो मामले की साफ तस्वीर मिल जाती। निचले दोनों फोरमों में से किसी ने भी वास्तव में इस मुद्दे को नहीं देखा। राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि हम सही निष्कर्ष पर पहुंचने की स्थिति में नहीं हैं। हमारे विचार से निचले दोनों फोरमों को एक न एक फैसला लेने से पहले अनुमान या कुछ हद

तक व्यक्तिगत जानकारी को निर्णय का आधार बनाने के बजाए गवाहों के साथ ज़िरह करने पर विचार करना चाहिए था। इस प्रकार, यह मामला जिला फोरम के पास वापस भेजा जाता है, जो पार्टियों को नोटिस जारी करके गवाहों के साथ ज़िरह करने का अवसर देगा और तीन महीने के अंदर आदेश पारित करेगा, क्योंकि यह मामला काफी पुराना है।

पुनर्विचार याचिका मंजूर की गई।

एम. श्रीनिवास बनाम श्रीमती (डॉ.) रामा तुलसी और अन्य

I (2005) सी.पी.जे. 64 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

शिकायतकर्ता की पत्नी अपने गर्भधारण के दूसरे महीने से ही, अर्थात दिनांक 10.12.1995 से अपनी दूसरी गर्भावस्था के दौरान डॉ. रामा तुलसी, जो एक स्त्री रोग विशेषज्ञ थीं, से सलाह ले रही थी। दिनांक 5.6.1996 को शिकायतकर्ता की पत्नी उल्टी, कम भूख लगने तथा बेचैनी की शिकायत के साथ डॉ. के पास गई और उसने बताया कि उसे पेशाब करने में दिक्कत महसूस हो रही है, परन्तु विपक्षी पार्टी ने मरीज की शिकायत पर कोई उचित ध्यान दिए बिना आम तरीके से मरीज को पहले दी गई दवाइयों को लगातार लेते रहने की सलाह दी। दिनांक 10.6.1996 को मरीज ने उल्टी होने, भूख कम लगने तथा पेशाब संबंधी समस्या की दोबरा शिकायत की। तथापि, डॉ. ने पेशाब का कोई परीक्षण किए बिना कुछ एंटीबायटिक लिख दी। मरीज को दिनांक 15.6. 1996 को प्रसव के लिए दाखिल किया गया और दिनांक 16.6.1996 को मरीज ने एक सीजेरियन आपरेशन के द्वारा एक बालिका को जन्म दिया। आपरेशन के दौरान डॉ. को मरीज के ब्लैडर में पीला पेशाब दिखाई दिया। परन्तु अब बहुत विलम्ब हो चुका था और मरीज को एक बेहतर साधन–सम्पन्न अस्पताल में ले जाया जाना था। सभी प्रयासों के बावजूद, दिनांक 19.6.1996 को मरीज की मृत्यु हो गई। इन शिकायतों के साथ शिकायतकर्ता आन्ध्र प्रदेश राज्य आयोग में गया और डॉक्टरी लापरवाही का आरोप लगाया, जहां उसकी शिकायत को खारिज कर दिया गया। इस प्रकार, मौजूदा अपील की गई।

मुद्दे

पहला यह कि क्या डाक्टर ने सीजेरियन आपरेशन अनावश्यक रूप से किया, जिसमें मरीज की मृत्यु हो गई? और दूसरा यह कि क्या डाक्टर पीलिया का पता लगाने में विफल रही?

निर्णय

रिकार्ड पर उपलब्ध सामग्री पर विचार करने के बाद राष्ट्रीय आयोग ने पाया कि मृतक ने दिनांक 5.6.1996 को एक रूटीन दौरा किया था और उस दिन उसने कम भूख लगने या उबकाई आने की शिकायत नहीं की थी। तथापि, दिनांक 10.6.1996 को मरीज केवल पेशाब करने में दर्द

होने की शिकायत के साथ डाक्टर के पास आई थी। महिलाओं में पेशाब करने में दर्द होने के लिए लगभग सात संभावित कारण होते हैं। इनमें से सबसे अधिक संभावित आम कारण निचली मूत्र नली में संक्रमण होता है। नैदानिक परीक्षण और मरीज की हिस्ट्री के आधार पर प्रतिवादी ने अन्य सभी कारणों को छोड़ दिया और यू.टी.आई. का इलाज किया, क्योंकि गर्भावस्था के दौरान यह एक आम कारण होता है। पांच दिन के बाद, मरीज ने हृदय में जलन की शिकायत की और विरोधी पार्टी ने उसके लिए दवाइयां लिख दी। दिनांक 15.6.1996 को मरीज ने बहुत अधिक दर्द अनुभव करना शुरू कर दिया और उसे परिवीक्षाधीन दाखिल कर लिया गया । अगले दिन, अर्थात दिनांक 16.6. 1996 को प्रतिवादी ने देखा कि प्रसव संबंधी दर्द में कोई कमी नहीं आई है और भ्रूण पर दबाव पड़ने लगा है। भ्रुण की हृदय गति सामान्य से कम और अनियमित हो गई थी। ऐसी परिस्थितियों में प्रतिवादी ने नैदानिक साक्ष्य के आधार पर तुरन्त सीजेरियन आपरेशन करने का निर्णय लिया। इस प्रकार, आपरेशन में सेवा संबंधी कोई कमी नहीं पाई गई और पहले मुद्दे को खारिज कर दिया गया। दूसरे मुद्दे पर आयोग ने अवलोकन किया कि इस आरोप में कोई दम नहीं है कि डाक्टर समय से पीलिया की पहचान करने में विफल रही। चिकित्सा संबंधी प्रलेखों से यह स्पष्ट है कि गर्भावती महिलाओं में पीलिया का होना एक आम बात है और पेशाब करने में दर्द होना कोई पीलिया का लक्षण नहीं है। यह बात स्पष्ट है कि मरीज ने कभी पीलिया के लक्षणों की शिकायत नहीं की और वास्तव में दिनांक 16.6.1996 तक मरीज में पीलिया के कोई लक्षण नहीं थे। दूसरी तरफ, मरीज द्वारा बताए गए लक्षणों और मरीज के नैदानिक मूल्यांकन से निचले यू.टी.आई. का पता चलता है जिसका प्रतिवादी ने उचित ढंग से इलाज किया था। भारत जैसे विकासशील देश में गर्भवती महिलाओं में पीलिया की शिकायत कम ही होती है और गर्भवती महिलाओं को एक बार पीलिया हो जाने के बाद मृत्यु दर की संभावना बहुत अधिक होती है। अपीलकर्ता, प्रतिवादी की तरफ से की गई किसी चूक की घटना को साबित नहीं कर सका।

अपील खारिज कर दी गई।

पी. वेंकटलक्ष्मी बनाम डॉ. वाई. सविता देवी

II (2004) सी.पी.जे. 14 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

सन् 1982 में शिकायतकर्ता ने तीसरी बार गर्भधारण किया और अपने पारिवारिक डॉ. की सलाह और संदर्भ पर प्रतिवादी संख्या 1 से परामर्श करना शुरू किया। प्रसव की निर्धारित तारीख 22.5.1993 थी। दिनांक 15.5.1993 को शिकायतकर्ता को बेचैनी महसूस हुई। उसने प्रतिवादी संख्या 1 के पास रिपोर्ट की, परन्तु तथाकथित रूप से मरीज की बात नहीं सुनी गई और उसे कहा गया कि वह केवल नियत तारीख पर ही आए। इसके बाद मरीज की योनि से हरितस्राव होना शुरू हो गया। परीक्षण के बाद, प्रतिवादी संख्या 1 ने शिकायतकर्ता को सूचित किया कि गर्भ के अंदर बच्चा मोशन पास कर रहा है और मरीज को तुरन्त दाखिल होने की सलाह दी। इलाज के बावजूद भी स्राव जारी रहा। दिनांक 24.5.1993 को मरीज को प्रसव संबंधी दर्द बढ़ाने के लिए इंजेक्शन दिया गया। लगभग 9.16 बजे प्रातः बालिका का जन्म हुआ, परन्तु वह बच्ची नहीं रोयी और डॉ. द्वारा कहा गया कि गर्भ के अंदर रहते हुए फ्लूइड और मोशन निगलने के कारण यह जन्म एसफीक्सिया है। फ्लूइड्स चूसने के बाद, 10 मिनट के बाद बच्ची रोई। बच्ची को सांस संबंधी समस्या बताई गई। प्रतिवादी संख्या 1 ने कहा कि बच्ची की सामान्य स्थिति अच्छी है। 2.00 बजे अपराह्न के बाद प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा टेलीफोन पर दिए गए परामर्श से बच्ची को बसन्त सहाय अस्पताल में ले जाया गया, जहां बच्चे को एक आपातकाल मामले के रूप में न्यूनेटल इनटेंसिल केयर यूनिट में दाखिल किया गया। दिनांक 28.5.1993 को लगभग शाम को 4.00 बजे जब बच्ची को माता के द्वारा दूध पिलाया जा रहा था, दो या तीन बूंद दूध की लेकर बच्ची नीली पड़नी शुरू हो गई और उसे तुरन्त आक्सीजन पर कर दिया गया। बच्ची को दिनांक 25.5.1993 से 8.6.1993 तक अस्पताल में रखा गया। यह आरोप लगाया गया कि प्रतिवादी संख्या 3 अस्पताल के डॉक्टरों की लापरवाही के कारण (1) बायलेटरल परवेंटीकुलेटर हैम्रेज (मस्तिष्क); (2) सेरेफेरल एडेमा (मस्तिष्क); (3) रक्त का संक्रमण; (4) न्यूमोनाइटीज; और (5) पीलिया जैसी पेचीदगियां हो गई थीं। अंततः, दिनांक 11.6. 1993 को इलाज के बाद बच्ची को डिस्चार्ज कर दिया गया। डाक्टरी लापरवाही के मामले की मांग की गई, परन्तु पार्टियों की सुनवाई करने, चिकित्सा संबंधी साहित्य का अवलेकन/परीक्षण करने और रिकार्ड पर उपलब्ध साक्ष्य को देखने के बाद राज्य आयोग ने शिकायत को खारिज कर दिया। इस आदेश से व्यथित शिकायतकर्ता ने राष्ट्रीय आयोग में मौजूदा अपील दायर की।

मुद्दा

तथाकथित डाक्टरी लापरवाही के अलावा, मुख्य मुद्दा यह था कि राज्य आयोग के आदेश में, जबकि प्रतिवादियों द्वारा चिकित्सा संबंधी साहित्य का संदर्भ दिया गया है, परन्तु शिकायतकर्ता द्वारा चिकित्सा संबंधी कोई हवाला नहीं किया गया है।

निर्णय

शिकायतकर्ता द्वारा राज्य आयोग के समक्ष पेश किए गए चिकित्सा संबंधी साहित्य पर कोई विचार नहीं किया गया। विशेषज्ञ साक्ष्य न होने को भी 'डाक्टरी लापरवाही का कोई सबूत न होने' के एक आधार के रूप में माना गया। राष्ट्रीय आयोग ने अवलोकन किया कि ऐसा बहुत कम होता है कि कोई अन्य डाक्टर व्यक्तिगत रूप से साक्ष्य देने के लिए आगे आए या किसी दूसरे डाक्टर के खिलाफ गवाही दे। इस मामले में इस कमी को सभी मुद्दों पर चिकित्सा संबंधी साहित्य पेश करके पूरा किया गया है। परन्तु राज्य आयोग में अपीलकर्ता द्वारा पेश किए गए उस चिकित्सा साहित्य को नहीं देखा गया जिसको शिकायतकर्ता ने अपने समर्थन के लिए आधार बनाया था। इस प्रकार, यह मामला पुनः सुनवाई करने के लिए और शिकायतकर्ता द्वारा पेश किए गए चिकित्सा संबंधी साहित्य पर विचार करने के बाद आदेश पारित करने के लिए राज्य आयोग को लौटा दिया गया।

तद्नुसार, अपील का निपटान किया गया।

श्रीमती शिखा बनाम डॉ. अशोक जिन्दल

I (2003) सी.पी.जे. 239 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

शिकायतकर्ता, जो एक स्कूल अध्यापक है, विपक्षी पार्टी के पास ट्यूबकटॉमी आपरेशन कराने के लिए एक प्राइवेट नर्सिंग होम में गई। यह आरोप लगाया गया कि शिकायतकर्ता ने आपरेशन प्रभारों के रूप में नर्सिंग होम को 1100/– रुपए की राशि का भुगतान किया, जिसके लिए उसे विपक्षी पार्टी द्वारा कोई रसीद नहीं दी गई। शिकायतकर्ता का कहना था कि विपक्षी पार्टी द्वारा किए गए आपरेशन के विफल हो जाने के कारण वह दोबारा गर्भवती हो गई थी और अनुरोध किया कि मुआवजे के रूप में उसे 11.00 लाख रुपए का भुगतान किया जाए। विपक्षी पार्टी ने दलील दी कि आपरेशन 'पोमेराय पद्धति' से किया गया था और इसकी विफलता दर 0.4 प्रतिशत है, और कि विपक्षी पार्टी द्वारा प्रस्तुत किए गए साहित्य के अनुसार, विफलता दर 0.1 प्रतिशत दर्शाई गई है। उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, जिला फोरम ने व्यवस्था दी कि ट्यूबक्टॉमी के आपरेशन की विफलता सेवा में की गई कमी है और 50,000/– के मुआवजे का अवार्ड दिया। जिला फोरम के आदेश से व्यथित महसूस करते हुए, विपक्षी पार्टी ने राज्य आयोग में अपील की। राज्य आयोग ने अपील को मंजूर कर लिया और जिला फोरम के आदेश को रद्द कर दिया। इसलिए, शिकायतकर्ता ने राष्ट्रीय आयोग के समक्ष एक पुनर्विचार याचिका दायर की।

मुद्दा

क्या ट्यूबक्टॉमी आपरेशन के बाद भी गर्भधारण कर लेने को सेवा में कमी माना जाएगा?

निर्णय

राष्ट्रीय आयोग ने अवलोकन किया कि यह दर्शाने के लिए रिकार्ड पर कोई विशेषज्ञ साक्ष्य नहीं लाया गया है कि आपरेशन उस तरीके से नहीं किया गया जिस तरीके से किया जाना चाहिए। इसके अलावा, यदि कोई डाक्टरी लापरवाही नहीं भी है तो गर्भधारण करने के छुटपुट मामले हो सकते हैं, जैसा कि 0.4 प्रतिशत विफलता दर दर्शाई गई है। इसलिए, यह आदेशात्मक है कि यह दर्शाने के लिए कोई विशेषज्ञ साक्ष्य लाया जाना चाहिए था कि संबंधित डाक्टर की तरफ से किसी तरह की चूक हुई है। क्योंकि ऐसा नहीं किया गया है, इसलिए कोई राहत प्रदान नहीं की जा सकती। इस प्रकार, राष्ट्रीय आयोग के आदेश को न्यायोचित ठहराया गया।

पुनर्विचार याचिका को खारिज कर दिया गया।

विनीता अशोक बनाम लक्ष्मी अस्पताल और अन्य

I (2002) सी.पी.जे. 4 (उच्चतम न्यायालय)

तथ्य

अपीलकर्ता ने 6.6.1989 को सीजेरियन आपरेशन के बाद एक लड़के को जन्म दिया। दिनांक 3.2.1990 को यह संदेह होने पर कि वह फिर से गर्भवती हो गई हैं, वह और उसका पति लक्ष्मी अस्पताल में परामर्श के लिए गए। अपीलकर्ता की प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा जांच की गई। जांच करने के उपरान्त, प्रतिवादी संख्या 2 ने अपीलकर्ता को सूचित किया कि वह गर्भवती हो गई है और यह निर्णय लिया गया कि गर्भपात कर दिया जाए, जिसके लिए 10.2.1990 की तारीख निर्धारित की गई। दिनांक 9.10.1990 को जब अपीलकर्ता अस्पताल में गई तो लेमीनेरिया टेंट का अंतर्वेशन किया गया। अगले दिन प्रतिवादी संख्या 2, अपीलकर्ता को लेबर रूप में ले गई। इसके बाद प्रतिवादी संख्या 3 ने अपीलकर्ता के पति को सूचित किया कि अपीलकर्ता को बहुत अधिक रक्तस्राव हो रहा है और इसलिए उन्होंने आपरेशन करने का निर्णय लिया। लगभग 4.00 बजे आपरेशन समाप्त हुआ और अपीलकर्ता के रिश्तेदारों को सूचित किया गया कि मरीज की हालत बेहतर है, परन्तु स्थिर है। प्रतिवादी संख्या 2 ने अपीलकर्ता के पति को सूचित किया कि यह सर्वाइकल गर्भावस्था का एक मामला है और मरीज के गर्भाशय को निकाल दिया गया। अपीलकर्ता ने राष्ट्रीय आयोग में शिकायत दायर की कि प्रतिवादियों ने समस्या का निदान करने में उचित सतर्कता और सावधानी से काम नहीं किया। राष्ट्रीय आयोग ने उसके समक्ष प्रस्तुत किए गए साक्ष्य और दलीलों का अवलोकन करने के बाद शिकायत को खारिज कर दिया, क्योंकि डाक्टरी लापरवाही का कोई मामला नहीं बनता था। आदेश से व्यथित शिकायतकर्ता ने मौजूदा अपील दायर की।

मुद्दे

क्या अपीलकर्ता का गर्भधारण सामान्य था और प्रतिवादियों ने अल्ट्रोसोनोग्राम द्वारा उचित निदान किए बिना ही लापरवाही से गर्भपात करा दिया, जिसके कारण अत्यधिक रक्तस्राव हुआ जिससे हिस्टेरक्टॉमी आवश्यक हो गई?

निर्णय

रिकार्ड पर उपलब्ध साक्ष्य और चिकित्सा संबंधी साहित्य के आधार पर उच्चतम न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि डाक्टरों के लिए यह डायगनोज करना बहुत मुश्किल था कि क्या अपीलकर्ता को एक्टोपिक गर्भावस्था थी या नहीं। मामले की इन परिस्थितियों में, अपीलकर्ता के जीवन की रक्षा करने के लिए गर्भाशय को निकालना आवश्यक था, क्योंकि उसे सर्वाइकल कैनाल में एक्टोपिक गर्भावस्था थी और अत्यधिक रक्तस्राव को रोकने के लिए हिस्टेरिकटॉमी ही केवल इसका इलाज था। ऐसे मामलों में अल्ट्रासोनोग्राम टेस्ट करने से बिल्कुल भी सुधार नहीं होगा। हालांकि, आयोग के समक्ष बड़ी मात्रा में चिकित्सा संबंधी साहित्य पेश किया गया और विशेषज्ञों के साक्ष्य प्रस्तुत किए गए, जिसमें यह दर्शाया गया कि अल्ट्रासोनोग्राफी से एक्टोपिक गर्भावस्था का पता नहीं चल सकता था। कुछ पुस्तकों से यह पता चलता है कि इस प्रकार की समस्या का पता लगाना संभव था। परन्तु यह एक सुस्थापित पद्धति है कि इस संबंध में दो विचार संभव हो सकते हैं कि क्या अल्ट्रासोनोग्राफी से एक्टोपिक गर्भावस्था का पता चल सकेगा या नहीं। इस प्रक्रिया को न अपनाने के कारण डाक्टरों पर किसी डाक्टरी लापरवाही का आरोप नहीं लगाया जा सकता। इसके अलावा, न्यायालय के समक्ष कोई ऐसी सामग्री प्रस्तुत नहीं की गई या किसी ऐसे साक्ष्य को आधार नहीं बनाया गया जिससे प्रक्रिया अपनाने, अर्थात डाइलेशन और क्रेन्टेज (डी) तथा (सी) से पहले योनि के रक्तस्राव का पता चल सके। न्यायालय ने यह भी अवलोकन किया कि डाक्टरों द्वारा हिस्ट्रोपैथोलॉजिकल परीक्षण के लिए सर्जरी के बाद 'यूट्रस और प्रॉडक्ट्स ऑफ कनसेप्शन' भेजने में विफल रहने के परिणामस्वरूप प्रतिवादियों की तरफ से किसी प्रकार की डाक्टरी लापरवाही नहीं हुई, क्योंकि उसके देखे जा सकने वाले हिस्से के कैंसरयुक्त होने की कोई शिकायत नहीं की गई थी। अपीलकर्ता द्वारा इस बाबत दी गई अन्य दलील यह है कि डाक्टरों की इस दलील कि 'अत्यधिक रक्तस्राव ट्रोपोब्लास्टिक इनवेजन या सर्वाइकल गर्भावस्था के सैल्स के पैनिट्रेशन के कारण था' को स्वीकार नहीं किया जा सकता। परन्तु इस पहलू पर कोई ध्यान नहीं दिया गया। अपीलकर्ता ने दलील दी कि प्रतिवादियों द्वारा बचाव की यह दलील थी कि रक्तस्राव ट्रोपोब्लास्टिक इनवेजन/पेनिट्रेशन के कारण हुआ, परन्तु ऐसा केवल तभी हो सकता है यदि यूट्रस की सर्वाइक्स उत्पन्न हो जाए, जो एक नियोबेसिक स्थिति है और गर्भावस्था का एक सामान्य रूप है, जो मोलर गर्भावस्था और कोरियोकार्सीनोमा के अंतर्गत आती है, जो मैलाइनेंसी गर्भावस्थाएं होती हैं और उस संभावना से बचने के लिए हिस्टोपैथोलॉजिकल परीक्षण आवश्यक था। परन्तु वास्तव में मौजूदा मामले में ऐसी स्थिति नहीं थी। यदि कुछ पेचीदगियां उत्पन्न हो भी जातीं, तो इससे किसी भी तरीके से अपीलकर्ता को किसी प्रकार की सहायता नहीं मिल सकती थी। किसी भी स्थिति में,

सर्वाइकल गर्भावस्था में गर्भपात कराना आवश्यक था, चाहे कुल हिस्टेरेकटॉमी कराकर ही ऐसा किया जाता। इस तथ्य को देखते हुए, इन पहलूओं पर अपीलकर्ता की ओर से पेश किए गए सभी तर्क महत्त्वहीन हैं। इन परिस्थितियों में, उच्चतम न्यायालय ने सही सूचित किया कि अपीलकर्ता या उसकी तरफ से किसी अन्य व्यक्ति ने एम.आई.पी. अधिनियम के अंतर्गत प्राप्त किए जाने वाले सहमति फार्म को गायब कराया होगा। इसलिए, इस संबंध में कोई शिकायत नहीं की जा सकी। इस प्रकार, राष्ट्रीय आयोग के आदेश को न्यायोचित माना गया। अपीलकर्ता, प्रतिवादी की तरफ से की गई किसी डाक्टरी लापरवाही को साबित नहीं कर सकी।

अपील खारिज कर दी गई।

श्रीमती अरुणा त्रिखा बनाम सेहरा मेडिकल सेंटर

I (2002) सी.पी.जे. 75 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

शिकायतकर्ता बुखार, उल्टी और उबकाई के साथ–साथ, सीने में तेज दर्द के लिए प्रतिवादी के पास गई। परीक्षण किए जाने के बाद, शिकायतकर्ता के पेशाब में संक्रमण पाया गया। उसे सिपलॉक्स कैपसूल दिए गए और इस इलाज से पेशाब का संक्रमण समाप्त हो गया, परन्तु बुखार बना रहा। प्रतिवादियों ने ट्रायल एंड एरर आधार पर शुरू की अवधि में मलेरिया और लारियागु के लिए शिकायतकर्ता का इलाज किया और इसके बाद क्लोरोमाइटिसीन से टाइफाइड का इलाज किया। प्रतिवादी संख्या 2 ने सी.टी. स्कैन के लिए प्रतिवादी को भेजने से इंकार कर दिया, हालांकि शिकायतकर्ता के पति द्वारा इस संबंध में बार–बार अनुरोध किया गया था। इसके पश्चात्, 30 नवम्बर 1989 को शिकायतकर्ता को डबल विज़न की समस्या हो गई और शिकायतकर्ता के पति ने प्रतिवादियों से उसे राहत देने के लिए कहा। सेहरा मेडिकल सेंटर से डिस्चार्ज होने के बाद शिकायतकर्ता को एम्स में दाखिल कराया गया। एम्स में रहते हुए उसके शरीर के बाए हिस्से में पक्षाघात हो गया और इसके बाद, मामीकोरिया–दाईं बाजू और टांग में तीव्र कंपकपी होने लगी। वह पीलिया से भी पीड़ित हो गई और 30 नवम्बर, 1989 से 23 मार्च 1990 तक एम्स में रही। इन परिस्थितियों में, शिकायतकर्ता राष्ट्रीय आयोग में गईं और प्रतिवादियों की तरफ से गम्भीर डाक्टरी लापरवाही के लिए 46,29,006 रुपए के मुआवजे का दावा किया।

मुद्दे

क्या प्रतिवादी, शिकायतकर्ता का इलाज करने में लापरवाह रहे, और क्या उन्होंने शिकायतकर्ता की बीमारी के संबंध में मानक इलाज किया था?

निर्णय

आयोग ने पाया कि प्रतिवादी संख्या 2 द्वारा किया गया इलाज एम्स के प्रारम्भिक इलाज के अनुसार था। एम्स के डाक्टर भी उसी प्रकार का इलाज कर रहे थे। डाक्टरों ने पहले पांच दिन टाइफाइड का इलाज किया। पी.यू.ओ. का सी.टी. स्कैन और इसके बाद लम्बरपंक्चर किया गया। पेशाब के संक्रमण, टाइफाइड, अज्ञात बीमारी, पीलिया की संभावना को समाप्त करने की प्रक्रिया

द्वारा अंततः उन्होंने ट्यूबरक्युलर मेनिनजाइटिस उपचार (ए.टी.टी.) का सहारा लिया। आयोग ने कहा कि जब विभिन्न बीमारियों के लक्षण एक से होते हैं तो डाक्टर एक के बाद दूसरी बीमारी को समाप्त करने की प्रक्रिया अपनाते हैं और तद्नुसार दवाइयां देते हैं। आक्रामक बीमारी का इलाज करने की प्रक्रिया खतरनाक सिद्ध हो सकती है, यदि अंत में किसी दूसरी बीमारी का पता चल जाता है। इस प्रकार, सभी प्रकार की दवाइयां देकर बीमारी समाप्त करना मरीज के लिए कल्याणकारी होता है। यह कहा जा सकता है कि डाक्टर इलाज की मुख्य प्रक्रिया से विचलित नहीं हुए। आयोग ने अंततः यह व्यवस्था दी कि प्रतिवादियों ने एक मानक इलाज को ही अपनाया। डॉ. ने ट्यूबरक्युलर मेनिनजाइटिस बताया था, जो नोट से देखा जा सकता है और एम्स के केस पेपरों से भी यह पता चलता है। इस प्रकार प्रतिवादियों की ओर से की जाने वाली कोई डाक्टरी लापरवाही साबित नहीं होती है।

शिकायत खारिज कर दी गई।

राजीन्द्र सिंह नंदल बनाम अनमोल अस्पताल और अन्य

III (2002) सी.पी.जे. 324 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

मृतक श्रीमती सुशीला नंदल जून–जुलाई, 1991 में किसी समय अत्यधिक रक्तस्राव से पीड़ित हुई थी और इस संदर्भ में प्रतिवादी संख्या 2, जो विपक्षी पार्टी संख्या 1 अस्पताल का मालिक भी है, के पास गई थी। मृतक को विपक्षी पार्टी संख्या 2 द्वारा सर्जरी, अर्थात गर्भाशय निकलवाने की सलाह दी गई थी। यह सर्जरी दिनांक 10.12.1991 को की गई थी और दिनांक 20.12.1991 को मृतक को अस्पताल से डिस्चार्ज कर दिया गया था। पेट में दर्द हो जाने पर मृतक को दोबारा दिनांक 5.4.1992 को विपक्षी पार्टी के अस्पताल में दाखिल किया गया, जहां मृतक को डायरिया और उल्टी की बीमारी बताई गई। उसे दिनांक 10.4.1992 तक ग्लूकोज की 15/20 बोतलें चढ़ाई गईं जिससे श्रमती नंदल की हालत बिगड़ गई और उसकी हालत गंभीर हो गई। इसके बाद विपक्षी पार्टी ने उसे दिनांक 10.4.1992 को तीर्थ राम अस्पताल में दाखिल करा दिया, जहां उसी दिन उसकी मृत्यु हो गई। मृत्यु के बारे में यह राय व्यक्त की गई कि मृत्यु 'डायबटिज केटोआसिडेसिस तथा पेरिफरल सर्कुलेटरी फेल्योर' के कारण हुई। यह आरोप लगाया गया कि मरीज की मृत्यु ग्लूकोज चढ़ाकर विपक्षी पार्टी संख्या 1 और 2 की लापरवाही के कारण हुई है, जबकि वे इस बात को अच्छी तरह जानते थे कि मरीज को शूगर/मधुमेह की बीमारी है। शिकायतकर्ता पति ने मुआवजे के रूप में 11,33,676/– रुपए का दावा किया।

मुद्दे

पहला यह कि क्या विपक्षी पार्टियां सर्जरी करने में लापरवाह थीं? और दूसरा यह कि क्या मृतक को चढ़ाई गई ग्लूकोज की 10/20 बोतलों का प्रभाव समाप्त करने के लिए कोई इन्सुलिन नहीं दिया गया था?

निर्णय

पहले मुद्दे के लिए रिकार्ड पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन करने पर राष्ट्रीय आयोग ने पाया कि शूगर का स्तर पूरी तरह नियंत्रित किए बिना दिनांक 10.12.1991 को मृतक की सर्जरी के बारे में शिकायत में सरसरी तौर पर उल्लेख किया गया है। शिकायत में यह उल्लेख नहीं है कि

सर्जरी की कोई शिकायत थी या दोबारा रक्तस्राव होने या कोई गायनिक समस्या थी। विशेषज्ञ गवाह डॉ. गोस्वामी अपने बयान में स्पष्ट रूप से कहते हैं कि ..... शूगर के स्तर का कोई बहुत अधिक महत्त्व नहीं है और ऐसी स्थितियों में उसका आपरेशन किया जा सकता था। इस प्रकार, पहले मुद्दे को नामंजूर कर दिया गया। ग्लूकोज के साथ इन्सुलिन न दिए जाने के दूसरे मुद्दे का शिकायतकर्ता द्वारा दिए गए साक्ष्य में समर्थन नहीं किया गया। इसके अलावा, विशेषज्ञ गवाह की यह स्पष्ट राय है कि दिनांक 8.4.1992 तक जिस पद्धति पर इलाज किया गया, उसमें किसी प्रकार की लापरवाही नहीं की गई। अगले दो दिनों, अर्थात 9 और 10 तारीख को भी इलाज की पद्धति उसी प्रकार की थी। 10 तारीख को मृतक ने सांस लेने में दिक्कत होने की शिकायत की और दो हृदय विशेषज्ञों को जांच के लिए बुलाया गया। मरीज की सामान्य स्थिति के आधार पर डॉ. माथुर ने उसे सुझाव दिया कि मरीज को तीर्थ राम अस्पताल में ले जाया जाए, जहां डॉ. माथुर एक परामर्शदाता थे। इस प्रकार, यह बात स्पष्ट है कि प्रतिवादियों द्वारा मृतक के प्रति उचित सावधानी और सतर्कता बरती गई और इस प्रकार की बीमारियों का इलाज करने में उनके पास दक्षता और ज्ञान उपलब्ध था, जो बीमारी मृतक ने प्रतिवादियों को बताई थी। राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि डाक्टरी लापरवाही का न तो कोई मामला बनता है और न ही सिद्ध हुआ है।

शिकायत खारिज कर दी गई।

श्रीमती पूनम मंगला बनाम प्रेम नाथ अस्पताल

III (2002) सी.पी.जे. 353 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

शिकायतकर्ता गर्भवती थी। वह प्रेम नाथ अस्पताल, गुड़गांव की डाक्टर (श्रीमती) के.बाला के पास चैकअप के लिए गई और उसे नियमित अंतरालों पर रूटीन चैकअप कराने की सलाह दी गई ताकि उसका रक्तचाप बेहतर मानीटरिंग द्वारा स्थिर रखा जा सके। तथापि, शिकायतकर्ता दिनांक 10.12.1992 को डाक्टर बाला के पास गई, जब वह सात महीने की गर्भवती थी। उसे 190/130 का रक्तचाप था और डॉ. बाला ने परिपक्व अवस्था से पहले प्रसव कराने की सलाह दी। शिकायतकर्ता ने अगले दिन 1.250 किलोग्राम के वजन वाली एक बालिका को जन्म दिया। दिनांक 12.12.1992 को जब बच्ची की हालत बिगड़ गई, तो शिकायतकर्ता को सलाह दी गई कि वह उसे कलावती शरण बाल चिकित्सालय, नई दिल्ली में ले जाए, जहां इनक्युबेटर आदि जैसी बेहतर चिकित्सा सुविधाएं मौजूद हैं। परन्तु जब शिकायतकर्ता का पति वहां गया तो उसने पाया कि कोई इनक्युबेटर उपलब्ध नहीं है। अंततः, वह बच्चे को गुड़गांव के पुष्पांजलि अस्पताल में ले गया, जहां इनक्युबेटर की व्यवस्था उपलब्ध थी। तथापि, उसकी हालत में कोई सुधार नहीं हुआ और दिनांक 13.11.1992 को 7.00 बजे उसकी मृत्यु हो गई। इन परिस्थितियों में, शिकायतकर्ता ने जिला फोरम में शिकायत की, जिसमें डाक्टरी लापरवाही का आरोप लगाया गया। शिकायत को मंजूर कर लिया गया और मुआवजे के रूप में 25,000/– रुपए तथा खर्चे के रूप में 5,000/– रुपए का अवार्ड दिया गया। दोनों ही पार्टियों ने राज्य आयोग के समक्ष अपील दायर की। एक ने मुआवजा बढ़ाने के लिए और दूसरे ने शिकायत को खारिज करने के लिए। राज्य आयोग ने जिला फोरम के आदेश को रद्द कर दिया और शिकायत खारिज कर दी। आदेश से व्यथित शिकायतकर्ता ने पुनर्विचार याचिका दायर की।

मुद्दा

क्या अस्पताल में इनक्युबेटर के न होने को 'सेवा में कमी' माना जाएगा?

निर्णय

राष्ट्रीय आयोग ने अवलोकन किया कि शिकायतकर्ता के सिवाय जिला फोरम के समक्ष कोई अन्य साक्ष्य नहीं था। दूसरी तरफ, साक्ष्य के रूप में तीन डाक्टरों को पेश किया गया, जिन्होंने गवाही दी कि हालांकि प्रसव के समय इनक्युबेटर की सुविधा उपयोगी होती है, परन्तु इसके अभाव में भी अन्य साधनों से तापमान को ठीक बनाए रखा जा सकता है। उन्होंने शिकायतकर्ता की इस बात का समर्थन नहीं किया कि बच्ची, जिसका जन्म परिपक्व अवधि से पहले हुआ था, के इलाज में विपक्षी पार्टी की तरफ से सेवा में कोई कमी की गई है। यह व्यवस्था दी गई कि यह नहीं कहा जा सकता कि चिकित्सा सेवाएं प्रदान करने में प्रतिवादी लापरवाह रहा है। राज्य आयोग के आदेश को न्यायोचित ठहराया गया। शिकायत में कोई सार नहीं पाया गया।

पुनर्विचार याचिका खारिज कर दी गई।

जगदीश्वर सिंह बनाम जसलोक अस्पताल एवं अनुसंधान केन्द्र और अन्य

I (2005) सी.पी.जे. 60 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

शिकायतकर्ता (एक सिविल जज – सीनियर डिवीजन) आम रूटीन खांसी जुकाम से पीड़ित था। डाक्टरों की सलाह पर वह प्रकाश डायग्नोस्टिक सैंटर, कानपुर नगर में छाती के एक्स–रे के लिए गया। रिपोर्ट के अनुसार, शिकायतकर्ता को ऊपरी बाएं भाग में 25 सें.मी. डायमीटर का 'होमोजीनियस ओवल ओपासिटी' था। इसलिए, शिकायतकर्ता ने प्रयाग मेडिकल डायग्नोस्टिक सर्विसेज लिमिटेड, कानपुर नगर में थोरेक्स का सी.टी. स्कैन करवाया। उन्होंने रिपोर्ट दी कि बाएं ऊपरी भाग में लगभग 18 सें.मी. आकार का छोटा सुनिश्चित बढ़ा हुआ लेज़न है। इस संबंध में कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया।

उपरोक्त रिपोर्टों के कारण, शिकायतकर्ता, अधिक जांच के लिए गांधी मेमोरियल एण्ड एसोसिएट्स अस्पताल, लखनऊ में गया। दिनांक 26.10.1996 को उसे आगामी जांच और इलाज के लिए टाटा मेमोरियल अस्पताल, मुम्बई को रेफर कर दिया गया। इसके बाद मुम्बई में उसकी जांच की गई और जसलोक अस्पताल एवं अनुसंधान केन्द्र, मुम्बई द्वारा दी गई दिनांक 26.12.1996 की हिस्टोपैथोलोजी रिपोर्ट से देखा गया कि साइटोमोरफोलोजिकल गुणों से एडेनोकारसीनोमा के लक्षणों का पता चलता है। इसके बाद उसने टाटा मेमोरियल अस्पताल, मुम्बई के डॉ. आर.के. देशपांडे से परामर्श किया, जिसने सलाह दी कि रिपोर्ट को ध्यान में रखते हुए, वह तुरन्त सर्जरी कराए। दिनांक 2.1.1997 को डॉ. देशपांडे ने रिपोर्ट को आधार बनाते हुए, याचिकाकर्ता का आपरेशन किया। लंग्स को खोलने के बाद, उसने उक्त लेज़न की जांच की और चूंकि वह एडेनोकारसीनोमा जैसा दिखाई नहीं दे रहा था और माइक्रोस्कोपिक जांच से यह पाया गया कि यह केवल लंग्स का कोंडरोएड हैमाटोरना है और एडेनोकारसीनोमा नहीं है। यह रिपोर्ट इस शिकायत का आधार है। यह दलील दी गई कि प्रतिवादी, अर्थात जसलोक अस्पताल में पेथोलोजिस्टों ने याचिकाकर्ता की जांच की और एडेनोकारसीनोमा की रिपोर्ट दी जो अत्यधिक भयंकर किस्म का ट्यूमर होता है और यह रिपोर्ट तथ्यात्मक रूप से गलत थी और उनके द्वारा की गई नितान्त लापरवाही का नतीजा थी। इसके कारण शिकायतकर्ता का अनावश्यक रूप से आपरेशन किया गया। इसलिए, विपक्षी पार्टियां मुआवजे का भुगतान करने के लिए जिम्मेदार हैं।

मुद्दा

क्या विपक्षी पार्टियों द्वारा राय देने में उचित सावधानी और सतर्कता बरती गई?

निर्णय

राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि शिकायत में कोई सार नहीं है। दिनांक 26.12.1996 की हिस्टोपैथोलोजिकल रिपोर्ट में यह उल्लेख किया गया है कि इससे एडेनोकारसीनोमा का संकेत मिलता है, जो बाएं लंग के ऊपरी लोबे में एफ.एन.ए.सी. (फाइन नीडल एसपाइरेशन साइटोलोजी) नोड्यूल पर आधारित थी। इसे, बायप्सी से पहले अपनाई गई प्रारंभिक निदान प्रक्रिया बताया गया और बायप्सी जैसी अंतिम नैदानिक प्रक्रिया नहीं। यह भी बताया गया कि रिपोर्ट के आधार पर शिकायतकर्ता से कहा गया कि वह टाटा मेमोरियल अस्पताल से स्वतंत्र राय ले। इन रिपोर्टों से यह नहीं कहा जा सकता कि विपक्षी पार्टियों की तरफ से स्पष्ट रूप से कोई कमी थी। इसके अलावा, यह बात स्पष्ट है कि निस्सन्देह, लेज़न पाया गया। यह पता लगाने के लिए कि लेज़न, खतरनाक है या नहीं, एफ.एन.ए.सी. परीक्षण किया गया, जिसमें यह पाया गया कि यह कोई निश्चित राय नहीं है। इस बात पर भी कोई विवाद नहीं है कि ऐसा लेज़न खतरनाक हो सकता है। फाइन नीडल बायप्सी रिपोर्ट शत–प्रतिशत सही रिपोर्ट दे सकती है। इसलिए, आयोग ने फाइन नीडल बायप्सी पर कोई अन्य साहित्य नहीं देखा। इस प्रकार, यह नहीं कहा जा सकता कि विपक्षी पार्टियों ने अपनी राय देने में उचित सावधानी और सतर्कता नहीं बरती। सेवाओं में कोई कमी नहीं पाई गई।

शिकायत खारिज कर दी गई।

पासु मूर्ति नारायण और अन्य बनाम अपोलो अस्पताल एंटरप्राइजिज लिमिटेड और अन्य

IV (2004) सी.पी.जे. 19 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

शिकायतकर्ता का पुत्र चेन्नई स्थित अपोलो कैंसर अस्पताल में गया। बीमारी को तीव्र माइलोइड ल्यूकेमिया (एम4), अर्थात ब्लड कैंसर के रूप में डायग्नोज किया गया। उसे दो चरणों में कीमोथेरेपी दी गई। जब पैथोलोजिकल रिपोर्ट से कैंसर में कमी होने का पता चला तो उसे बोन मेरो ट्रांसप्लांटेशन (बी.एम.टी.) के लिए 15 दिन बाद आने की सलाह देने के बाद अस्पताल से डिस्चार्ज कर दिया गया। इसके बाद, शिकायतकर्ता 6 महीने के बाद अस्पताल में उस समय आया जब कैंसर गंभीर रूप में दोबरा हो गया था। इस बार 46 दिन तक बीमारी का इलाज किया गया, परन्तु अंततः उसकी मृत्यु हो गई। मृतक का पिता, इलाज में लापरवाही करने के आरोप के साथ राष्ट्रीय आयोग गया।

मुद्दे

शिकायतकर्ता की मुख्य दलील यह थी कि अस्पताल में मरीज को दाखिल करने के समय विपक्षी पार्टियों ने ब्लड कैंसर से पूरी तरह ठीक होने के लिए आवश्यक इलाज के ब्यौरों का खुलासा नहीं किया और ऐसा करना सेवा में कमी करना है। यह भी आरोप अलगाया गया कि कीमोथेरेपी आरंभ करने का समय और डोज़ उचित नहीं थी तथा उचित देखभाल में कमी की गई थी।

निर्णय

राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि कीमोथेरेपी के दो चरणों के बाद मरीज को बोन मेरो ट्रांसप्लांट्स के लिए 15 दिन के अंदर वापस आने की सलाह के साथ अस्पताल से डिस्चार्ज किया गया था और इस मामले पर मरीज के पिता के साथ चर्चा भी की गई थी। परन्तु मरीज के पिता ने पूरे मामले की अनदेखी की और कैंसर के गंभीर रूप में दोबारा हो जाने के बाद ही 6 महीने बाद बच्चे को अस्पताल में लाया। प्रतिवादी ने मरीज को दूसरी बार दाखिल करने के अगले दिन

साल्वेज कीमोथेरेपी आरंभ कर दी थी और बाकी दिनों में भी उचित डाक्टरी इलाज जारी रखा। तथापि, सर्वोत्तम इलाज करने के बावजूद मरीज की मृत्यु हो गई, क्योंकि चिकित्सा सहायता समय से नहीं मांगी गई। कीमोथेरेपी की डोज़ के बारे में यह बताया गया कि कीमोथेरेपी की डोज़ अलग–अलग मरीजों को अलग–अलग मात्रा में दी जाती है और इसके लिए कोई विशिष्ट समय निश्चित नहीं किया जा सकता। आयोग ने व्यवस्था दी कि मृतक का इलाज करने में विपक्षी पार्टियों की तरफ से सेवा में कोई कमी नहीं थी।

शिकायत खारिज कर दी गई।

श्री 'क' बनाम अस्पताल 'ख'

I (2003) सी.पी.जे. 14 (उच्चतम न्यायालय)

तथ्य

अपीलकर्ता ने चंडीगढ़ से एम.बी.बी.एस. की डिग्री की पढ़ाई पूरी की और सहायक सर्जन ग्रेड I के रूप में नागालैंड राज्य चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवा में नौकरी आरंभ की। इसके बाद, उसे एम.डी. फार्माकोलोजी में दाखिले के लिए चुन लिया गया। तथापि उसे इस शर्त पर नौकरी में बने रहने की इजाजत दी गई कि अपनी पढ़ाई पूरी करने के बाद, अपनी ड्यूटी पर वापस आएगा। दोबारा ड्यूटी पर आने के बाद उसकी सगाई हो गई। परन्तु इसी बीच उसका चाचा, प्रतिवादी के चेन्नई स्थित अस्पताल में दाखिल हो गया, जिसे एओर्टिक एनुएरीज्म्स से पीड़ित के रूप में डायग्नोज किया गया। चूंकि मरीज में खून की कमी थी, इसलिए सर्जरी स्थगित कर दी गई। अपीलकर्ता और उसके ड्राइवर ने रक्तदान करने का प्रस्ताव दिया और अपीलकर्ता के खून के नमूने परीक्षण के लिए भेजे गए। बाद में परिवहन एवं संचार मंत्री ने अपीलकर्ता के भाई, बहन और बहनोई को अपने निवास स्थान पर बुलाया और सूचित किया कि अपीलकर्ता के खून की जांच अस्पताल में की गई है और यह एच.आई.वी. पाजिटिव पाया गया है। इसलिए, उसका खून एच. आई.वी. पाजिटिव होने के कारण अपीलकर्ता की शादी रद्द कर दी गई है। अगले दिन अपीलकर्ता पुष्टि के लिए अस्पताल में गया और उसके एच.आई.वी. पाजिटिव होने की पुष्टि कर दी गई। बाद में उसकी बीमारी के कारण उसका सामाजिक बहिष्कार कर दिया गया और उसे वह नौकरी छोड़ने के लिए बाध्य किया गया। उसकी व्यक्तिगत डाक्टरी सूचना के अनधिकृत प्रकटीकरण तथा अपीलकर्ता की व्यक्तिगत रिपोर्ट की गोपनीयता बनाए रखने में अस्पताल की तरफ से हुए कर्त्तव्यभंग से व्यथित उसने, अस्पताल द्वारा किए गए कर्त्तव्यभंग और उसके परिणामस्वरूप हुए पक्षपात एवं अर्जन तथा सामाजिक बहिष्कार से हुई क्षति के लिए प्रतिवादी से मुआवजे की मांग करते हुए राष्ट्रीय आयोग के समक्ष एक याचिका दायर की। अंतरिम राहत के लिए एक इंटरलोक्युटरी आवेदन भी दाखिल किया गया। इन परिस्थितियों में राष्ट्रीय आयोग ने याचिका को संक्षिप्त विचारण में खारिज कर दिया और उसे निर्देश दिया कि वह सिविल मुकदमा दायर करे। इसलिए, मौजूदा अपील दायर की गई।

मुद्दा

क्या एच.आई.वी. की स्थिति के बारे में डाक्टरी रिपोर्ट का प्रकटीकरण डाक्टरी लापरवाही माना जाएगा?

निर्णय

उच्चतम न्यायालय ने व्यवस्था दी कि उठाए गए सभी मुद्दों की विस्तार से जांच करना अनावश्यक है और न्यायालय ने मामले में इन तथ्यों को अपने निर्णय का आधार बनाया कि संबंधित अस्पताल या डाक्टर को इस बात की छूट है कि वह उस लड़की से संबंधित व्यक्ति को ऐसी सूचना प्रकट करे जिससे मरीज शादी करना चाहता है और उस लड़की को यह अधिकार था कि वह अपीलकर्ता की एचआई.वी. पाजिटिव स्थिति के बारे में जाने। इसके अलावा, न्यायालय द्वारा यह भी अवलोकन किया गया कि अपीलकर्ता की प्रस्तावित पत्नी के रिश्तेदारों को मरीज की एच.आई. वी. स्थिति प्रकट करने से अपीलकर्ता का अधिकार किसी भी तरीके से प्रभावित नहीं हुआ।

तद्नुसार आवेदन–पत्र का निपटान किया गया।

डॉ. देवेन्द्र मदान और अन्य बनाम शकुंतला देवी
(2003) सी.पी.जे. 57 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

शिकायतकर्ता का पति दिनांक 5 अगस्त, 1992 को गंभीर पेट दर्द और उल्टी की शिकायत के लिए विपक्षी पार्टी के नर्सिंग होम में दाखिल किया गया था। गेस्ट्यूट के साथ तेज पेट दर्द के रूप में अनंतिम डायग्नोसिस के बाद उसका इलाज किया गया और उसी दिन अस्पताल से डिस्चार्ज कर दिया गया। 5 और 6 तारीख के बीच की रात को उसके पेट में दोबारा तेज दर्द हुआ और 6 तारीख की सुबह ही उसे वापस नर्सिंग होम में लाया गया, जहां प्रातः 10.00 बजे उसे दाखिल किया गया। 6 तारीख को ड्रिप, इंजेक्शन और दवाइयां दी गईं तथा 7 तारीख को सोनोग्राफी भी की गई। सोनोग्राफी से गाल ब्लैडर में पथरी होने का पता चला। मरीज 10 अगस्त, 1992 (3.30 बजे शाम) तक नर्सिंग होम में इलाज कराता रहा। नर्सिंग होम से डिस्चार्ज होने के बाद, शाम को 6.30 बजे उसे एस.एम.एस. अस्पताल, जयपुर में दाखिल किया गया। वहां उसका कुछ इलाज किया गया, परन्तु 11 अगस्त, 1992 को शाम 5.30 बजे मरीज की मृत्यु हो गई। मृतक की पत्नी ने राजस्थान राज्य आयोग के समक्ष एक शिकायत दायर की, जिसमें आरोप लगाया गया कि इलाज करने में विपक्षी पार्टी की तरफ से लापरवाही की गई है। उसे पांच दिन तक नर्सिंग होम में रखा गया, परन्तु कोई सुधार नहीं हुआ। सोनोग्राफी की रिपोर्ट, शिकायतकर्ता को नहीं बताई गई और उसे तुरन्त एस.एम.एस. अस्पताल में भेज दिया गया। पार्टियों की सुनवाई करने के बाद राज्य आयोग ने दिनांक 14 अक्तूबर, 1994 के अपने बहुमत वाले निर्णय में, शिकायत में कही गई बात को आधार बनाया और व्यवस्था दी कि मरीज को 7 अगस्त, 1992 के बाद नर्सिंग होम में रखकर विपक्षी पार्टी संख्या 1 ने गंभीर लापरवाही की है। इस प्रकार, उसका स्वास्थ्य बाद में बिगड़ने, जिसके परिणामस्वरूप मरीज की मृत्यु हो गई, के लिए जिम्मेदार होने के कारण मुआवजे के रूप में 883881.65 रुपए का अवार्ड दिया। राज्य आयोग के माननीय अध्यक्ष ने यह व्यवस्था देते हुए, भिन्न राय वाला आदेश दिया कि डाक्टर की तरफ से की जाने वाली लापरवाही बिल्कुल में साबित नहीं हुई है। राज्य आयोग के आदेश से व्यथित विपक्षी पार्टी ने मौजूदा अपील दायर की।

मुद्दा

क्या मरीज को पांच दिन तक नर्सिंग होम में रखना डाक्टरी लापरवाही मानी जाएगी?

निर्णय

राष्ट्रीय आयोग ने अवलोकन किया कि मृत्यु प्रमाणपत्र के अनुसार, मृत्यु "सैप्टीसीमिया के कारण श्वसनतंत्र के अवरुद्ध होन, तीव्र कोलेसाइटिटीज्, पेरीटोनाइटिस बी/एल एसपाइरेशन नेसीमोनाइटिस" के कारण हुई। जब मरीज, अपीलकर्ता के नर्सिंग होम में इलाज करा रहा था तो उस समय इन अवस्थाओं का कोई लक्षण नहीं था। इसके अलावा, शिकायतकर्ता ने कभी भी यह नहीं कहा कि 10 मई से पहले उसने आपरेशन के लिए डाक्टर को सहमति दी थी या डाक्टर ने आपरेशन किया। ऐसा प्रतीत होता है कि 10 मई को ही उन्होंने पहली बार यह निर्णय लिया कि आपरेशन किया जाना चाहिए और वह भी एस.एम.एस. अस्पताल में। मरीज के अस्थिर रक्तचाप के कारण, अपीलकर्ता ने उन्हें सलाह दी कि मरीज को जोखिम के बिना शिफ्ट नहीं किया जा सकता। राज्य आयोग के विद्वान अध्यक्ष ने अपने भिन्न मत वाले आदेश में अवलोकन किया कि शिकायतकर्ता को साबित करना होगा कि (i) डाक्टर की तरफ से कर्त्तव्यभंग किया गया था; और (ii) कि शिकायत की गई क्षति का वास्तविक कारण कर्त्तव्यभंग था और यह क्षति तर्कसंगत ढंग से पहले से देखी जा सकती थी। यदि इस बात को ध्यान में रखा जाए तो अपीलकर्ता के खिलाफ लापरवाही का कोई मामला नहीं बनता। राज्य आयोग के बहुमत वाले आदेश को रद्द कर दिया गया और अध्यक्ष के भिन्न मत वाले निर्णय को न्यायोचित ठहराया गया। मूल शिकायत खारिज कर दी गई।

अपील मंजूर कर ली गई।

जनक कुमारी बनाम डॉ. बलविन्दर कौर नागपाल और अन्य
II (2003) सी.पी.जे. 22 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

प्रतिवादी–विपक्षी पार्टियों, डाक्टर और बीमा कम्पनी के खिलाफ श्रीमती जनक कुमारी द्वारा शिकायत दायर की गई, जिसमें डाक्टरी लापरवाही का आरोप लगाया गया। उसकी शिकायत जिला फोरम द्वारा खारिज कर दी गई। शिकायत लम्बित रहने के दौरान जनक कुमारी की मृत्यु हो गई। यह मृत्यु, प्रतिवादी डाक्टर द्वारा तथाकथित डाक्टरी लापरवाही के कारण नहीं बल्कि किसी अन्य कारण से हुई थी। उसके पति और बच्चों को उसके स्थान पर कानूनी प्रतिनिधियों के रूप में प्रतिस्थापित किया गया। राज्य आयोग ने भी कानूनी प्रतिनिधियों द्वारा दायर की गई अपील को खारिज कर दिया। शिकायत को खारिज करने के आदेश के खिलाफ, जनक कुमारी के कानूनी प्रतिनिधियों ने पुनर्विचार याचिका दायर की।

मुद्दा

क्या शिकायतकर्ता की मृत्यु के पश्चात, मुकदमा चलाने का अधिकार जीवित रहता है?

निर्णय

राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि याचिकाकर्ता का विद्वान वकील इस बारे में संतुष्ट करने में असफल रहा है कि जनक कुमारी के कानूनी प्रतिनिधियों को अब कैसे एक पार्टी के रूप में शामिल किया जा सकता है , जब वाद कारण तथाकथित टोर्ट की जिम्मेदारी से उत्पन्न हुआ था। आयोग ने सम्पत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 की धारा 3 में दी गई "एक्शनेबल क्लेम" की परिभाषा का हवाला दिया, जो निम्नलिखित है–

"दावेदार के वास्तविक या निर्माणात्मक, कब्जे में न होने वाली अचल सम्पत्ति को बंधक रखकर या अचल सम्पत्ति को रेहन या गिरवी रखकर या अचल सम्पत्ति में किसी लाभप्रद हित द्वारा प्राप्त ऋण के अलावा अन्य किसी ऋण के प्रति ऐसा दावा, जिसे सिविल न्यायालय राहत के लिए उचित आधार के रूप में स्वीकार करते हों, चाहे ऐसे ऋण के लाभप्रद हित मौजूद हों, उपचित होने की शर्त वाले हों या आकस्मिकता वाले हों।"

मुकदमा चलाने का अधिकार निश्चित रूप से सम्पत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 6(ड.) के अंतर्गत "एक्शनेबल क्लेम" नहीं है। इस बात का स्पष्ट रूप में उल्लेख किया गया है कि मुकदमा चलाने का अधिकार अंतरित नहीं किया जा सकता। इस प्रकार, यह एक सुस्थापित कानून है कि टोर्ट वाली किसी जिम्मेदारी के लिए परिसमापन न की गई क्षति का दावा केवल मुकदमा चलाने का अधिकार है, जिसे अंतरित नहीं किया जा सकता।

पुनर्विचार याचिका को खारिज कर दिया गया।

सुधीन्द्र मेडिकल मिशन अस्पताल और अन्य बनाम केन्नन वी.आर.

II (2003) सी.पी.जे. 146 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

शिकायतकर्ता बुखार से पीड़ित था। उसे विपक्षी पार्टी के अस्पताल में दाखिल किया गया। दाखिले के दूसरे दिन शिकायतकर्ता को, उसका इलाज करने वाले डाक्टर की सलाह पर सी.सी.यू. में शिफ्ट कर दिया गया। उस दिन लगभग शाम को 4.00 बजे शिकायतकर्ता अचानक आक्रामक हो गया और प्रत्येक को धकेलता हुआ तीसरे तल पर पहुंच गया और वहां से नीचे कूद गया। इसके परिणामस्वरूप उसे बहुविध चोटें लगीं। दुर्घटना के परिणामस्वरूप उसकी बायीं आंख की रोशनी जाती रही। विपक्षी पार्टियों की लापरवाही का आरोप लगाते हुए, शिकायतकर्ता जिला फोरम में गया। साक्ष्य और गवाहों के बयानों पर विचार करने के बाद जिला फोरम ने व्यवस्था दी कि शिकायतकर्ता, अस्पताल प्राधिकारियों की लापरवाही का आरोप साबित करने में विफल रहा और शिकायत को खारिज कर दिया। जिला फोरम के आदेश से व्यथित महसूस करते हुए, शिकायतकर्ता ने राज्य आयोग के समक्ष अपील की। अपने आदेश में राज्य आयोग ने अपील मंजूर कर ली और विपक्षी पार्टियों को निर्देश दिया कि वह 2.00 लाख रुपए का भुगतान करे। इसके बाद, विपक्षी पार्टियों ने राष्ट्रीय आयोग में पुनर्विचार याचिका दायर की।

मुद्दे

क्या विपक्षी पार्टियों द्वारा प्रदान की गई सेवाओं में कोई दोष था? दूसरा यह कि क्या शिकायतकर्ता तीसरी मंजिल से नीचे उस समय गिरा जब उसे अस्पताल के स्टाफ द्वारा कमरे से सी.सी.यू. में ले जाया जा रहा था या वह नर्सिंग स्टाफ को धकेलते हुए स्वयं सी.सी.यू. से बाहर आया?

निर्णय

राष्ट्रीय आयोग ने जिला फोरम की इस टिप्पणी को न्यायोचित ठहराया कि रिकार्ड पर उपलब्ध साक्ष्य और गवाहों के बयानों से शिकायतकर्ता, अस्पताल के प्राधिकारियों की तरफ से की जाने वाली डाक्टरी लापरवाही को साबित करने में विफल रहा है। हालांकि, शिकायतकर्ता ने यह दलील दी कि मरीज को सी.सी.यू. में दाखिले के बाद पर्याप्त सावधानी बरतना अस्पताल

प्राधिकारियों की जिम्मेदारी थी और यदि अस्पताल का स्टाफ अपनी ड्यूटी करने में सतर्क रहता तो यह दुर्घटना न होती। इस दलील के प्रत्युत्तर में अस्पताल के प्राधिकारियों ने दलील दी कि अस्पताल के प्राधिकारियों के पास मरीज को कोई असामान्य सुरक्षा प्रदन करने का अवसर नहीं था, क्योंकि मरीज को सी.सी.यू. में ले जाते समय वह शान्त था और उसके व्यवहार में कोई असामान्यता नहीं देखी गई थी। शिकायतकर्ता यह साबित नहीं कर सका कि मरीज जमीन पर उस समय गिरा जब उसे सी.सी.यू. में ले जाया जा रहा था और तथाकथित दुर्घटना के लिए कौन सा नर्सिंग स्टाफ जिम्मेदार था। रिकार्ड से यह बात भी प्रतीत होती है कि मरीज को मदिरापान की आदत थी। राज्य आयोग ने, जिला फोरम के आदेशों को पलट कर स्पष्ट रूप से गलती की। रिकार्ड पर कोई भी ऐसा साक्ष्य उपलब्ध नहीं हे जिससे लापरवाही साबित होती हो। इस प्रकार, राज्य आयोग के आदेश को रद्द कर दिया गया और जिला फोरम के आदेश की पुष्टि कर दी गई।

पुनर्विचार याचिका मंजूर कर ली गई।

के.एस. भाटिया बनाम जीवन अस्पताल और अन्य
IV (2003) सी.पी.जे. 9 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

शिकायतकर्ता, आंखों की समस्या के साथ डॉ. नीरज चढ्ढा, जो एक नेत्र सर्जन हैं, के पास गया, जिसने उसे ब्लड शूगर और रक्तचाप का परीक्षण कराने की सलाह दी। जब उसके इलाज से मरीज को कोई राहत नहीं मिली, तो वह दिनांक 24 मई, 1995 को विपक्षी पार्टी संख्या 1 जीवन अस्पताल में गया, जहां उसे सलाह दी गई कि वह कुछ दवाइयां ले और एफ.एफ.ए. (एस. पी.) परीक्षण कराए। यह परीक्षण, विपक्षी पार्टी संख्या 2 द्वारा किए गए। इसके बाद, शिकायतकर्ता को सलाह दी गई कि वह विपक्षी पार्टी संख्या 3 से सम्पर्क करे। जब शिकायतकर्ता विपक्षी पार्टी संख्या 3 के कमरे में गया तो विपक्षी पार्टी संख्या 3 वहां नहीं थी। विपक्षी पार्टी संख्या 2 ने ही शिकायतकर्ता का अर्गन लेजर किया और उसी दिन शाम को उसे डिस्चार्ज कर दिया गया। अपने निवास स्थान पर शिकायतकर्ता को पता चला कि उसकी आंखों की रोशनी जा चुकी है। अगले दिन वह विपक्षी पार्टी संख्या 1 अस्पताल में गया, परन्तु वहां उसे कोई डाक्टर नहीं मिला। इसके बाद, उसने डॉ. चढ़ढा से सम्पर्क किया, जिसने परीक्षण के बाद राय दी कि आर्गन लेजर उचित ढंग से नहीं किया गया, जिसके कारण लेजर के निशान रेटीना पर आ गए हैं और रेटीना क्षतिग्रस्त हो गया है। इस तथ्य की पुष्टि दिनांक 26 मई, 1995 को डॉ. हरि मोहन द्वारा भी की गई।

मुद्दा

पहला यह कि क्या विपक्षी पार्टी आर्गन टैस्ट करने में लापरवाह थी? और दूसरा यह कि क्या शिकायत दायर करने में विलम्ब हुआ है?

निर्णय

पहले मुद्दे के संबंध में रिकार्ड से यह स्पष्ट है कि विपक्षी पार्टियों ने दो दिन में, अर्थात 24 तथा 25 मई, 1995 को मरीज का इलाज किया। शिकायत दिनांक 3.9.1997 को दायर की गई। राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि शिकायतकर्ता का वाद कारण दिनांक 25.5.1996 के कार्यों से उत्पन्न हुआ माना जा सकता है। शिकायतकर्ता, जो एक पढ़ा–लिखा व्यक्ति है, को उसी शाम को पता चला कि उसकी आंखों की रोशनी चली गई है,

जिसकी पुष्टि दिनांक 25 मई, 1995 को डॉ. चढ्ढा द्वारा और बाद में दिनांक 5–6 जुलाई, 1995 को डॉ. हरि मोहन द्वारा की गई। वाद कारण कहीं समाप्त होना चाहिए और उसे चलता रहने वाला नहीं माना जा सकता। शिकायत दिनांक 3.9.1997 को 58 दिन के विलम्ब के बाद दायर की गई। इसका न तो कोई स्पष्टीकरण दिया और न ही विलम्ब माफ करने के लिए कोई आवेदनपत्र दिया गया। आयोग ने कहा कि इस बात का अनुमान लगाना शिकायतकर्ता की जिम्मेदारी नहीं है कि किस तारीख से वाद कारण उत्पन्न होगा। वास्तविक वाद कारण दिनांक 25 और 26 मई, 1995 को उत्पन्न हुआ। इस प्रकार, शिकायत दायर करने में विलम्ब हुआ। जहां तक दूसरे मुद्दे का संबंध है, शिकायतकर्ता के आरोप का मुख्य आधार डॉ. चढ्ढा की रिपोर्ट है। आयोग ने उल्लिखित सामग्री को बहुत ध्यान से पढ़ा और उसमें उस बारे में एक शब्द भी नहीं था जिसका उल्लेख शिकायत में किया गया था। आरोप का समर्थन करने वाली सामग्री नहीं पाई गई। इसके अलावा, रिकार्ड पर उपलब्ध सामग्री से इस बात की भी पुष्टि होती है कि शिकायतकर्ता "मैक्यूलर हैमरेज" नामक बीमारी या आंख के रेटीना के मैक्यूलर भाग पर रक्त आ जाने की बीमारी से पीड़ित था और हैमरेज के कारण उसकी आंख की रोशनी गई, न कि अर्गन लेज़र के कारण। अंततः, राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि शिकायतकर्ता, विपक्षी पार्टियों के खिलाफ डाक्टरी लापरवाही का कोई मामला साबित करने में विफल रहा। इसके विपरीत, उसने शिकायत में झूठा और असमर्थित विवरण दिया।

खर्चे के साथ शिकायत खारिज कर दी गई।

एल. सुनील रेड्डी और अन्य बनाम रोहिणी अस्पताल और अन्य
II (2005) सी.पी.जे. 58 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

मृतक, जो जैड.पी. हाई स्कूल में प्रधान अध्यापक के रूप में काम कर रहा था, को दिनांक 13.6.1996 को शाम को लगभग 6.00 बजे प्रतिवादी संख्या 1 अस्पताल में दाखिल किया गया, क्योंकि वह दिनांक 13.6.1996 की सुबह से ही उल्टी और खूनी दस्तों से पीड़ित था। उसे प्रतिवादी संख्या 2 के द्वारा देखा गया। वह तीन दिन तक अस्पताल में रहा। इस अवधि के दौरान अनेक टैस्ट किए गए तथा खून चढ़ाया गया और आई.वी. फ्लूइड दिया गया। दिनांक 15 और 16 जून, 1996 को मृतक की हालत बिगड़ गई और उसे मेडरिन अस्पताल, हैदराबाद में शिफ्ट करना पड़ा, जहां दिनांक 17.6.1996 को उसकी मृत्यु हो गई। यह दलील दी गई कि प्रतिवादी रक्तस्राव रोकने और नियंत्रित करने के लिए आवश्यक आपरेशन करने में विफल रहे। शिकायतकर्ता ने 'सेवा में कमी' के लिए मुआवजे के रूप में 4,50,000/– रुपए का दावा किया। जिला फोरम ने उस संबंधित सामग्री पर विचार किया, जो रिकार्ड पर लाई गई थी और प्रतिवादी को निर्देश दिया कि वह मुआवजे के रूप में 3,10,000/– रुपए का भुगतान करे। इससे व्यथित विपक्षी पार्टियों ने राज्य आयोग के समक्ष अपील दायर की और इसे यह व्यवस्था देते हुए मंजूर कर लिया गया कि डाक्टर ने दवाई देकर इलाज की पुरातन पद्धति अपनाई। इसलिए, मौजूदा पुनर्विचार याचिका दायर की गई।

मुद्दा

क्या रक्तस्राव रोकने और नियंत्रित करने के लिए आवश्यक आपरेशन करने में विफल रहने को सेवा में कमी माना जाएगा?

निर्णय

राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि राज्य आयोग द्वारा रिकार्ड किए गए निष्कर्ष को किसी भी तरीके से गलत नहीं कहा जा सकता। डाक्टरी लापरवाही के संबंध में कानून सुस्थापित है। कोई डाक्टर, लापरवाही का दोषी नहीं होता यदि उसने, उस विशेष कार्य में दक्ष चिकित्सकों के किसी जिम्मेदार निकाय द्वारा 'उचित' के रूप स्वीकार की गई पद्धति के अनुसार कार्य किया है।

यह निर्णय लेना विशेषज्ञ डाक्टर का काम है कि किस प्रकार का इलाज किया जाए और कि क्या आपरेशन किया जाना चाहिए या नहीं। डाक्टरों या अस्पताल से इस ड्यूटी की अपेक्षा की जाती है कि वे इलाज करने में उचित सावधानी बरतेंगे। किसी अनिष्ट के लिए उनकी निन्दा नहीं की जा सकती। निस्संदेह, मौजूदा मामले में, मरीज 1988 से पेप्टिक अल्सर से पीड़ित था और उसने नियमित खुराक संबंधी आदतें नहीं अपनायी। इसके अलावा, मृतक मदिरापान और धूम्रपान का पुराना आदि था और उसके सीरम बिलिरूबिन में वृद्धि हो गई थी। दिनांक 14.6.1996 को एन्डोस्कोपी की गई और दिनांक 13.6.1996 को नहीं, क्योंकि यह महसूस किया गया कि एन्डोस्कोपी करने के दौरान ट्यूब के सन्निवेश से रक्तस्राव में पेचीदगी उत्पन्न हो सकती है। डॉ. वेंकुलु रेड्डी ने एन्डोस्कोपी की और उसके अनुसार उस दिन मरीज की हालत नाजुक थी। ऐसी स्थिति में उसका आपरेशन नहीं किया जा सकता और यदि ऐसा किया जाएगा तो आपरेशन टेबल पर ही उसकी मृत्यु हो जाएगी। उपरोक्त साक्ष्य पर विचार करते हुए राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि सेवा में कोई कमी नहीं थी। राज्य आयोग के आदेश को न्यायोचित ठहराया गया।

पुनर्विचार याचिका खारिज कर दी गई।

भारत पैथोलोजी लेबोरेटरी बनाम मांगी लाल व्यास

III (2003) सी.पी.जे. 94 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

शिकायतकर्ता/प्रतिवादी को आपरेशन कराना था और तदनुसार याचिकाकर्ता द्वारा उसके ब्लड ग्रुप का टैस्ट किया गया। आपरेशन के लिए याचिकाकर्ता द्वारा दो टैस्ट किए गए, परन्तु उसके द्वारा भिन्न–भिन्न ब्लड ग्रुप रिकार्ड किए गए। इन परिस्थितियों में, शिकायतकर्ता ने जिला फोरम में शिकायत दायर की, जिसमें आरोप लगाया गया कि डाक्टरी लापरवाही की गई है। जिला फोरम और राज्य आयोग, दोनों समवर्ती निष्कर्ष पर पहुंचे कि खून की गलत रिपोर्ट देना डाक्टरी लापरवाही का मामला है और 5000/– रुपए के मुआवजे का अवार्ड दिया। इसलिए, मौजूदा पुनर्विचार याचिका दायर की गई।

मुद्दे

खून की गलत ग्रुपिंग से गंभीर पेचीदगी हो सकती थी, क्योंकि प्रतिवादी की खून चढ़ाने की आपातिक स्थिति थी। क्या यह लापरवाही है?

निर्णय

यह मामला स्वीकार किए जाने के लिए सामने आया और उस चरण में ही याचिकाकर्ता की दलीलों की सुनवाई की गई तथा मामला आदेश के लिए सुरक्षित रखा गया। इसी बीच, राष्ट्रीय आयोग की जानकारी में यह बात लाई गई कि जिला फोरम के आदेश को ध्यान में रखते हुए, मामले का निपटारा दोनों पार्टियों के बीच में हो गया है। तदनुसार, मामले को वापस ले लिए गए मामले के रूप में इसे खारिज कर दिया गया।

श्रीमती ओ. आयशा बी.एल. और अन्य बनाम प्रो. जे.आर. डेनियल

III (2003) सी.पी.जे. 178 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

मृतक की पीठ के निचले भाग में दर्द था और कुछ टैस्टों, अर्थात बोन बायप्सी के लिए उसके आर्थोपैडिक सर्जन द्वारा उसे विपक्षी पार्टी के पास भेजा गया। यह आरोप लगाया गया कि लोकल एनेस्थीसिया के अंतर्गत विपक्षी पार्टी ने 12 एफ बोन बायप्सी नीडल ड्रिल की। यह सूचना दी गई कि बायप्सी की प्रक्रिया में विपक्षी पार्टी ने लापरवाही से ब्लड वैसल का भेदन कर दिया, जिसके परिणामस्वरूप आंतरिक रक्तस्राव और तेज दर्द हो गया। जब विपक्षी पार्टी को सलाह से कुछ अधिक सहायता नहीं मिल सकी और दर्द होता रहा तो मृतक को चेन्नई के अपोलो अस्पताल में ले जाया गया और एक आपातकालीन सर्जरी की गई और लम्बर आरट्री को ठीक किया गया, परन्तु वास्तव में मृतक कभी भी पूरी तरह ठीक नहीं हुआ। उसे मरकरी नर्सिंग होम और आयशा नर्सिंग अस्पताल में ले जाया गया, परन्तु कोई फायदा नहीं हुआ और अंततः दिनांक 21.8.1998 को उसकी मृत्यु हो गई।

मुद्दा

क्या विपक्षी पार्टी की लापरवाही के कारण बायप्सी नीडल ने ब्लड वैसल का भेदन किया, जिससे मृतक कभी भी ठीक नहीं हुआ और इसके कारण उसकी मृत्यु हो गई?

निर्णय

शिकायतकर्ता के विद्वान वकील को कई अवसर दिए गए कि वह शिकायत में दिए गए तथ्यों को साबित करने के लिए किसी डाक्टर की रिपोर्ट दाखिल करे। आरोप के समर्थन में राष्ट्रीय आयोग के समक्ष न तो उक्त रिपोर्ट दाखिल की गई और न ही कोई चिकित्सा संबंधी साहित्य पेश किया गया। शिकायतकर्ता के विद्वान वकील के पास इस विषय में कोई निर्देश नहीं थे। राष्ट्रीय आयोग ने पाया कि विपक्षी पार्टी द्वारा नीडल बायप्सी के लिए अपनाई गई प्रक्रिया में लापरवाही दर्शाने वाला कोई साक्ष्य रिकार्ड पर उपलब्ध नहीं है। इस प्रकार, राष्ट्रीय आयोग ने मामले के गुणावगुणों पर कोई टिप्पणी किए बिना गैर–अभियोजन के आधार पर शिकायत खारिज कर दी।

शिकायत खारिज कर दी गई।

निदेश कौशल और अन्य बनाम डॉ. के.के. खुरन्द

III (2002) सी.पी.जे. 297 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

शिकायतकर्ता के पिता को दिनांक 5.10.1999 को तेज बुखार था। उसे इलाज के लिए विपक्षी पार्टी के पास लाया गया। परीक्षण करने के बाद विपक्षी पार्टी ने पाया कि मरीज मधुमेह और तपेदिक से पीड़ित है और उसके लिए दवाइयां लिख दीं। चूंकि हालत में कोई सुधार नहीं हुआ, इसलिए उसे दोबारा विपक्षी पार्टी के पास ले जाया गया। विभिन्न टैस्ट करने के बाद विपक्षी पार्टी ने कहा कि मरीज को अत्यधिक ब्लड शूगर है और हृदय संबंधी बीमारी नहीं। दिनांक 10/1/2000 को मरीज ने सीने में तेज दर्द की और सांस लेने में दिक्कत की शिकायत की। परीक्षण करने के बाद विपक्षी पार्टी ने कहा कि कोई गंभीर बीमारी नहीं है। उसी दिन जब शिकायतकर्ता मरीज को उसके निवास स्थान पर ले जाया जा रहा था तो मरीज की हालत बिगड़ गई। उसे तुरन्त स्थानीय सिविल अस्पताल में ले जाया गया, जहां डाक्टरों ने ई.सी.जी. टैस्ट किया और राय दी कि मरीज को दिल का तेज दौरा पड़ा है और उसे जनरल अस्पताल, चंडीगढ़ को रेफर कर दिया, परन्तु दिल में तेज दर्द और सांस लेने में पीड़ा के कारण मरीज की रास्ते में ही मृत्यु हो गई। शिकायतकर्ता ने राज्य आयोग में डाक्टरी लापरवाही की शिकायत की, परन्तु राज्य आयोग ने शिकायत खारिज कर दी। इसलिए, मौजूदा अपील दायर की गई।

मुद्दा

क्या विपक्षी पार्टी इलाज करने में लापरवाह थी और इलाज का स्वीकार किया गया तरीका नहीं अपना रही थी?

निर्णय

साक्ष्य का अवलोकन करने के बाद, राष्ट्रीय आयोग ने कहा कि मृतक मधुमेह, अनीमिया और दोनों फेफड़ों में तपेदिक का एक नाजुक मरीज था और ई.सी.जी. में हृदय की कोई पिछली बीमारी नहीं दिखाई गई थी। विपक्षी पार्टी द्वारा अपनाया गया इलाज का तरीका न तो गलत था और न ही लापरवाही का या सेवा में कमी का कोई काम किया गया था। पी.डी. पाठक द्वारा

दाखिल किया गया हलफनामा भी यह नहीं दर्शाता कि विपक्षी पार्टी द्वारा अपनाया गया इलाज का तरीका विपरीत था। विपक्षी पार्टी ने इलाज का सही तरीका अपनाया था। इसलिए, राज्य आयोग के आदेश में कोई गलती नहीं पाई गई और इसे न्यायोचित पाया गया।

अपील को खारिज कर दिया गया।

लक्ष्मणन बनाम आर. श्रीकान्तन एम.एस. और अन्य

I (2004) सी.पी.जे. 26 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

अपनी टांग पर वेरीकोज वेन का इलाज कराने के लिए शिकायतकर्ता विपक्षी पार्टी संख्या 1 और 2 के पास गया। उसे सर्जरी की सलाह दी गई। वह दिनांक 13.9.1993 को अस्पताल में दाखिल हो गया और उसका आपरेशन कर दिया गया। आपरेशन के दो दिन बाद उसे तेज दर्द हुआ और इलाज करने के बावजूद उसकी हालत बिगड़ गई तथा आपरेशन के 36वें दिन उसे कोट्टायम मेडिकल कॉलेज एवं अस्पताल को रेफर कर दिया गया। जब कोट्टायम मेडिकल कॉलेज एवं अस्पताल में शिकायतकर्ता को पता चला कि उसकी टांग काटनी पड़ेगी तो वह विपक्षी पार्टी के पास वापस आया। उसे दोबारा त्रिवेन्द्रम मेडिकल कॉलेज भेज दिया गया और उसकी दांयी टांग, घुटने के ऊपर से काट दी गई। शिकायतकर्ता द्वारा आराप लगाया गया कि विपक्षी पार्टी संख्या 1 और 2 द्वारा लापरवाही से किए गए इलाज के कारण उसकी टांग काटनी पड़ी। रिकार्ड पर प्रस्तुत की गई सामग्री पर उचित ढंग से विचार करने के बाद, जिला फोरम और राज्य आयोग इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि शिकायतकर्ता का इलाज करने में विपक्षी पार्टियों ने लापरवाही नहीं की और शिकायत खारिज कर दी।

मुद्दा

क्या विपक्षरी पार्टियों की तरफ से कोई लापरवाही की गई?

निर्णय

पेश किए गए साक्ष्य से यह साबित नहीं किया जा सका कि नर्सिंग होम में आपरेशन करने और बाद में शिकायतकर्ता का इलाज करने के मामले में विपक्षी पार्टियां लापरवाह रहीं या उन्होंने सेवा में कमी की। अभियोजन पक्ष के गवाह संख्या 3, जो सेफिस्टीकेटिड मेडिकल कॉलेज, त्रिवेन्द्रम का एक डाक्टर है, का दिया गया बयान यह है कि इस प्रकार की परिस्थितियों में मेडिकल अस्पताल में भी शिकायतकर्ता को वही इलाज और इवाइयां दी जातीं, जो उसे विपक्षी पार्टी के नर्सिंग होम में दी गई थीं। इस प्रकार, शिकायतकर्ता की टांग काटने में विपक्षी पार्टी द्वारा की गई कोई लापरवाही साबित नहीं हुई। इसलिए, शिकायतकर्ता द्वारा किए गए मुआवजे के दावे को स्वीकार नहीं किया जा सकता।

अपील खारिज कर दी गई।

माम चन्द बनाम मंगत अस्पताल का डॉ. जी.एस. मंगत

I (2004) सी.पी.जे. 79 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

शिकायतकर्ता /अपीलकर्ता की दुर्घटना हो गई और वह प्रतिवादी के पास गया, जिसने प्रारंभिक इलाज के बाद, चार दिन इलाज करने के बाद शिकायतकर्ता का आपरेशन कर दिया और 'एल' लेटिंग फिक्स कर दी। बाद में शिकायतकर्ता ने आरोप लगाया कि डाक्टर द्वारा इलाज में चूक करने तथा लापरवाही करने के कारण उसे गैंगरीन हो गया, जिसके परिणामस्वरूप उसकी टांग काटनी पड़ी। पार्टियों की सुनवाई करने और सारवान साक्ष्य तथा चिकित्सा संबंधी साहित्य की जांच करने के बाद राज्य आयोग ने, ड्रेनेज ट्यूब का सन्निवेश न करने के अलावा सभी प्रकार की लापरवाही के बारे में दी गई दलील नामंजूर कर दी। ड्रेनेज ट्यूब का सन्निवेश न करने के लिए, इलाज करने वाले डाक्टर को निर्देश दिया गया कि वह 30,000/– रुपए का भुगतान करे। राज्य आयोग के आदेश से व्यथित दोनों पार्टियों ने राष्ट्रीय आयोग के समक्ष दो अलग–अलग अपीलें दायर की।

मुद्दे

पहला यह कि क्या फ्रैक्चर का इलाज करने के लिए अपनाई गई प्रक्रिया उचित नहीं थी? दूसरा यह कि क्या उपकरण का उचित निष्कीटन नहीं किया गया था और आक्सीजन पहुंचने के लिए सीवनों के बीच में कोई फासला नहीं छोड़ा गया था और ड्रेनेज ट्यूब का सन्निवेश नहीं किया गया था? क्या लापरवाही के इन्हीं कार्यों के कारण गैंगरीन हो गया था और मरीज की टांग काटनी पड़ी?

निर्णय

राष्ट्रीय आयोग इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि चिकित्सा संबंधी साहित्य और रिकार्ड पर उपलब्ध सामग्री के अनुसार यह कहा जा सकता है कि इलाज का तरीका नियमानुसार था और डाक्टर की तरफ से कोई लापरवाही नहीं की गई। सीवनों के बीच फासला छोड़ने के संबंध में दूसरा मुद्दा भी साक्ष्य न होने के कारण नामंजूर कर दिया गया। तीसरा आरोप ड्रेन पाइप का

सन्निवेश न करने के बारे में है। इस मुद्दे पर जोहन क्रायफोर्ड एडम्स द्वारा लिखित आपरेटिव सर्जरी आर्थोपेडिक्स, ए. कस्चेरी द्वारा लिखित एसंशियल सर्जरी प्रैक्टिस जैसी मानक पुस्तकों से विभिन्न साहित्य पेश किए गए। प्रस्तुत की गई सामग्री के आधार पर आयोग ने निष्कर्ष दिया कि ड्रेनेज ट्यूब का सन्निवेशन न करने को बिल्कुल भी डाक्टरी लापरवाही का मामला नहीं कहा जा सकता। इस प्रकार शिकायतकर्ता, डॉ. मंगत की तरफ से की गई किसी डाक्टरी लापरवाही को साबित नहीं कर सका। डाक्टरी लापरवाही के लिए किसी जिम्मेदारी के बिना शिकायतकर्ता की अपील खारिज कर दी गई।

अपील खारिज कर दी गई।

डॉ. हरकंवलजीत सिंह सैनी बनाम गुरबक्श सिंह और अन्य

I (2003) सी.पी.जे. 153 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

शिकायतकर्ता गुरबक्श सिंह पेट में दर्द के कारण डॉ. सैनी के पास गया। इस मामले में आपरेशन का सुझाव दिया गया। उसे दिनांक 25.6.1998 से 4.7.1998 तक की अवधि के लिए डॉ. सैनी के अस्पताल में दाखिल किया गया। डॉ. सैनी ने मरीज के गुरदे से पथरी निकालने के लिए आपरेशन किया। शिकायतकर्ता ने आरोप लगाया कि आपरेशन के बाद और अस्पताल से डिस्चार्ज होने के बाद भी उसे तेज दर्द महसूस हो रहा है। शिकायतकर्ता ने डॉ. सैनी से सम्पर्क किया और डॉ. सैनी ने उसे एक और एक्सरे कराने की सलाह दी। इस एक्सरे रिपोर्ट से दांये रिनल भाग में एक छोटी पथरी का पता चला। एक्सरे की जांच करने के बाद, डॉ. सैनी ने शिकायतकर्ता को सलाह दी कि वह पी.जी.आई., चंडीगढ़ में अपना चैकअप कराए। शिकायतकर्ता पी.जी.आई., चंडीगढ़ में नहीं गया बल्कि उसने किसी अन्य डाक्टर से सम्पर्क किया, जिसने उसे एक और आपरेशन की सलाह दी। इन परिस्थितियों में शिकायतकर्ता ने जिला फोरम में शिकायत दायर की, जिसमें डाक्टरी लापरवाही का आरोप लगाया गया। इस शिकायत को खारिज कर दिया गया, परन्तु अपील करने पर राज्य आयोग ने शिकायत को मंजूर कर लिया। इस आदेश से व्यथित डॉ. सैनी ने राष्ट्रीय आयोग के समक्ष यह पुनर्विचार याचिका दायर की।

मुद्दा

क्या विशेषज्ञ के साक्ष्य के अभाव में याचिकाकर्ता (डॉ. सैनी) को डाक्टरी लापरवाही के लिए जिम्मेदार माना जा सकता है?

निर्णय

शिकायतकर्ता ने किसी विशेषज्ञ का साक्ष्य पेश नहीं किया। यह कोई ऐसा मामला नहीं है जिस पर 'रेस इप्सा लोक्यूटर' का सिद्धान्त लागू होता हो। यह साबित करना शिकायतकर्ता की जिम्मेदारी थी कि डॉ. सैनी द्वारा किए गए आपरेशन में लापरवाही की गई थी। इस बात का उल्लेख किया गया कि शिकायतकर्ता ने वह पहला एक्सरे पेश नहीं किया, जिसकी जांच करने के आधार पर डॉ. सैनी द्वारा आपरेशन किया गया था। यदि डॉ. सैनी को कुछ छिपाना होता तो वह

शिकायतकर्ता को मेटाबोलिक विश्लेषण के लिए पी.जी.आई., चंडीगढ़ में रेफर न करता। शिकायतकर्ता ने उस डाक्टर को पेश नहीं किया, जिसने उसे दूसरे आपरेशन की सलाह दी थी और यह आपरेशन कैसे तथा कहां किया गया था और इसका क्या परिणाम निकला था। शिकायतकर्ता का यह बयान शिकायतकर्ता के मामले को बल नहीं देता है कि विशेषज्ञ डाक्टर की राय के अनुसार शिकायतकर्ता का डॉ. सैनी द्वारा उचित इलाज नहीं किया गया। राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि राज्य आयोग अपने आपको एक विशेषज्ञ निकाय नहीं मान सकता और डाक्टर के बयान का प्रतिरोध नहीं कर सकता, जब तक कि विशेषज्ञ की राय के रूप में रिकार्ड पर कोई विपरीत सामग्री न हो या कोई चिकित्सा संबंधी ऐसा दस्तावेज मौजूद हो जिसे आधार बनाया जा सके। मौजूदा मामले में, डॉ. सैनी ने कहा कि एक्सरे रिपोर्ट से एक छोटी पथरी का पता चला और कि ऐसी पथरी की छाया, कलकुलस के अलावा अन्य अनेक कारणों से दिखाई देती है। इन परिस्थितियों में, राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि शिकायतकर्ता लापरवाही का कोई मामला साबित नहीं कर सका। इस प्रकार, राज्य आयोग का आदेश रद्द कर दिया गया और जिला फोरम के आदेश की पुष्टि कर दी गई। खर्चे के साथ शिकायत खारिज कर दी गई।

पुनर्विचार याचिका मंजूर कर ली गई।

डॉ. आर.सी. शर्मा बनाम जागे राम

I (2003) सी.पी.जे. 248 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

शिकायतकर्ता जागे राम को पेशाब संबंधी कुछ शिकायत थी और मेडिकल कॉलेज, रोहतक की सलाह पर उसने सर्जरी कराई। यह सर्जरी शिकायतकर्ता ने याचिकाकर्ता से कराई, जो एक योग्यताप्राप्त सर्जन है और प्राइवेट प्रैक्टिस कर रहा है। पहली सर्जरी दिनांक 7.6.1993 को की गई। उसका दूसरी बार आपरेशन किया गया, क्योंकि निरंतर रक्तस्राव हो रहा था। दूसरी सर्जरी के बावजूद, रक्तस्राव होता रहा, जो संभवतः ब्लड कैंसर के कारण था। फिर शिकायतकर्ता को सलाह दी गई कि वह मेडिकल कॉलेज अस्पताल, रोहतक से सम्पर्क करे। यहां उसका दो बार आपरेशन किया गया। शिकायतकर्ता ठीक हो गया, परन्तु उसने जिला फोरम के समक्ष शिकायत दायर की, जिसमें याचिकाकर्ता पर डाक्टरी लापरवाही करने का आरोप लगाया गया। पार्टियों की सुनवाई करने और रिकार्ड पर उपलब्ध सामग्री तथा साक्ष्य का अवलोकन करने के बाद जिला फोरम ने पाया कि याचिकाकर्ता लापरवाह था और मुआवजे के रूप में 50,000/– रुपए का अवार्ड दिया। इस आदेश के खिलाफ दायर की गई अपील राज्य आयोग द्वारा खारिज कर दी गई। इसलिए, यह पुनर्विचार याचिका दायर की गई।

मुद्दे

पहला यह कि सर्जरी से पहले कोई बायप्सी नहीं की गई और दूसरा यह है कि प्रोस्टेट कैंसर के किसी सबूत के बिना प्रोस्टेट ग्रन्थि निकाल दी गई।

निर्णय

राष्ट्रीय आयोग ने अवलोकन किया कि शिकायतकर्ता को सर्जरी की सलाह दी गई थी और वह अपनी मर्जी से याचिकाकर्ता के पास गया, जिसने एक योग्यताप्राप्त सर्जन होने के नाते, पेशाब संबंधी समस्या को दूर करने के लिए सर्जरी की। सर्जरी के दौरान उसने पाया कि प्रोस्टेट कैंसर के लक्षण हैं और उस निर्णय के आधार पर प्रोस्टेट ग्रन्थि निकाल दी। यदि शिकायतकर्ता की यह दलील है कि याचिकाकर्ता को प्रोस्टेट ग्रन्थि निकालने से पहले कैंसर की मौजूदगी की पुष्टि कर लेनी चाहिए थी, तो यह एक पेचीदा स्थिति होगी। याचिकाकर्ता से यह अपेक्षा कैसे की जा सकती

थी कि वह उसे सर्जरी के बीच में छोड़ दे, नमूना बायप्सी के लिए भेजे और आपरेशन के लिए शिकायतकर्ता की दोबारा चीरफाड़ करे। यह कोई स्वीकार की गई पद्धति नहीं है। ऐसे डाक्टर का उसी समय लिया गया निर्णय महत्त्वपूर्ण होता है, जो एक योग्यताप्राप्त सर्जन है और उसके पास आवश्यक अनुभव है। जहां तक बायप्सी के मुद्दे का संबंध है, बायप्सी केवल तभी की जा सकती है यदि कैंसर का संकेत है। चूंकि मेडिकल कॉलेज अस्पताल द्वारा रिकार्ड किया गया कोई ऐसा संकेत नहीं था, फिर भी उसे सर्जरी के लिए फिट पाया, इसलिए सर्जरी से पहले बायप्सी कराने का याचिकाकर्ता के पास कोई आधार नहीं था। सर्जरी के दौरान ही याचिकाकर्ता ने प्रोस्टेट कैंसर के लक्षण देखे, जिसके आधार पर उसने प्रोस्टेट ग्रन्थि निकाल दी। इस प्रकार, राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि याचिकाकर्ता की तरफ से कोई लापरवाही नहीं की गई। ज्यादा से ज्यादा, प्रोस्टेट निकालने में निर्णय लेने संबंधी गलती हो सकती है, परन्तु यह एक सुस्थापित सिद्धान्त है कि निर्णय लेने में हुई गलती को डाक्टरी लापरवाही नहीं माना जा सकता। दोनों फोरमों के आदेश रद्द कर दिए गए और शिकायत खारिज कर दी गई।

पुनर्विचार याचिका मंजूर कर ली गई।

एस.के.शर्मा बनाम डॉ. प्रफुल बी. देसाई
II (2003) सी.पी.जे. 96 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

शिकायतकर्ता की पत्नी को दाएं स्तन में कैंसर था। मरीज को सलाह दी गई कि वह टाटा मेमोरियल अस्पताल, मुम्बई के डॉ. प्रफुल्ल देसाई से परामर्श करे। दिनांक 12.8.1994 को प्रतिवादी ने मरीज को टाटा मेमोरियल अस्पताल के डॉ. गोपाल, वरिष्ठ कीमोथेरेपिस्ट को रेफर किया, जहां जांच के बाद डॉ. गोपाल ने 17.8.1994 को कीमोथेरेपी का इलाज शुरू किया और दिनांक 28.9. 1994 को कीमोथेरेपी के तीन चक्र पूरे किए। मरीज की प्रतिवादी द्वारा जांच की गई। इलाज की प्रगति को 'बहुत अच्छा' नोट किया गया और कीमोथेरेपी के एक और चक्र की सलाह की दी गई। मरीज की जांच अस्पताल के दो वरिष्ठ डाक्टरों द्वारा की गई और डाक्टरों ने नोट किया कि कैंसर से प्रभावित दाएं स्तन की कीमोथेरेपी का प्रत्युत्तर अच्छा रहा है। यह भी नोट किया गया कि बायां स्तन सामान्य है। इसी बीच, मरीज का रेडियोथेरेपी भी कराया गया और इसकी प्रगति उत्कृष्ट पाई गई। कीमोथेरेपी के दो और चक्रों के बाद, प्रतिवादी ने ट्यूमर सैल्स के डिजनरेट होने का नोटिस किया और प्रतिवादी द्वारा बीच कैंडी अस्पताल में दिनांक 27.4.1995 को दाएं स्तन की सर्जरी (मोडिफाइड रेडिकल मास्टकटॉमी) की गई। इसके बाद, मृतक ने दिनांक 21.9.1995 को प्रतिवादी अस्पताल का दौरा किया और इसके बाद वह कैंसर के इलाज के लिए यू.एस.ए. चली गई। भारत में वापस आने पर उसे कीमोथेरेपी का एक और चक्र दिया गया और दिनांक 21.9.1995 को प्रतिवादी द्वारा उसकी जांच की गई। इसके बाद, उसे प्रतिवादी ने कभी नहीं देखा, हालांकि मृतक पूरे चक्र के लिए टाटा मेमोरियल अस्पताल में ही दाखिल रही। संभवतः मृतक दोबारा यू.एस.ए. चली गई और उसके पश्चात भारत वापस आई तथा दिनांक 19.3.1996 को उसकी मृत्यु हो गई। इस प्रकार, मृतक के पति ने राज्य आयोग में शिकायत की, जिसमें प्रतिवादी द्वारा डाक्टरी लापरवाही करने का आरोप लगाया गया। राज्य आयोग ने पार्टियों की सुनवाई करने के बाद और रिकार्ड पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन करने के बाद शिकायत को खारिज कर दिया। इस प्रकार राष्ट्रीय आयोग के समक्ष यह अपील की गई।

मुद्दे

पहला मुद्दा यह था कि मृतक के बाएं स्तन का इलाज नहीं किया गया था, जो डाक्टरी लापरवाही का मामला बनता है, और दूसरा यह कि प्रतिवादी द्वारा अपनाया गया इलाज का तरीका सही नहीं था।

निर्णय

राष्ट्रीय आयोग ने अस्पताल के रिकार्ड से अवलोकन किया कि बाएं स्तन की जांच दिनांक 11.8.1994 को की गई थी और दिनांक 15.11.1994 को बायां स्तन सामान्य पाया गया और दोबारा दिनांक 21.5.1995 को जब "एल/एक्सीला+एस.एल./जी.नोड+पलपेबल" नोट किया गया। इसके अलावा, प्रतिवादी द्वारा दाखिल किए गए इस लिखित बयान को कोई चुनौती नहीं दी गई कि जो कुछ वरिष्ठ डाक्टर ने बाएं स्तन में नोट किया, वह 'लेक्सिला/टाइनी नोड' वास्तव में 'फेटिनोड्यूल' था। इस प्रकार, बायां स्तन कभी भी कैंसर से प्रभावित नहीं था। इसलिए उसका इलाज विशेष रूप से नहीं किया गया। राष्ट्रीय आयोग ने यह भी नोट किया कि कीमोथेरेपी एक उचित ढंग से किया गया इलाज है, जो पूरे शरीर का इलाज करता है और शरीर के किसी विशिष्ट भाग का नहीं। इस दलील को नामंजूर कर दिया गया कि 'माम्मोग्राफी' अनिवार्य थी और बाएं स्तन का इलाज नहीं किया गया। इलाज के तरीके के बारे में दूसरी दलील को भी नामंजूर कर दिया गया। मृतक कैंसर के अग्रवर्ती चरण से पीड़ित थी, जिसके लिए कीमोथेरेपी और रेडियोथेरेपी का मिश्रित इलाज किया गया। फिर भी, जब बीमारी दोबारा हो गई, तो इसके लिए सर्जरी की गई। प्रतिवादी डॉ. ने इलाज की स्वीकार की गई प्रक्रिया को ही अपनाया। इसके अलावा, अपीलकर्ता यह सिद्ध करने में आयोग के समक्ष प्रतिवादी या किसी अन्य डाक्टर का बयान लेने में भी विफल रहा कि इलाज के स्वीकार किए गए तरीके को नहीं अपनाया गया। यह दुर्भाग्य की बात है कि फिर भी मरीज को नहीं बचाया जा सका। परन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि मरीज की मृत्यु प्रतिवादी द्वारा की गई किसी लापरवाही के कारण हुई है। राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि 'हेल्सबरी लॉज ऑफ इंग्लैंड (तीसरा संस्करण), खण्ड 26, पृष्ठ 17' पर दी गई लापरवाही की परिभाषा के अनुसार, डाक्टरी लापरवाही का मामला सिद्ध नहीं होता है। इस प्रकार, राज्य आयोग के आदेश को न्यायोचित ठहराया गया।

अपील खारिज कर दी गई।

श्रीमती रेखा गुप्ता बनाम बम्बई अस्पताल ट्रस्ट और अन्य
II (2003) सी.पी.जे. 160 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

श्री केदार नाथ गुप्ता, जिसकी उम्र 41 साल थी, पल्मोनरीट्यूबरक्लासिस, रिनलइरसफिसिएंसी और मधुमेह मिलिटस से पीड़ित था। उसे विभिन्न टेस्टों/इलाज के लिए बम्बई अस्पताल में दाखिल किया गया और उसका किडनी ट्रांसप्लांट किया जाना था। चूंकि मृतक की सुविधा के लिए डायलसिस अनिवार्य था, इसलिए दिनांक 28.4.1992 को सर्जन डॉ. एम.एल. कथारी द्वारा दाएं हाथ का ए.वी. फिस्तुला किया गया। मरीज को दिनांक 2 मई, 1992 को अस्पताल से डिस्चार्ज कर दिया गया और इसके बाद दिनांक 8 मई, 1992 को और 14 मई, 1992 को दो डायलसिस किए गए। बैंडेज पर लिखी गई चेतावनी के अनुसार, विपक्षी पार्टियों द्वारा दाएं हाथ का इस्तेमाल नहीं किया गया। समस्या 18 मई, 1992 को तीसरे डायलसिस के दिन उत्पन्न हुई जब अस्पताल के तकनीशियन ने लापरवाही से अपरिपक्व ए.वी. फिस्तुला किया। शिकायतकर्ता का कहना है कि डायलसिस मशीन से अत्वचीय ढंग से रक्त शरीर के अंदर पुनः प्रवेश कराया गया। इस घटना के कारण बाईं बाजू सूजकर दुगुने आकार की हो गई, जिसे डाक्टरी भाषा में कम्पार्टमेंटल कम्प्रेशन जाना जाता है। तकनीशियन ने शिकायतकर्ता को बताया कि यह सैलाइन (डेक्स्टरोज) है, जिसे पहले अंतरित किया गया है और सूजन कुछ घंटों में समाप्त हो जाएगी। परन्तु उसी दिन, लगभग आधी रात को मरीज को दोबारा अस्पताल में लाया गया और उसकी हालत यह थी कि रक्त के इकट्ठा हो जाने के कारण कोहनी के जोड़ से बाजू तक सूजन थी। दिनांक 19.5.1992 को डॉ. चौधरी को नजदीक के हॉस्टल से बुलाया गया और वह मरीज को आर्टिफिशियल किडनी यूनिट (ए.के.यू.) में लाया तथा एक इंजेक्शन दिया गया। शिकायतकर्ता का कहना था कि मरीज बार–बार अपना हाथ काटने का अनुरोध करता रहा, क्योंकि वह स्वयं भी एक डाक्टर था और उसे यह आशंका थी कि उसके हाथ में गैंगरीन हो रहा है। परन्तु उसका हाथ काटने के बजाय डाक्टरों ने क्रेप बैंडेज लगा दी और बाईं बाजू को उठाए रखने की स्थिति में कर दिया। चूंकि कम्पार्टमेंटल कम्प्रेशन काफी देर तक बना रहा, इसलिए इसके कारण अधिक क्षति हो जाने की वजह से दाईं बाजू में थ्रोम्बोसिस हो गया और इस प्रकार गैंगरीन पनप गया।

शिकायतकर्ता ने दलील दी कि क्षति इसलिए हुई क्योंकि गैंगरीन को समय से नियंत्रित नहीं किया गया और बाजू को न काटकर आगे गैंगरीन बढ़ने की स्थिति से उत्पन्न टिश्यू के नष्ट होने की प्रक्रिया से बाजू को नहीं काटा गया तथा अंततः इसके कारण शरीर में सेप्टिसीमिया हो गया, जिसके परिणामस्वरूप दिनांक 20 मई, 1992 को मरीज की मृत्यु हो गई। यह भी आरोप लगाया गया कि अस्पताल में आई.सी.यू. कमरे की सुविधा नहीं थी।

मुद्दे

पहला यह कि क्या शिकायतकर्ता की शिकायत उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के अंतर्गत धार्य है? और दूसरा यह कि क्या विपक्षी पार्टियों द्वारा प्रदान की गई सेवाओं में कमी और/ या कोई डाक्टरी लापरवाही है?

निर्णय

जहां तक शिकायत के उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के अंतर्गत धार्य होने का प्रश्न है, शिकायतकर्ता को यह अधिकार है कि वह धारा 2 (1)(घ) तथा धारा 2(1)(ण) के अंतर्गत शिकायत दायर कर सके। अगला सवाल यह था कि क्या विपक्षी पार्टियों द्वारा सेवा में किसी प्रकार की कमी या लापरवाही की गई है। यहां विपक्षी पार्टी संख्या 1, अर्थात बम्बई अस्पताल ने स्पष्ट रूप से कहा कि डाक्टरों के कार्य के लिए उसे जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता, क्योंकि मृतक विपक्षी पार्टी संख्या 1 का एक प्राइवेट मरीज था। विपक्षी पार्टी संख्या 1 द्वारा यह दलील दी गई कि उन्हें प्रतिनिधिमूलक रूप से जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता, क्योंकि यह जिम्मेदारी केवल कर्मचारी और नियोक्ता के बीच होती है और मौजूदा मामले में मरीज के इलाज की पूरी जिम्मेदारी अनन्य रूप से परामर्शदाता की है और परामर्शदाता को उसके दिन–प्रतिदिन के काम में सहायता प्रदान करने के लिए रेजिडेंट स्टाफ दिया जाता है। आयोग ने इस दलील को नामंजूर कर दिया और व्यवस्था दी कि विपक्षी पार्टी संख्या 1 सिर्फ यह कहकर अपनी जिम्मेदारी से नहीं बच सकती कि वह केवल अवसंरचनात्मक सुविधाएं ही प्रदान करती है। विपक्षी पार्टी संख्या 2 द्वारा दिया गया तथ्य निर्विवाद रूप से सही है कि परामर्श शुल्क सहित सभी बिल अस्पताल द्वारा मरीज के खाते में डाले जाते हैं और विपक्षी पार्टी संख्या 1, परामर्शदाता को शुल्क का भुगतान करते समय बीस प्रतिशत कमीशन काटती है। इस प्रकार, अस्पताल किसी बनावटी आधार पर अपनी जिम्मेदारी से नहीं बच सकता। जहां तक विपक्षी पार्टी संख्या 2 के खिलाफ शिकायतकर्ता द्वारा दी गई दलील का प्रश्न है, राष्ट्रीय आयोग ने उसके तर्कों में कोई सार नहीं पाया। शिकायतकर्ता ने आर्टिफिशियल

किडनी यूनिट (ए.के.यू.) द्वारा पहले किए गए डायलसिस के दौरान विपक्षी पार्टी संख्या 2 के खिलाफ प्रतिरोध का कोई आधार प्रस्तुत नहीं किया। इस आर्टिफिशियल किडनी यूनिट का संचालन सक्षम तकनीशियनों के एक समूह द्वारा स्वतंत्र रूप से किया जाता है। तीसरे डायलसिस की उक्त तारीख को विपक्षी पार्टी संख्या 2 वहां उपस्थित नहीं थी और इसलिए मृतक का उसके द्वारा इलाज करने का और सेवा में कमी या डाक्टरी लापरवाही करने का सवाल ही नहीं उठता। इस स्थिति में, तीन सर्जनों ने जब मरीज को देखा तो उंगलियों के अग्र भाग में कैपिलरी पलसेशन नोट किया और राय दी कि कैपिलरी पलसेशन की मौजूदगी से गैंगरीन बिल्कुल नहीं होता। यदि ऐसी बात है तो सर्जनों की राय, मरीज की राय से ऊपर है।

जहां तक अस्पताल में आई.सी.यू. की सुविधाएं न होने का प्रश्न है, इस संबंध में यह कहा गया कि यदि यूनिट में कोई स्थान खाली नहीं है और इस कारण मरीज को शिफ्ट नहीं किया जा सकता, तो इसे 'सेवा में कमी' नहीं माना जा सकता। अस्पताल के रिकार्ड, रिकार्ड में उपलब्ध हलफनामों और ज़िरह के रिकार्ड से यह बात स्पष्ट है कि इनटेंसिव इलाज डाक्टर चौधरी द्वारा तुरन्त आरंभ कर दिया गया था और बिना किसी विलंब के खून चढ़ा दिया गया था तथा मरीज को ऐसी किसी भी चीज से इंकार नहीं किया गया जो चिकित्सा पद्धति के सामान्य सिद्धान्तों के अनुसार उसे दी जानी चाहिए थी। मृत्यु के कारण के संबंध में यह कहा जा सकता है कि रिकार्ड पर यह बात आ चुकी है कि मृतक तपेदिक, उच्च रक्त चाप, मधुमेह और नेप्रोपथ से दिसम्बर, 1990 से ही पीड़ित था। जब उसे विपक्षी पार्टी संख्या 1 में दाखिल किया गया तो वह कालसिंह नार्ड, इनवास, आई.एन.एच. जैसी उच्च रक्त चाप प्रतिरोधी औषधियों के साथ–साथ आइसोनेक्स भी ले रहा था, जो एक तपेदिक–प्रतिरोधी औषधी है और ये सभी औषधियां रिनल रक्त आपूर्ति में वृद्धि करती हैं और इनसे हैपेटाइटिस तथा डाइफंक्शन हो सकते हैं। डाक्टर चौधरी उस समय उपस्थित थे, जब आपातकालीन इलाज के संबंध में महत्त्वपूर्ण निर्णय लिए जा रहे थे। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि तीसरे डायलसिस के बाद मरीज की डिस्सेमिनेटिड इंट्रावस्कुलर कोबुलेशन (डी.आई.सी.) की सबक्लिनिकल कंडीशन हो सकती है। इस पर बांधी गई प्रैशर बैंडेज से रक्तस्राव नहीं रुका, क्योंकि यह अपने स्थान से हट गई होगी या मृतक ने अपना हाथ हिलाया होगा जिससे बाजू में रक्तस्राव डायलसिस हो गया होगा। इसके अलावा, गैंगरीन हो जाने के प्रश्नचिन्ह के साथ की गई जांच के अलावा बाजू के काटने पर गैंगरीन के संबंध में कोई चर्चा नहीं की गई और सभी डाक्टरों की यह स्पष्ट राय थी कि इस हालत में बाजू का काटना या सर्जरी, लक्षणों के विपरीत होगा। कानून की यह सुस्थापित स्थिति है कि यदि चिकित्सा व्यवसायियों के पास इलाज की प्रक्रिया के दो मानक तरीकों का विकल्प है और वह उनमें से एक को अपनाता है, तो यह नहीं माना जा

सकता कि वह लापरवाही का दोषी है। अंततः, राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि अस्पताल के रिकार्ड का अवलोकन करने से यह पता चलता है कि 18 और 19 तारीख को किया गया इलाज अच्छी देखभाल के साथ किया गया था, जहां मरीज के इलाज में तुरन्त सभी विशेषज्ञों की राय ले ली गई थी और इन चर्चाओं को ध्यान में रखते हुए, हमें नहीं लगता कि विपक्षी पार्टी ने सेवा में किसी तरह की कमी या लापरवाही की है। शिकायत में किसी तरह का कोई सार नहीं पाया गया और इसे खारिज कर दिया गया।

शिकायत खारिज कर दी गई।

सुश्री नेहा कुमारी और अन्य बनाम अपोलो अस्पताल और अन्य

I (2003) सी.पी.जे. 145 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

नेहा कुमारी, प्रथम शिकायतकर्ता को उसके कंधे के विकास में कुछ समस्या थी और इसके लिए वह अपोलो अस्पताल, चेन्नई में गई। विपक्षी पार्टी संख्या 1 और 2 ने उसकी जांच की और डोर्सलस्पाइन तथा लम्बरस्पाइन के सी.टी. स्कैन की सलाह दी। सी.टी. स्कैन की जांच करने के बाद विपक्षी पार्टी संख्या 1 और 2, दोनों ने तथा विपक्षी पार्टी संख्या 3 ने सलाह दी कि नेहा कुमारी के स्पाइनल कैनल का आपरेशन करना होगा। इस संबंध में यह आरोप लगाया गया कि आपरेशन के बाद नेहा कुमारी और अधिक बीमारी हो गईं तथा ठीक होने के बजाय उसे पैराप्लेगिया हो गया और उसकी यूरिनेटिंग तथा स्टूल अनुभूति तथा नियंत्रण समाप्त हो गया। दोनों डाक्टरों की जानकारी में यह बात लाई गई और दिनांक 2.12.1990 को नेहा कुमारी का दोबारा आपरेशन किया गया। उसे दिनांक 12.3.1991 को अस्पताल से इस सलाह के साथ डिस्चार्ज किया गया कि वह फिजियोथेरेपी का इलाज जारी रखे। फिजियोथेरेपी का इलाज 1998 तक चलता रहा, जब नवम्बर, 1998 में उसे वही बीमारी हो गई, तब वह विपक्षी पार्टी संख्या 2 के पास इन्द्रप्रस्थ अस्पताल, दिल्ली में आई। उसे बताया गया कि सैगमेंट वायर के साथ गलत स्तर पर गलत ढंग से रॉड फिट की गई थी और इसके कारण नेहा कुमारी की गर्दन के नीचे निचले लिम्ब का संचालन बंद हो गया है। इसके बाद, दिनांक 1.12.1998 को दोबारा उसका आपरेशन संत परमानंद अस्पताल, दिल्ली में किया गया और इनप्लांट को हटा दिया गया। यह कहा गया कि हालांकि नेहा कुमारी की हालत स्थिर है, परन्तु वह अभी भी व्हील चेयर तक ही सीमित रहे और उसकी हालत में किसी प्रकार का कोई परिवर्तन होने की आशा भी नहीं रही। शिकायतकर्ता ने राष्ट्रीय आयोग के समक्ष मुआवजे की शिकायत दायर की और आरोप लगाया कि जिस स्थिति में वह अब है, उसकी यह स्थिति विपक्षी पार्टियों की तरफ से की गई लापरवाही के कारण है।

मुद्दे

पहला यह कि क्या परामर्शदाता डाक्टरों की लापरवाही के लिए अस्पताल प्रतिनिधिमूलक रूप से जिम्मेदार है? और दूसरा यह कि क्या सर्जरी में डाक्टर लापरवाह रहे? तीसरा यह कि क्या शिकायत कालबाधित है?

निर्णय

अस्पताल की जिम्मेदारी के लिए राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि बसंत सेठ बनाम रिजेंसी अस्पताल (1999) के मामले में हमने पहले ही यह व्यवस्था दे दी है कि परामर्शदाताओं की ओर से की गई किसी भी लापरवाही के लिए अस्पताल जिम्मेदार होगा। दूसरे मुद्दे के लिए यह कहा गया कि नेहा कुमारी ने डोर्सल स्पाइन के लेटरल बैंडिंग और स्पाइन की मल्टीपल कम्पलेक्स डिफोरमिटी तथा स्पाइन और स्पाइनकोर्ड के मल्टीपल दोषों के साथ डोर्सल स्पाइन की स्कोलियोसिस की शिकायत की थी। बचपन से ही उतरोत्तर रूप से बढ़ती हुई नेहा का पैरालिसिस होने का पारिवारिक इतिहास था। यह बीमारी उसके दादा को थी। यह बात भी उल्लेखनीय है कि नेहा कुमारी स्पाइन के और पूरे शरीर के जन्मजात जटिल दोषों से पीड़ित थी, जो आपरेशन से पहले किए गए सी.टी. स्कैन से स्पष्ट है। उसे और उसके माता–पिता को पूरी तरह स्पष्ट कर दिया गया था और वह इन समस्याओं से पूरी तरह परिचित थे। इन परिस्थितियों में, यह माना गया कि दोनों विपक्षी पार्टियां अपने दृष्टिकोण में इमानदार थीं और डाक्टरी लापरवाही का कोई मामला नहीं बनता है। तीसरा मुद्दा दिनांक 26.9.2000 को शिकायत दायर करने में समय–सीमा के बारे में है। नेहा कुमारी को अस्पताल से 12.3.1991 को अस्पताल से डिस्चार्ज किया गया था। इस बात को साबित करने के लिए रिकार्ड पर कुछ भी उपलब्ध नहीं है कि वह 1998 तक फिजियोथेरेपी का इलाज करा रही थी। इस बारे में कोई स्पष्ट कारण नहीं दिया गया कि निर्धारित समय–सीमा की अवधि के अंदर शिकायत क्यों दायर नहीं की गई। विलम्ब को माफ करने के लिए भी कोई कारण नहीं पाया गया। शिकायत को कालबाधित के रूप में खारिज कर दिया गया।

शिकायत खारिज कर दी गई।

प्रफुल्ल कुमार दास बनाम अपोलो अस्पताल और अन्य
II (2002) सी.पी.जे. 106 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

शिकायतकर्ता के पुत्र की आयु सात साल थी और उसे जन्म से ही हृदयरोग था। एस.सी. बी. मेडिकल कॉलेज और अस्पताल, कटक (उड़ीसा) के डाक्टरों की यह राय थी कि बच्चे को किसी सर्जरी की आवश्यकता नहीं है और जैसे ही वह बड़ा होगा, वह स्वयं ही धीरे–धीरे पूरी तरह ठीक हो जाएगा। जब यह बच्चा सात साल का था, तो शिकायतकर्ता ने अपोलो अस्पताल, मद्रास के डॉ. मिश्रा से परामर्श किया। बच्चे की जांच करने के बाद डॉ. मिश्रा ने तुरन्त ओपन हार्ट सर्जरी की सलाह दी, क्योंकि उसके अनुसार बच्चा सुपरा वालवुलर और अरोटा स्टेनोसिस से पीड़ित था। दिनांक 10.4.1992 को प्रतिवादी संख्या 4 द्वारा बच्चे का एंजियोग्राम किया गया। प्रतिवादी के अनुसार, बच्चे में बहुत जटिल और बहुत कम पाई जाने वाली कोंगेनिटल कार्डियक एनोमली पाई गई। डाक्टरों के एक दल की सहायता से डाक्टर गिरिनाथ द्वारा दिनांक 14.4.1992 को बच्चे की ओपन हार्ट सर्जरी की गई। प्रतिवादियों ने सर्जरी करने में केवल 42 मिनट का समय लगाया और आपरेशन के तुरन्त बाद की स्थिति संतोषजनक थी। दिनांक 24.4.1992 को दूसरा एंजियोग्राम किया गया और दिनांक 30.4.1992 को बच्चे को अस्पताल से डिस्चार्ज कर दिया गया। दिनांक 4.5.1992 को दास को आपरेशन नोट दिया गया और वह 5.5.1992 को उड़ीसा के लिए चल पड़ा। दास के अनुसार, दिनांक 18.5.1992 को बच्चे की गर्दन में और बांहों में तेज दर्द हुआ और उसे एस.सी.बी. मेडिकल कॉलेल, कटक (उड़ीसा) में ले जाया गया, जहां दिनांक 24.5.1992 को उसकी मृत्यु हो गई। दास ने आरोप लगाया कि अपोलो अस्पताल की ओर से लापरवाही की गई है और राष्ट्रीय आयोग में इस संबंध में शिकायत दायर की।

मुद्दे

क्या प्रतिवादियों ने इलाज में लापरवाही की?

निर्णय

राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि इस बात में कोई संदेह नहीं है कि लापरवाही एक बहु–कोणीय शब्द है। इससे केवल एक चूक का भी पता चलता है, जो एक ऐसी गलती होती है,

जिसे सभी व्यक्ति जिम्मेदारियां निभाने या व्यावसायिक कौशल का काम करने में आमतौर पर असफल रहते हैं। इस बात में कोई विवाद नहीं है कि प्रतिवादी सर्जनों और कार्डियोलॉजिस्टों का एक सक्षम दल था। इन परिस्थितियों में वे अपने निदान में सही थे और उनके द्वारा किया गया इलाज उचित था, जो उनकी राय में उस बच्चे के लिए सर्वोत्तम था। प्रतिवादी के खिलाफ किसी विशेषज्ञ का साक्ष्य मौजूद नहीं था। बच्चे को जटिल और बहुत कम पाए जाने वाली कोंगेनाइटल कार्डियक एनोमनी थी। सर्जरी सफल रही थी और बच्चा ठीक हो रहा था। उसका इलाज करने में उचित सावधानी और सतर्कता बरती गई थी। दास को यह सूचित किया गया था कि एओर्टा के बाकी अविकसित आर्च में बाधा को दूर करने के लिए बच्चे को बैलूनडाइलेटेशन पर वापस लाया जाएगा। डाक्टर रेड्डी ने यह सलाह दी थी कि यदि बच्चे को कोई समस्या आती है तो उसे वापस ले आया जाए। बच्चे को दिनांक 18.5.1992 को दर्द होने के बाद उसे बचाया जा सकता था। दास प्रतिवादियों के खिलाफ लगाए गए डाक्टरी लापरवाही के आरोप को सिद्ध करने में विफल रहा। शिकायत में कोई सार नहीं पाया गया।

शिकायत खारिज कर दी गई।

एस.के. अय्यंगर बनाम बम्बई अस्पताल एवं चिकित्सा अनुसंधान केन्द्र और मेडिकल रिसर्च सेंटर और अन्य

I (2001) सी.पी.जे. 23 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

शिकायतकर्ता की माता की आयु 86 साल थी। वह (i) मधुमेह मेलीटस, (ii) उच्च रक्तचाप; और (iii) जरा जन्य पागलपन से पीड़ित थी। मृतक 27 नवम्बर, 1997 को अपने बिस्तर से गिर गई और जांघ की हड्डी में फ्रैक्चर हो गया। फ्रैक्चर इस तरह का था कि इसके लिए सर्जीकल इलाज आवश्यक था। सर्जरी में खतरा था, जिसके बारे में शिकायतकर्ता सहित मरीज के रिश्तेदारों को बता दिया गया था। खतरों को पूरी तरह समझने के बाद शिकायतकर्ता ने सर्जरी का विकल्प चुना। सामान्य प्रक्रिया अपनाने और प्रत्येक एहतियात बरतने के बाद दिनांक 29 नवम्बर, 1997 को सर्जरी की गई। इसके बाद कुछ पेचीदगियां उत्पन्न हो गईं और अंततः दिनांक 20 दिसम्बर, 1997 को मरीज की मृत्यु हो गई। शिकायतकर्ता ने राज्य आयोग में शिकायत दायर की, जिसमें डाक्टरी लापरवाही का आरोप लगाया गया। राज्य आयोग ने शिकायत को खारिज कर दिया। आदेश से व्यथित शिकायतकर्ता ने राष्ट्रीय आयोग के समक्ष अपील दायर की।

मुद्दा

मरीज को आपरेशन के बाद आई.सी.यू. में ले जाया जाना चाहिए था, जो नहीं किया गया और इसके परिणामस्वरूप मरीज की मृत्यु हो गई।

निर्णय

राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि राज्य आयोग ने तथ्यों की विस्तार से जांच की और पाया कि डाक्टरों और नर्सों की तरफ से मरीज का इलाज करने में देखभाल में कोई कमी नहीं की गई। राष्ट्रीय आयोग के समक्ष यह बात प्रमुखता से दिखाई गई कि मरीज को तुरन्त आई.सी.यू. में नहीं लाया गया। परन्तु किसी भी तरह से यह साबित नहीं किया गया कि इसके कारण मरीज की मृत्यु हुई। इसके अलावा, उस समय मरीज की स्थिर हालत को ध्यान में रखते हुए उसके केबिन में रखने का निर्णय सोच समझ कर लिया गया। यह निर्णय विभिन्न कारकों पर विचार करने के बाद लिया गया था। यह नहीं कहा जा सकता कि यह निर्णय मरीज की हालत और उसकी आयु के

परिणामों पर विचार किए बिना या मनमाने ढंग से लिया गया था। इस प्रकार, यह मानना मुश्किल है कि मरीज की मृत्यु किसी लापरवाही के कारण हुई या इस तथ्य के कारण हुई कि मरीज को आपरेशन के बाद तुरन्त आई.सी.यू. में नहीं ले जाया गया। राज्य आयोग के आदेश में कोई कमी नहीं पाई गई और इसे न्यायोचित ठहराया गया।

अपील खारिज कर दी गई।

श्रीमती कुसुम शर्मा और अन्य बनाम बत्रा अस्पताल एवं चिकित्सा अनुसंधान केन्द्र और अन्य

III (2000) सी.पी.जे. 18 (राष्ट्रीय आयोग)

तथ्य

मृतक श्री आर.के. शर्मा सामान्य ओइडेमा और उच्च रक्तचाप की शिकायत के साथ, अपने नियोक्ता आई.ओ.सी. के संदर्भन पर परामर्श के लिए बत्रा अस्पताल, दिल्ली में आए। विपक्षी पार्टी संख्या 2 ने उनकी जांच की और 'एनारसौसा' के रूप में डायग्नोज किया तथा अस्पताल में दाखिल हो जाने की सलाह दी। मृतक को 18.3.1990 को दाखिल कराया गया, जहां गहन जांच और कुछ टैस्टों के बाद उसे बायां एडरेनल ट्यूमर निकालने के लिए सर्जरी की सलाह दी, जो उसकी बीमारियों का कारण था। टैस्ट करने पर ट्यूमर को कष्टकर पाया गया। सर्जरी दिनांक 2.4.1990 को विपक्षी पार्टी संख्या 3 द्वारा की गई थी। सर्जरी के दौरान पैंक्रियाज़ की बाडी क्षतिग्रस्त हो गई थी, जिसका इलाज किया गया और फ्लूइड को बाहर निकालने के बाद एक ड्रेन फिक्स कर दी गई। चूंकि फ्लूइड का प्रवाह नहीं रुका, इसलिए विपक्षी पार्टी संख्या 4 से परामर्श करने के बाद दिनांक 23.5.1990 को दूसरी सर्जरी की गई। सर्जरी सफल रही। फ्लूइड को बाहर निकालने के लिए मृतक के साथ दो बैग फिट कर दिए गए। मरीज के शरीर में दो बैग लगाकर उसे दिनांक 26.6.1990 को अस्पताल से डिस्चार्ज कर दिया गया और सलाह दी गई कि वह अनुवर्तन करता रहे और पट्टी बदलता रहे। मृतक ने अगली बार केवल दिनांक 31.8.1990 को ही चिकित्सा प्रमाणपत्र प्राप्त करने के लिए अपने आपको बत्रा अस्पताल में दिखाया। अगली बार मृतक को घर में उल्टी होने के बाद दिनांक 9.10.1990 को वह बत्रा अस्पताल में आया और 'प्योगेनिंग मेनिनजाइटिस' के कारण दिनांक 11.10.1990 को अस्पताल में उसकी मृत्यु हो गई। मृतक की पत्नी ने राष्ट्रीय आयोग के समक्ष शिकायत दायर की और डाक्टरी लापरवाही के लिए 45 लाख रुपए के मुआवजे का दावा किया।

मुद्दे

क्या यह चूक या कृत्य के कार्यों के सीरिज का संचयी प्रभाव था कि सर्जरी के बाद मरीज कभी ठीक नहीं हुआ और जो मृत्यु का कारण बना? दूसरा यह कि पहली सर्जरी के समय

अपनाया गया पूर्ववर्ती दृष्टिकोण, सही दृष्टिकोण था? सर्जरी बांये एडरेनल ट्यूमर निकालने के लिए उत्तरवर्ती दृष्टिकोण स्वीकार करके सर्जरी की जानी चाहिए थी?

निर्णय

कोई डाक्टर लापरवाही का दोषी नहीं होता यदि उसने, उस क्षेत्र विशेष में कुशल चिकित्सा व्यवसायियों के एक जिम्मेदार निकाय द्वारा उचित ढंग से स्वीकार की गई प्रैक्टिस के अनुसार काम किया है। प्रत्येक सर्जीकल आपरेशन जोखिम के साथ किया जाता है। यहां तक कि उन्नत तकनीकों में भी जोखिम होता है। शिकायतकर्ता का यह तर्क नहीं है कि विपक्षी पार्टी संख्या 3 सर्जरी करने के लिए योग्यताप्राप्त नहीं थी। उसमें योग्यता की कमी होने का सवाल नहीं था। उसे विशेषज्ञता वाले विषय का ज्ञान और कौशल प्राप्त था। उसका काम करने का तरीका, अर्थात दिनांक 2.4.1990 को उसके द्वारा की गई सर्जरी के लिए अपनाया गया दृष्टिकोण और पैंक्रियाज की बाडी को हुई क्षति को ठीक करने के लिए उसके द्वारा की गई अनुवर्ती कार्रवाई का समर्थन चिकित्सा की पुस्तकों और विशेषज्ञ गवाहों द्वारा किया गया। उसे किसी भी प्रकार से लापरवाह नहीं माना जा सकता। दूसरा मुद्दा यह है कि सर्जरी करते समय कौन सा दृष्टिकोण अपनाया जाना चाहिए था? शिकायतकर्ता के अनुसार, उत्तरवर्ती दृष्टिकोण अपनाया जाना चाहिए था, जबकि आपरेशन करने वाले सर्जन के निर्णय में पूर्ववर्ती दृष्टिकोण ही सही दृष्टिकोण था और उसने ऐसा ही किया। उसके दृष्टिकोण का विशेषज्ञ गवाहों द्वारा पूरी तरह समर्थन किया गया। प्रस्तुत की गई चिकित्सा संबंधी पुस्तकें और पेश किए गए साक्ष्य शिकायतकर्ता की इस अपील का समर्थन नहीं करते कि सर्जरी का उत्तरवर्ती दृष्टिकोण ही सही दृष्टिकोण है या कि पहली सर्जरी और ग्लूटियल एबसकस तथा प्योजोनिक मेनिंजाइटिस, जो मृत्यु का कारण थी, के बीच कोई संबंध है। इसके विपरीत, साक्ष्य और तथ्य के जरिए स्पष्ट की गई ऐसी बाह्य परिस्थितियां हैं, जिनसे सिद्ध होता है कि विपक्षी पार्टी संख्या 1 और 3 की ओर से की गई चूक और कृत्य, विपक्षी पार्टी संख्या 4, जिसके खिलाफ लापरवाही की शिकायत वापस ले ली गई थी, द्वारा की गई दूसरी सर्जरी के बाद समाप्त कर दिए गए थे। इस प्रकार, राष्ट्रीय आयोग ने व्यवस्था दी कि शिकायतकर्ता विपक्षी पार्टी संख्या 1 से 3 के खिलाफ शिकायत को सही साबित करने में विफल रहा है।

शिकायत खारिज कर दी गई।

जेकब मैथ्यू बनाम पंजाब राज्य सरकार और अन्य

(2005) 6 एस.सी.सी.1

तथ्य

अशोक कुमार शर्मा, प्रतिवादी संख्या 2 ने इस मामले में पुलिस स्टेशन लुधियाना में एक प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज कराई, जिसमें भारतीय इंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 304–क के अंतर्गत अपराध का मामला दर्ज किया गया। सूचना का संक्षिप्त विवरण यह है कि 15.2.1995 को सूचना देने वाले व्यक्ति के पिता स्वर्गीय जीवन लाल शर्मा को सी.एम.सी. अस्पताल, लुधियाना के एक प्राइवेट वार्ड में मरीज के रूप में दाखिल किया गया। दिनांक 22.02.1995 को लगभग 11.00 बजे जीवन लाल को सांस लेने में कठिनाई महसूस हुई। शिकायतकर्ता के बड़े भाई ने ड्यूटी नर्स से सम्पर्क किया, जिसने मरीज को देखने के लिए डाक्टर को बुलाया। एक आक्सीजन सिलेंडर लाया गया और मरीज के मुंह पर आक्सीजन लगाई गई, परन्तु सांस लेने की समस्या और बढ़ गई। मरीज ने उठने की कोशिश की, परन्तु मेडिकल स्टाफ ने उसे बिस्तर पर ही रहने को कहा। आक्सीजन सिलेंडर खाली पाया गया। कमरे में कोई और आक्सीजन सिलेंडर उपलब्ध नहीं था और पास वाले कमरे से दूसरा सिलेंडर लाया गया। तथापि, सिलेंडर को प्रचालनात्मक करने की कोई व्यवस्था नहीं थी और इस प्रक्रिया में 5 से 7 मिनट नष्ट हो गए। इस समय तक दूसरा डाक्टर आ गया था, जिसने मरीज को मृत घोषित कर दिया। यह आरोप लगाया गया कि मरीज की मृत्यु डाक्टरों और नर्सों की लापरवाही और आक्सीजन सिलेंडर उपलब्ध न होने के कारण हुई और इस कारण हुई क्योंकि मृतक के मुंह पर खाली सिलेंडर लगा दिया गया था जिससे सांस लेना बिल्कुल रुक गया था और उसकी मृत्यु हो गई।

जुडिशियल मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, लुधियाना ने दो मुल्जिमों, दोनों डाक्टर, के खिलाफ भारतीय दंड संहिता की धारा 304–क के तहत आरोप तय किए। उनमें से दोनों ने सत्र न्यायाधीश के न्यायालय में पुनर्विचार याचिका दायर की। पुनर्विचार याचिका खारिज कर दी गई। अपीलकर्ता ने दंड संहिता प्रक्रिया की धारा 482 के तहत उच्च न्यायालय में एक याचिका दायर की, जिसमें प्रार्थना की गई कि प्रथम सूचना रिपोर्ट और बाद की सभी कार्यवाहियों को रद्द कर दिया जाए। उच्च न्यायालय ने भी याचिका खारिज कर दी। उपरोक्त आदेश को रद्द करने के लिए आवेदन दिया गया और उसे भी 24.1.2003 को खारिज कर दिया गया। इन दोनों आदेशों से व्यथित

महसूस करते हुए, अपीलकर्ता ने उच्चतम न्यायालय में विशेष अनुमति याचिका दायर की। अपीलकर्ता के अनुसार, मृतक उन्नत चरण वाले कैंसर से पीड़ित था और उपलब्ध सूचना के अनुसार वास्तव में उसे देश में किसी अस्पताल में दाखिल नहीं किया जा रहा था, क्योंकि उसका मामला अंतिम चरण वाले कैंसर का मामला था, फिर भी मरीज का इलाज बहुत सतर्कता और सावधानी से किया गया और डाक्टरों तथा स्टाफ द्वारा सभी अपेक्षित चिकित्सा सहायता प्रदान की गई, परन्तु वही हुआ जो होना था। इन परिस्थितियों में पुलिस रिपोर्ट पूरी तरह अनपेक्षित और अनावश्यक थी।

मुद्दे

पहला यह कि क्या लापरवाही की संकल्पना पर सिविल और फौजदारी कानून में कोई अंतर है? और दूसरा यह कि क्या लापरवाही के निष्कर्ष रिकार्ड करने के लिए भिन्न मानक लागू होते हैं जब किसी व्यवसायविद्, विशेष रूप से किसी डाक्टर को लापरवाही का दोषी माना जाता है?

निर्णय

उच्चतम न्यायालय ने संक्षेप में अपने निष्कर्ष निम्नलिखित रूप में दिए हैं:

1. लापरवाही, ऐसा काम करने में चूक द्वारा किया गया ड्यूटी का भंग है जो मानवीय कार्यों के आचरण को आमतौर पर विनियमित करने वाले प्रतिफलों द्वारा मार्गदर्शित कोई सामान्य बुद्धि वाला व्यक्ति करेगा या ऐसा काम करना है जिसे कोई समझदार और सामान्य बुद्धि वाला व्यक्ति नहीं करेगा। ऊपर उद्धृत की गई, रतनलाल और धीरजलाल की पुस्तक 'लॉ ऑफ टोर्ट' (न्यायमूर्ति जी.पी. सिंह द्वारा सम्पादित) में दी गई लापरवाही की परिभाषा अभी भी लागू होती है। लापरवाही, मुकदमा चलाए जाने वाले व्यक्ति के प्रति लापरवाही वाले काम या चूक के परिणामस्वरूप हुई क्षति के कारण अभियोज्य हो जाती है। लापरवाही के तीन अनिवार्य संघटक होते हैं: 'ड्यूटी', 'भंग' और 'परिणामी क्षति'।

2. चिकित्सा व्यवसाय के संदर्भ में लापरवाही के लिए भिन्न इलाज होना आवश्यक है। किसी व्यवसायविद, विशेष रूप से डाक्टर की ओर से की गई लापरवाही या उतावलेपन का अनुमान लगाने के लिए अतिरिक्त कारण लागू होते हैं। 'आक्यूपेशनल' लापरवाही का मामला 'प्रोफेशनल' लापरवाही के मामले से भिन्न होता है। सावधानी की कमी, निर्णय लेने

में गलती या कोई दुर्घटना चिकित्सा व्यवसायी की ओर से की गई लापरवाही का कोई सबूत नहीं है। जब तक कोई डाक्टर, उस समय के चिकित्सा व्यवसाय की स्वीकार्य पद्धति का पालन करता है, तब तक उसे केवल इसलिए लापरवाही का जिम्मेदार नहीं माना जा सकता, क्योंकि इलाज का बेहतर वैकल्पिक तरीका या पद्धति मौजूद थी या केवल इसलिए क्योंकि मुल्जिम द्वारा अपनाई गई पद्धति या प्रक्रिया अपनाने या उसका सहारा लेने के लिए अधिक कुशल डाक्टर का चयन किया जा सकता था। जब एहतियात बरतने में विफल रहने की बात आती है तो जिस बात पर ध्यान दिया जाना चाहिए, वह यह है कि क्या वह एहतियात बरते गए जिन्हें सामान्य अनुभव वाला व्यक्ति पर्याप्त मानता है। विशेष या असाधारण एहतियातों का इस्तेमाल, जिनसे किसी घटना विशेष को रोका जा सकता था, तथाकथित लापरवाही को मापने का मानक नहीं हो सकते। इसी प्रकार, अपनाई गई पद्धति का मूल्यांकन करते समय, सावधानी के मानक को घटना के समय उपलब्ध जानकारी के आलोक में तय किया जाता है और विचारण की तारीख को उपलब्ध जानकारी के आलोक में नहीं। इसी प्रकार, जब लापरवाही का आरोप किसी विशेष उपकरण का इस्तेमाल करने में विफलता से उत्पन्न होता है तो यह आरोप विफल हो जाएगा यदि वह उपकरण समय विशेष (अर्थात दुर्घटना के समय) पर आमतौर पर उपलब्ध नहीं था, जिस स्थान पर उसे इस्तेमाल करने का सुझाव दिया गया है।

3. किसी व्यवसायविद् को दो निष्कर्षों में से एक निष्कर्ष के आधार पर लापरवाह ठहराया जा सकता हैः या तो उसके पास वह अपेक्षित कौशल नहीं है जिसके बारे में उसने कहा था कि उसके पास है या मामले विशेष में उसने उस कौशल का इस्तेमाल उचित सक्षमता के साथ नहीं किया, जो उसके पास था। इस बात को तय करने के लिए कि क्या आरोपित व्यक्ति लापरवाह रहा है या नहीं, लागू किए जाने वाला मानक, उस व्यवसाय में सामान्य कौशल का इस्तेमाल करने वाला सामान्य रूप से सक्षम व्यक्ति होगा। प्रत्येक व्यवसायविद् के लिए यह संभव नहीं है कि उसके पास उस शाखा, जिसमें वह प्रैक्टिस कर रहा है, में विशेषज्ञता या कौशल का उच्चतम स्तर हो। एक अत्यधिक कुशल व्यवसायविद् के पास बेहतर गुण हो सकते हैं, परन्तु यह लापरवाही का आरोप लगाने पर कार्यवाही किए जाने वाले सभी व्यवसायविदों के कार्य–निष्पादन को आंकने का आधार या पैमाना नहीं हो सकता।

4. बोलम के मामले (डब्ल्यू.एल.आर.1(1957) 528 पृष्ठ 586) में विनिर्धारित की गई डाक्टरी लापरवाही तय करने की कसौटी भारत में लागू होती है।

5. लापरवाही की विधिशास्त्र की संकल्पना सिविल और फौजदारी कानून में भिन्न–भिन्न है। जो बात सिविल कानून में लापरवाही हो सकती है, आवश्यक नहीं कि वह फौजदारी कानून में भी लापरवाही हो। लापरवाही का अपराध बनने के लिए मंशा के घटक के मौजूद होने को सिद्ध किया जाना चाहिए। किसी कार्य के आपराधिक लापरवाही होने के लिए लापरवाही की डिग्री उच्चतर होनी चाहिए, अर्थात यह गंभीर या बहुत उच्च डिग्री की होनी चाहिए। जो लापरवाही न तो गंभीर है और न ही उच्चतर डिग्री की है, उसके आधार पर सिविल कानून में कार्रवाई की जा सकती है, परन्तु वह अभियोजन का आधार नहीं बन सकती।

6. 'गंभीर' शब्द का इस्तेमाल भारतीय दण्ड संहिता की धारा 304–क में नहीं किया गया है, परन्तु फिर भी यह एक सुस्थापित बात है कि फौजदारी कानून में लापरवाही या उतावलापन सिद्ध करने के लिए इसका गम्भीर होना या उच्च डिग्री का होना आवश्यक है। भारतीय दण्ड संहिता की धारा 304–क में आया 'उतावलापन या लापरवाही का काम' शब्द को 'गंभीर रूप से' शब्द के साथ जोड़कर पढ़ा जाना चाहिए।

7. फौजदारी कानून के अंतर्गत लापरवाही के लिए किसी चिकित्सा व्यवसायी पर मुकदमा चलाने के लिए यह दर्शाया जाना चाहिए कि मुल्जिम ने कोई ऐसा काम किया या ऐसा काम करने में विफल रहा जो किन्हीं परिस्थितियों और तथ्यों के अंतर्गत कोई चिकित्सा व्यवसायी अपनी सामान्य बुद्धि के अनुसार करता या करने में विफल रहता। मुल्जिम डाक्टर द्वारा उठाए गए जोखिम का स्वरूप ऐसा होना चाहिए कि उसके परिणामस्वरूप जो क्षति पहुंची है, उसकी संभावना थी।

8. 'रेस इप्सा लोक्यूटर' केवल साक्ष्य का एक नियम है और यह सिविल कानून के क्षेत्र में विशेष रूप से टोर्ट के मामलों में लागू होता है तथा लापरवाही से संबंधित कार्रवाइयों में सबूत की जिम्मेदारी तय करने में सहायता करता है। इसे फौजदारी कानून के क्षेत्र में लापरवाही की जिम्मेदारी तय करने के लिए सेवा में लागू नहीं किया जा सकता। आपराधिक लापरवाही के आरोप के आधार पर विचारण में 'रेस इप्सा लोक्यूटर' के नियम को सीमित रूप में लागू किया जा सकता है।

ऊपर विनिर्धारित किए गए सिद्धान्तों के अलावा, उच्चतम न्यायालय ने, डॉ. सुरेश गुप्ता बनाम राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली ({2004} 6 एससीसी 422) में मामले में विनिर्धारित किए गए कानूनी सिद्धान्त की पुष्टि की है। न्यायालय ने एलन मेरी और एलक्जेंडर मैक कॉल स्मिथ द्वारा लिखित 'एरर, मेडिसीन एण्ड दि लॉ' से लिए गए लेखांश का भी अनुमोदन किया, जिसका अनुमोदन और उद्धरण डॉ. सुरेश गुप्ता के मामले में किया गया है।

मार्गनिर्देश – चिकित्सा व्यवसायियों पर अभियोजन के बारे में

डाक्टरों (सर्जनों और फिजीशियनों) पर चलाए जाने वाले आपराधिक अभियोजन के मामलों में वृद्धि होती जा रही है। कभी–कभी ऐसे कुछ अभियोजन प्राइवेट शिकायतकर्ताओं द्वारा किए जाते हैं और कभी–कभी प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज करने पर पुलिस द्वारा दायर किए जाते हैं तथा उनका संज्ञान लिया जाता है। जांच–पड़ताल करने वाले अधिकारी और प्राइवेट शिकायतकर्ता से हमेशा यह अपेक्षा नहीं की जाती कि उनके पास आयुर्विज्ञान की जानकारी हो जिससे वह यह तय कर सकें कि क्या मुल्जिम चिकित्सा व्यवसायी का काम भारतीय दंड संहिता की धारा 304 के तहत फौजदारी कानून के क्षेत्र में उतावलेपन या लापरवाही का काम है या नहीं। फौजदारी मुकदमा एक बार शुरू हो जाने पर चिकित्सा व्यवसायियों को गंभीर परेशानी होती है और कभी–कभी उत्पीड़न भी। अंत में वह बरी या आरोपमुक्त होकर छूट सकते हैं, परन्तु उसकी प्रतिष्ठा को जो हानि पहुंची है, उसकी भरपाई किसी भी तरीके से नहीं की जा सकती।

अभियोजन के लिए दिशानिर्देश देते हुए उच्चतम न्यायालय ने व्यवस्था दी कि "शायद यह व्यवस्था देने में हमारी बात को समझा न जाए कि डाक्टरों पर कभी भी उस अपराध के लिए अभियोजन नहीं चलाया जा सकता, उतावलापन और लापरवाही, जिसके अनिवार्य संघटक हैं। हम जो कुछ भी कर रहे हैं, वह समाज के हित में सतर्कता और सावधानी की आवश्यकता पर जोर देना है, क्योंकि जो सेवा चिकित्सा व्यवसायी, मानवता के लिए कर रहे हैं, वह संभवतः सर्वोत्तम है और इसलिए डाक्टरों की बनावटी तथा अन्यायपूर्ण अभियोजनों से रक्षा करने की आवश्यकता है। बहुत से शिकायतकर्ता, अनावश्यक और अन्यायपूर्ण मुआवजा लेने के लिए चिकित्सा व्यवसायियों पर दबाव डालने हेतु फौजदारी मुकदमे का सहारा लेते हैं। ऐसी द्वेषपूर्ण कार्यवाहियों से रक्षा की जानी चाहिए। कुछ दिशानिर्देश शामिल करने वाले सांविधिक नियमों या कार्यपालिका के निर्देश, भारतीय आयुर्विज्ञान परिषद् के परामर्श से भारत सरकार द्वारा और/या राज्य सरकारों द्वारा तैयार किए जाने चाहिएं तथा जारी किए जाने चाहिएं। जब तक ऐसा नहीं किया जाता, तब तक हम भविष्य के

लिए कुछ ऐसे दिशानिर्देश विनिर्धारित करने का प्रस्ताव करते हैं जिनसे ऐसे अपराधों के लिए डाक्टरों पर चलाए जाने वाले अभियोजन नियंत्रित किए जाने चाहिएं, आपराधिक उतावलापन और आपराधिक लापरवाही, जिसके अनिवार्य संघटक हैं। किसी प्राइवेट श्किायत पर विचार नहीं किया जाना चाहिए जब तक कि शिकायतकर्ता ने मुल्जिम डाक्टर की तरफ से किए गए उतावलेपन या लापरवाही के आरोप के समर्थन में दूसरे सक्षम डाक्टर द्वारा दी गई विश्वसनीय राय के रूप में न्यायालय के समक्ष प्रथमदृष्ट्या साक्ष्य पेश न की हो। उतावलेपन या लापरवाही के काम या चूक के आरोपी डाक्टर के खिलाफ कार्यवाही आरंभ करने से पहले, जांच अधिकारी को चाहिए कि वह जांच में एकत्र किए गए तथ्यों पर बोलम मामले की कसौटी लागू करते हुए एक स्वतंत्र और सक्षम डाक्टरी राय प्राप्त करे और बेहतर हो कि यह राय, चिकित्सा व्यवसाय की उसी शाखा में योग्यताप्राप्त, सरकारी सेवा वाले किसी डाक्टर से प्राप्त की जाए। इन डाक्टरों से आमतौर पर यह अपेक्षा की जा सकती है कि वे निष्पक्ष और अपक्षपातपूर्ण राय देंगे। उतावलेपन या लापरवाही के आरोपी डाक्टर को रूटीन तरीके से गिरफ्तार न किया जाए, जब तक कि उसकी गिरफ्तारी आगामी जांच–पड़ताल या साक्ष्य एकत्र करने के लिए आवश्यक न हो या जब तक कि जांच अधिकारी इस बात से संतुष्ट महसूस न करे कि जिस डाक्टर के खिलाफ कार्यवाही की जानी है, वह अभियोजन का सामना करने के लिए अपने आपको पेश नहीं करेगा, यदि उसे गिरफ्तार न किया गया। अन्यथा गिरफ्तारी रोकी जा सकती है।"

मामले के तथ्यों पर वापस लौटते हुए उच्चतम न्यायालय ने कहा कि शिकायत में दिए गए सभी प्राक्कथनों को सिद्ध हुआ भी मान लिया जाए, तब भी आरोपी अपीलकर्ता की तरफ से किए गए उतावलेपन या लापरवाही का मामला नहीं बनता। शिकायतकर्ता का यह कहना नहीं है कि आरोपी, उस मरीज का इलाज करने के लिए योग्यताप्राप्त डाक्टर नहीं था जिसका इलाज करने के लिए वह सहमत हुआ। यह आक्सीजन सिलेंडर उलपब्ध न होने का मामला है और इसका कारण या तो अस्पताल गैस सिलेंडर उपलब्ध रखने में विफल रहा है या गैस सिलेंडर खाली पाया गया। तो फिर अस्पताल सिविल कानून के तहत जिम्मेदार हो सकता है या नहीं हो सकता है, परन्तु आरोपी/अपीलकर्ता के खिलाफ भारतीय दंड संहिता की धारा 304–क के तहत मुकदमा नहीं चलाया जा सकता। इस प्रकार, भारतीय दंड संहिता की धारा 304–क के तहत अपीलकर्ता का अभियोजन रद्द कर दिया गया।

अपील मंजूर कर ली गई।

अनुबंध

नोटिस, शिकायत, शपथपत्र और उत्तर का मॉडल फार्म

मॉडल फार्म 1–शिकायत दर्ज करने से पहले नोटिस

नाम और पता

.....

(ट्रेडर, डीलर, फर्म कम्पनी आदि का)

(पूरा पता)

के विषय में (विवरण देते हुए शिकायत वाले सामान/सेवाओं का उल्लेख करें)

महोदय,

आपको सूचित किया जाता है कि मैंने ..... रुपये के, ... बैंक में आहरित दिनांक ..... के चैक संख्या ..... के जरिए या आपके कैश मीमों/रसीद/इनवायस संख्या ..... के प्रति नकद भुगतान किए गए ..... रुपये के प्रतिफल में आप के ..... से ..... खरीदा था।

उक्त में निम्नलिखित खराबियां हैं :

(1) .....

(2) .....

मैंने कई बार आपको मामले की सूचना दी (पिछले पत्र, यदि कोई हो, का हवाला दें) परंतु मेरे सभी निवेदनों के बावजूद अपने सामान की खराबी या सेवा में होने वाली कमी की भरपाई नहीं की जो वास्तव में खेदजनक है और व्यवसाय संबंधी व्यवहार के विरूद्ध है। आपके द्वारा की गई कर्त्तव्य की अवहेलना और सामान को ठीक करने में विफल रहने तथा लापरवाही करने के कारण मुझे निम्नलिखित क्षति हुई है/राशि खर्च करनी पड़ी है :

.....

.....

.....

(विवरण दें)

जिसकी भरपाई करने की जिम्मेदारी आपकी है। आपसे अंततः एतद् द्वारा अनुरोध है कि :

(1) सामान में आई उक्त खराबी को ठीक करें और / या

(2) उसके बदले नया सामान दें और या

(3) कीमत/भुगतान किए गए प्रभार लौटाएं

(4) आपकी लापरवाही के कारण हुई वित्तीय हानि/क्षति ब्याज की हानि के मुआवजे का भुगतान करें। ..... (विवरण दें)।

इस संबध में ..... प्रतिशत की दर से ..... रुपये की राशि का भुगतान इस नोटिस की प्राप्ति के ..... दिन के अंदर कर दें अन्यथा मैं अपनी उपरोक्त शिकायत के निवारण के लिए और उपरोक्त धनराशि की वसूली के लिए उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 के कानूनी उपबंधों के अंतर्गत शिकायत दायर करने के अलावा सिविल और फौजदारी दोनों अदालतों में, पूर्णतः आपके हर्जे, खर्चे और जिम्मेदारी पर मुकदमा दायर करने के लिए बाध्य हूंगा। इसे कृपया नोट कर लिया जाए।

स्थान : .....

तारीख : ..... हस्ताक्षर.....

मॉडल फार्म 2–शिकायत

माननीय जिला उपभोक्ता विवाद निवारण फोरम ..... के समक्ष

या

माननीय राज्य उपभोक्ता विवाद निवारण कमीशन ..... के समक्ष

या

माननीय राष्ट्रीय उपभोक्ता विवाद निवारण कमीशन, नई दिल्ली के समक्ष

..... (पूरा नाम) (विवरण) (पूरा पता) के मामले में 200.. की शिकायत संख्या ..... के विषय में

..... शिकायतकर्ता

बनाम

(पूरा नाम) (विवरण) (पूरा पता)

..... विपक्षी पार्टी /पार्टियां

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 की धारा 12/धारा 17/धारा 21 के अंतर्गत शिकायत

सविनय निवेदन इस प्रकार है :'

भूमिका

(इस प्रारंभिक पैराग्राफ में शिकायतकर्ता को अपना परिचय और विपक्षी पार्टी/पार्टियों का परिचय देना चाहिए।)

लेनदेन

(इस पैराग्राफ में शिकायतकर्ता को शिकायत वाले लेनदेन अर्थात ली गई सेवाओं के विवरण, सामान की मदों/सेवा के स्वरूप और किस्म, खरीदे गए सामान/ली गई सेवाओं की तारीख, सामान/सेवा के प्रति पूर्णतः या अंशतः कीमत/प्रतिफल के रूप में भुगतान की गई धनराशि, का विवरण देना चाहिए। बिल/कैश मीमो/वाउचर या रसीद की फोटोकॉपी संलग्न की

जानी चाहिए और उन पर अनुलग्नक क, ख, ग आदि या 1, 2, 3 आदि के रूप में उचित ढ़ंग से अंकित किया जाना चाहिए।)

खराबी/कमी

(इस पैराग्राफ में शिकायतकर्ता को शिकायत स्पष्ट करनी चाहिए अर्थात क्या हानि या क्षति किसी ट्रेडर द्वारा अपनाए गए अनुचित व्यापार व्यवहार या प्रतिबंधित व्यापार व्यवहार द्वारा हुई है या क्या सामान में कोई खराबी है या क्या सेवा में कोई कमी रही है या क्या ट्रेडर ने सामान की अधिक कीमत ली है। व्यक्ति को ट्रेडर द्वारा अपनाए गए अनुचित व्यापार व्यवहार का स्परूप स्पष्ट करना चाहिए जैसे सामान/सेवा की गुणवत्ता से संबंधित, प्रयोजनता, वायदा की गई अवधि के लिए वारंटी या गारंटी। सामान में होने वाली खराबी की सीमा और स्वरूप को स्पष्ट किया जाना चाहिए और इसी प्रकार सेवा में होने वाली कमी की सीमा और स्वरूप को भी स्पष्ट किया जाना चाहिए। अधिक कीमत लिये जाने के मामले में, व्यक्ति को चाहिए कि वह ट्रेडर द्वारा वसूल की गई कीमत के मुकाबले समय–समय पर प्रवृत्त किसी कानून के अंतर्गत या उसके द्वारा निश्चित की गई वास्तविक कीमत या सामान पर और उसके पैकिंग पर लिखी गई कीमत के विवरण का उल्लेख करे। जीवन और सुरक्षा के लिए खतरे वाले सामान की बिक्री के प्रस्ताव के खिलाफ भी शिकायत दायर की जा सकती है, जब सामान का इस्तेमाल कर लिया जाए। आपको अपनी शिकायत का वर्णन करना चाहिए। इस बात से आश्वस्त हो जाना चाहिए कि इसे संवेदनशील और व्यावहारिक न्यायधीशों द्वारा पढ़ा जा रहा है। इस पर सुनवाई की जा रही है। संबंधित दस्तावेजों की फोटोप्रतियां संलग्न की जानी चाहिए।)

संशोधन

(इस पैराग्राफ में शिकायतकर्ता को विशेष रूप से दर्शाना चाहिए कि मामले को सुलझाने के लिए उसने क्या प्रयास किए अर्थात व्यक्तिगत दौरे या समझौता वार्ता, लिखित में पत्र व्यवहार, यदि कोई हो, क्या कोई कानूनी नोटिस दिया गया और/या वह शिकायत के निवारण के लिए किसी अन्य एजेंसी जैसे सक्षम क्षेत्राधिकार वाले सिविल या फौजदारी अदालत के पास गया, उसकी कार्यवाही का चरण, उसका परिणाम, यदि कोई निकला, ऐसी कार्यवाहियों की प्रतियों सहित (बेहतर

हो यदि प्रमाणित हों)। ट्रेडर से प्राप्त हुए प्रत्युत्तर के स्परूप, जब अनियमितताएं उसकी जानकारी में लाई जाएं, का जिक्र भी यहां किया जाना चाहिए।)

अन्य उपबंध

(इस पैराग्राफ में किसी अन्य कानून या नियम या प्रक्रिया विशेष के विनियम का हवाला दिया जाए जो इस मामले पर लागू हो और/या जिसका ट्रेडर द्वारा और कानून के अंतर्गत उपभोक्ता के अधिकार का उल्लंघन किया गया हो। ऐसे प्रासंगिक कानूनी दायित्व भी होते हैं जो ट्रेडर को पूरे करने चाहिए और ऐसा न करने पर प्रथम दृष्ट्या मामला बनता है तथा फोरम इसका संज्ञान लेगा।)

साक्ष्य

(इस पैराग्राफ में शिकायतकर्ता को उन दस्तावेजों और/या गवाहों का विवरण देना चाहिए जिन्हें वह अपने मामले को साबित करने के लिए आधार बनाएगा। ऊपर किए गए उल्लेख के अनुसार अनुबंधों के रूप में संलग्न किए गए दस्तावेजों को उचित सूची में शामिल किया जाए और गवाहों की सूची, यदि कोई हो, भी इसी प्रकार दाखिल की जाए। अनुबंधों को 'सत्य प्रतिलिपि' के रूप में अनुप्रमाणित किया जाना चाहिए।)

क्षेत्राधिकार

(इस पैराग्राफ में, शिकायतकर्ता को शिकायत में दावा निर्धारित करना चाहिए अर्थात 20 लाख रुपये तक, बीस लाख रुपये से एक करोड़ रुपये तक या उससे अधिक और फोरम/राज्य स्तरीय कमीशन/राष्ट्रीय कमीशन, जैसा भी मामला हो, का आर्थिक क्षेत्राधिकार दिया जाना चाहिए। किसी औपचारिक आपत्ति को दूर करने के लिए क्षेत्रीय क्षेत्राधिकार को प्रमुखता से दिखाया जाना चाहिए।)

परिसीमन

(इस पैराग्राफ में यह दिया जाना चाहिए कि मौजूदा शिकायत, अधिनियम की धारा 24 क के अंतर्गत निर्धारित अवधि के अंदर दायर की गई है।

दावा की गई राहत

(इस पैराग्राफ में शिकायतकर्ता को उसके द्वारा दावा की गई राहत के स्वरूप का वर्णन करना चाहिए अर्थात सामान में होने वाली खराबी या सेवाओं में होने वाली कमी को दूर करने के लिए सामान के बदले नया सामान बदलना, भुगतान की गई कीमत या प्रभार लौटाना आदि और/या विपक्षी पार्टी की लापरवाही से हुई वित्तीय हानि या क्षति के कारण उसके हित के विपरीत मुआवजा। यह भी स्पष्ट किया जाना चाहिए कि आपने दावा किए गए मुआवजे की धनराशि का हिसाब कैसे लगाया है।)

प्रार्थना वाला खंड

अतः सविनय निवेदन है कि माननीय फोरम/कमीशन कृपया .....(उस राहत का विवरण जो शिकायतकर्ता चाहता है कि न्यायालय उसे प्रदान करे।)

स्थान : ..... दिनांक : .....

शिकायतकर्ता.....

.....के जरिये

(वकील या उपभोक्ता एसोसिएशन आदि)

सत्यापन

मैं ..... उपरोक्त शिकायतकर्ता एतद्द्वारा सत्यनिष्ठा से सत्यापित करता हूँ कि मेरी उपरोक्त शिकायत की विषय–वस्तु, मेरी जानकारी के अनुसार सही और सत्य है और इसका कोई भाग मिथ्या नहीं है तथा इसमें किसी सारवान तथ्य को छिपाया नहीं गया है।

दिनांक ..... को ..... (स्थान) में सत्यापित।

(शिकायतकर्ता)

टिप्पणी : हालांकि यह अनिवार्य नहीं है कि शिकायतकर्ता अपनी शिकायत के समथन में कोई ऐसा हलफ़नामा दाखिल करे जो आरोपों की सच्चाई और सत्यनिष्ठा की पुष्टि करता हो और मामले को विश्वसनीयता प्रदान करता हो। इसका स्टाम्प पेपर पर होना भी आवश्यक नहीं है। परंतु इसे, उच्च न्यायालय द्वारा नियुक्त किए गए किसी 'ओथ कमीशनर' से अनुप्रमाणित कराया जाना चाहिए। इसका फोरमेट बिल्कुल सरल है।

मॉडल फार्म 3 – शिकायत के समर्थन में हलफ़नामा

माननीय ..... के समक्ष

दिनांक ..... की शिकायत संख्या ..... के विषय में।

..... शिकायतकर्ता

बनाम

..... विपक्षी पार्टी

के मामले में

हलफ़नामा

श्री ..... सुपुत्र ..... आयु..... निवासी .... का हलफ़नामा

1. कि मैं उपरोक्त मामले में शिकायतकर्ता हूँ, मौजूदा मामले के तथ्यों और परिस्थितियों से पूरी तरह परिचित हूँ और इस हलफ़नामें में शपथ लेने के लिए सक्षम हूँ।

2. कि मेरी संलग्न शिकायत में दिए गए तथ्यों, जिनकी विषय–वस्तु संक्षिप्तता के कारण इसमें दोहराई नहीं गई है, को इस हलफ़नामें के एक अभिन्न भाग के रूप में पढ़ा जाए और यह तथ्य मेरी जानकारी के अनुसार सत्य और सही हैं।

शपथकर्ता

सत्यापन

मैं ..... उपरोक्त शिकायतकर्ता एतद्द्वारा सत्यनिष्ठा से सत्यापित करता हूँ कि मेरी उपरोक्त शिकायत की विषय–वस्तु, मेरी जानकारी के अनुसार सही और सत्य है और इसका कोई भाग मिथ्या नहीं है तथा इसमें किसी सारवान तथ्य को छिपाया नहीं गया है।

दिनांक ..... को ..... (स्थान) में सत्यापित।

शपथकर्ता

मॉडल फार्म 4–ट्रेडर द्वारा शिकायत का उत्तर

माननीय उपभोक्ता निवारण फोरम/कमीशनर ..... के समक्ष

दिनांक ..... की शिकायत संख्या ..... के विषय में

..... शिकायतकर्ता

बनाम

..... विपक्षी पार्टी

के मामले में

सुनवाई की तारीख .....

शिकायतकर्ता की शिकायत के उत्तर में प्रतिवादी की ओर से लिखित बयान

सविनय निवेदन इस प्रकार है :–

प्रारंभिक आपत्तियां

1. कि मौजूदा शिकायत पूरी तरह गलत, निराधार और कानूनी दृष्टि से अमान्य है और इसलिए खारिज किए जाने योग्य है। प्रश्नाधीन लेनदेन किसी प्रतिफल के बिना और प्रभार मुक्त था।

2. कि इस माननीय फोरम/कमीशन को शिकायत से संबंधित विवाद पर विचार करने और न्यायनिर्णयन करने का क्षेत्राधिकार प्राप्त नहीं है क्योंकि यह कोई उपभोक्ता विवाद नहीं है और उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986, जिसे आगे इसमें उक्त अधिनियम कहा गया है, के उपबंधों के दायरे में नहीं आता और इस मामले की सुनवाई केवल सिविल न्यायालय द्वारा की जा सकती है और इसलिए यह शिकायत केवल इसी कारण से खारिज किए जाने योग्य है।

3. कि मौजूदा शिकायत में शिकायतकर्ता द्वारा उठाया गया विवाद स्पष्ट रूप से उक्त अधिनियम के दायरे से बाहर है और किसी भी स्थिति में यह अधिनियम ..... अधिनियम के उपबंधों के अतिरिक्त है न कि उसके विपरीत। इस

अधिनियम के अंतर्गत शिकायतकर्ता द्वारा दायर की गई कार्यवाही पूरी तरह अमान्य और बिना क्षेत्राधिकार के है।

4. कि उक्त अधिनियम की धारा 2(1) में दी गई 'शिकायतकर्ता' 'शिकायत' 'उपभोक्ता विवाद' और 'सेवा की' परिभाषाएं मौजूदा विवाद के दावों को कवर नहीं करती और कि उपरोक्त परिभाषाओं के अनुसार शिकायतकर्ता उपभोक्ता नहीं है तथा शिकायत से संबंधित विवाद कोई 'उपभोक्ता विवाद' नहीं है।

5. कि मौजूदा शिकायत निराधार है और प्रतिवादी को परेशान करने तथा ब्लैकमेल करने के लिए कानून की प्रक्रिया का घोर दुरूपयोग है।

6. कि शिकायतकर्ता को मौजूदा कार्यवाही दायर करने की अधिकारिता प्राप्त नहीं है।

7. कि यह शिकायत, आवश्यक और उचित पार्टी के 'नान–ज्वाइंडर' के कारण अनुपयुक्त है और केवल इसी कारण खारिज किए जाने योग्य है।

8. कि शिकायतकर्ता ने, सक्षम क्षेत्राधिकार के न्यायालय में ..... के लिए एक सिविल मुकदमा पहले ही दायर कर दिया है जो ..... के न्यायालय में निपटान के लिए लंबित है और मौजूदा शिकायत निष्फल हो गई है।

9. कि मौजूदा शिकायत, परिसीमन द्वारा बाधित है।

10. कि इस माननीय फोरम/कमीशन को कोई क्षेत्रीय या आर्थिक क्षेत्राधिकार प्राप्त नहीं है क्योंकि इस माामले से संबंधित धनराशि, उक्त अधिनियम की धारा 11(i), धारा 17 (क) (i) और धारा 21 (क)(I) में विनिर्धारित सीमा से अधिक/कम है।

11. कि मौजूदा शिकायत, सारहीन और चिढ़ाने वाली है और अधिनियम की धारा 26 के अंतर्गत खारिज किए जाने योग्य है।

12. कि मौजूदा शिकायत, कानून के अनुसार सत्यापित नहीं की गई है।

गुण–दोष के आधार पर

इन पैराग्राफों में प्रतिवादी को, लगाए गए प्रत्येक आरोप और शिकायतकर्ता द्वारा दी गई वास्तविक तथा कानूनी दलीलों का उत्तर देना चाहिए। यदि उसने खराबी या कमी को ठीक कर दिया है तो इस संबंध में उठाए गए कदमों का विवरण दें। अन्य बातों के साथ–साथ वह अपने निम्नलिखित बचाव भी कर सकता है :

1. कि उपरोक्त विवाद के पक्षों के बीच किया गया लेनदेन वाणिज्यिक है और शिकायतकर्ता इस प्राधिकारी से किसी राहत का दावा नहीं कर सकता क्योंकि .....

2. कि शिकायतकर्ता ने एक विक्रेता/रिटेलर/वितरक आदि के रूप में पुनर्बिक्री के लिए सामान खरीदा था और इसलिए आरोपित खराबी/कमी के लिए इस माननीय फोरम/कमीशन के पास आने से बाधित है क्योंकि ..... (विवरण दें)

3. कि शिकायतकर्ता ने पहले ही वारंटी की अवधि का लाभ उठा लिया है जिसके दौरान उत्तर देने वाले प्रतिवादी ने प्रश्नाधीन सामान की मरम्मत कर दी है/को बदल दिया है। इस प्रकार, शिकायतकर्ता पर यह शिकायत करने पर या अपनी गलती के कारण लाभ लेने पर कानूनी रूप से रोक है।

4. कि मौजूदा शिकायत इस तथ्य के बावजूद अत्याधिक अतिश्योक्तिपूर्ण है कि शिकायतकर्ता विलंब और गफ़लत के लिए स्वयं जिम्मेदार है क्योंकि उसने सामान की श्रेणी/फ्लैट की आबंटन योजना के प्रकार/वाहन के मॉडल आदि ..... के बारे में कई बार अपना विकल्प बदला है। (विवरण दें)

5. कि उत्तर देने वाले प्रतिवादी को उपरोक्त विवाद की विषय–वस्तु के लिए अतिरिक्त कीमत वसूल करने का पूरी तरह अधिकार है क्योंकि समय उसकी सुपुर्दगी के जिए महत्वपूर्ण नहीं था। शिकायतकर्ता, उत्पाद शुल्क/बजटीय प्रावधानों आदि में बढ़ोतरी हो जाने के कारण दिनांक ..... से बढ़ी हुई कीमत का भुगतान करने के लिए जिम्मेदार है क्योंकि ..... (विवरण में)

6. कि शिकायतकर्ता ने बिना कोई विरोध प्रकट किए मरम्मत/बदलने आदि के प्रति सामान/सेवा को स्वीकार कर लिया है और मौजूदा शिकायत केवल बाद में सोची गई बात है।

7. कि किसी बात पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, उत्तर देने वाले प्रतिवादी, सद्भावना प्रदर्शन के रूप में ..... करने के लिए तैयार है। (किसी ऐसे संशोधन, यदि कोई हो, का विवरण दें जो अवयस्क या उपभोक्ता को होने वाली बर्दाश्त करने योग्य समस्या और मुकदमें बाजी की समस्या के मामले में किया जा सकता हो।)

इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, सेवा में होने वाले दोष/खराबी/लापरवाही और/या कमी के आरोप, असंगत और काल्पनिक होने के साथ–साथ पूरी तरह गलत, निराधार, मिथ्या और कानूनी दृष्टि से अमान्य हैं।

अनुरोध खंड और उसमें किए गए सभी अनुरोध पूरी तरह गलत हैं और जोर देकर उनसे इंकार किया जाता है। शिकायतकर्ता किसी भी प्रकार की राहत का हकदार नहीं है। और मॉडल फार्म लागत का हकदार नहीं है।

स्थान .....

दिनांक .....

ह.....

(विपक्षी पार्टी)

वकील के जरिए

सत्यापन

मैं ..... उपरोक्त नाम वाला प्रतिवादी एतद् द्वारा सत्यापन करता हूँ कि गुणावगुण के आधार पर लिखित बयान के पैरा ..... से ..... तक की विषय–वस्तु मेरी जानकारी के अनुसार सत्य और सही है। जबकि गुणावगुणों के आधार पर प्रारंभिक आपत्तियों के पैरा ..... से ..... तक और उत्तर के पैरा ..... से ..... तक मेरी सूचना, विश्वास और मेरे द्वारा प्राप्त कानूनी राय के अनुसार सही है और मेरा विश्वास है कि वे सही हैं और अंतिम पैरा माननीय न्यायालय से किया गया अनुरोध है।

दिनांक ..... को ..... (स्थान) पर सत्यापित।

ह.

(विपक्षी पार्टी)